शुद्धि-पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५	१२	सिर	मरि
६	४	घाया	घाया
८	११	मइ	भइ
२६	१९	सुभर	सुघर
४३	२०	सब	सब कोई
४९	१५	कोटवारा	कोतवारा
५९	९	जि	जिउ
६३	५	त्रासमान	त्रास मान
१००	७	देसि है	देसिहै
१०४	२	मारहु देसु	'मारहु देसू'
१०७	२१	माहि	मोहि
१२२	८	भै	पै

प्रस्तावना

आख्यानक काव्य

आख्यान या उपन्यास हिंदी-साहित्य के लिये नई वस्तु है पर प्राचीन समय ही से अन्य विषयक काव्यों के साथ-साथ आख्यानक काव्य भी पाए जाते हैं। इतना अवश्य है कि उनकी संख्या अन्य विषयक काव्यों की अपेक्षा न्यून है। विशेष राजनैतिक तथा सामाजिक परिस्थितियों के कारण हमारे साहित्य के प्रारंभिक काल में वीर-गाथाओं की प्रधानता और माध्यमिक काल में धार्मिक ग्रंथों की प्रचुरता रही। इसी माध्यमिक काल में हमारा साहित्य परिपक्व हुआ। इसी काल में आख्यानक काव्य भी अपनी प्रौढ़ता को पहुँचा। इसी काल में आख्यान के अद्वितीय कवि मलिक मुहम्मद जायसी ने, बोल-चाल की अवधी में, पदमावत नामक सुंदर आख्यान लिखा। वर्तमान युग परिवर्तन का युग है। इस युग में हम आख्यानक काव्यों के स्थान में उपन्यास और आख्यायिकाओं का उद्भव देख रहे हैं। काव्य अब छंदोबद्ध न रहकर बोलचाल की गद्यमय सरल शृंखला पहन रहा है। यह गद्य का युग है। इस युग में हम आख्यान का परिवर्धित रूप उपन्यासों और आख्यायिकाओं में देख रहे हैं।

आख्यानो की रचना बहुत पहले ही आरंभ हो चुकी थी जैसा कि अन्य देशों मे देखा जाता है। आख्यान पहले-पहल प्रचलित दंत-कथाओं के आधार पर खडा होता है। ये दंत-कथाएँ कुछ अंशों मे ऐतिहासिक और कुछ अंशों में कल्पित होती हैं। पीछे साहित्य की परिपक्वता के साथ-साथ उत्साही कविगण उनके आधार पर सुंदर आख्यानो की रचना कर डालते हैं। हिंदी-साहित्य का जन्म ऐसी परिस्थितियों में हुआ जिनमे वीर-गाथाओं को छोड आख्यान आदि विषयों की ओर उसे झुकने का अवसर कम मिला, फिर भी यह निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि विक्रमीय १४वीं शताब्दी मे कुछ छोटे मोटे आख्यानों का प्रचार अवश्य था। १५वीं शताब्दी के साहित्य को हम ऐसी प्रौढावस्था मे पाते हैं जिससे इस अनुमान की पुष्टि होती है कि इसके बहुत पूर्व ही साहित्य मे अच्छे-अच्छे आख्यानों की रचना होने लगी थी पर दुर्भाग्यवश उनका लोप हो गया है। अभी तक जो कुछ पता चला है उससे आख्यानक काव्यों की शृंखला वि० १५ वीं शताब्दी से २०वीं शताब्दी तक निरंतर चली जाती है।

आख्यान लिखनेवाले कवि हिंदू और मुसलमान दोनो थे पर इन दोनों के ग्रंथो मे शैली, उद्देश्य आदि सभी बातो मे अंतर है। इसके आधार पर हम हिंदी-साहित्य के आख्यान-लेखकों को दो संप्रदायो मे विभक्त कर सकते हैं—हिंदू और मुसलमान संप्रदाय। हिंदू और मुसलमान आख्यान-लेखको में

सबसे भारी अंतर तो यह है कि एक का उद्देश काव्यों द्वारा केवल मनोरंजन था, दूसरे का अपने मत तथा धार्मिक विचारों का प्रचार करना। मुसलमान लेखक प्रायः सूफी संप्रदाय के अनुयायी थे जिनका उद्देश मनोरंजक प्रेमगाथाओं-द्वारा अपने उदार आध्यात्मिक भावों को हिंदू जनता के कानों तक पहुँचाना था। उनकी कहानियाँ सब प्रकार से हिंदू थीं पर यदि अंतर था तो उनकी प्रेमभावना में जो उनके धर्म की विशेषता थी।

हिंदू और मुसलमान लेखकों में समानता केवल भाषा की थी। दोनों हिंदी भाषा का प्रयोग करते थे पर एक साहित्यिक भाषा अपने काव्य में लिखता था, दूसरा प्रचलित अपरिमार्जित भाषा को लेकर अपने उद्देश को पूर्ण करता था। हिंदू लेखक बहुछंदप्रिय थे। उन्हें छंद शास्त्र का पूर्ण ज्ञान था। मुसलमान लेखक अपनी विवशता के कारण केवल दोहे चौपाई का प्रयोग करते थे। उनका उद्देश था जनता के कानों में अपने भावों को भली भाँति पहुँचाना। अतः उन्होंने जनता में प्रचलित भाषा और सरल छंदों का उपयोग किया। एक का उद्देश था काव्यकला दिखाते हुए मनोरंजन करना, दूसरे का उद्देश था मनोरंजन करते हुए अपने भावों को पाठकों के हृदय में बैठाना। एक ऊपरी तड़क-भड़क में रह गया, दूसरा अपने उद्देश में सफल हुआ या नहीं पर उसने अपने निःस्वार्थ, सरल प्रयत्न से जनता में यथेष्ट प्रसिद्धि पाई और वह साहित्य में अमर हो गया।

मुसलमान लेखकों के आख्यानों का आदर्श 'मसनवी' काव्य था जिसका प्रचार फारसी-साहित्य में अधिक है और जिसके ढंग पर उर्दू में भी काव्य लिखे गए हैं। ऐसे काव्यों में हम महाकाव्यों की गंभीरता, सरसता और सुंदरता पाते हैं, पर जिन्हें हिंदू लेखकगण आख्यान लिखने में न पा सके। इसका एक कारण यह था कि हिंदू-लेखकों का आदर्श संस्कृत महाकाव्य था। संस्कृत काव्यशास्त्र के अनुसार महाकाव्य का नायक एक महान् व्यक्ति रखा जाता था। ऐसे महान् व्यक्ति प्राय उन्हें इतिहास में मिल जाते थे जिन्हें वे अपने महाकाव्य का नायक बनाते थे। हिंदी-साहित्य में एक प्रकार से महाकाव्यों की कमी है। जो हैं भी उनके नायक प्राय ऐसे व्यक्ति हैं जिनकी ओर हम धार्मिक या साहित्यिक दृष्टि से देखते हैं। कल्पित व्यक्तियों को लेकर महाकाव्य की रचना करने की ओर हिंदू-लेखकों का एक प्रकार से ध्यान ही नहीं गया। दूसरा कारण एक और है जिसके वशीभूत हो हिंदू-लेखकगण आख्यानों के प्रणयन में भली भाँति सफल न हो सके। वह है साहित्यिक और नैतिक परिस्थिति। हिंदी-साहित्य की जब से उन्नति प्रारंभ हुई, तब से हिंदू पराधीन हो चले थे। साहित्य के प्रारंभ में केवल पृथ्वीराजरासो ही एक ऐसा ग्रंथ रचा गया जिसे हम महाकाव्य कह सकते हैं। पीछे जब हिंदू विदेशियों के शासन में आने लगे तब उन्हें धर्म-संकट ने आ घेरा। धार्मिक संघर्षण में

उन्होंने यदि कुछ लिखा तो वह अपने धार्मिक भावो का प्रबल करने या उसकी सरक्षा करने के लिए। ऐसे समय मे कुछ काव्य ऐसे लिखे गए जिन्हे महाकाव्य कह सकते हैं। उनके नायक हमारे 'राम' हैं। उसके पीछे विलासिता ने आ घेरा—कविगण समस्या-पूर्ति, नायिकाभेद और शृ गार की ओर झुके—वे करते ही क्या ! जनता की रुचि ही ऐसी हो गई। उनके अभि-भावको को इसकी आवश्यकता थी। इस 'वाह' 'वाह' की शायरी के जमाने मे भला कोई महाकाव्य रचने की धीरता रख सकता था ! हाँ, अब परिस्थितियाँ अनुकूल हैं। सभव है, कविगण महाकाव्य लिखने की ओर प्रवृत्त हो।

इसमें सदेह नहीं कि मुसलमान लेखकों ने हिंदी साहित्य मे आख्यान-काव्यो के लिखने में सफलता पाई और उनमें कवि मलिक मोहम्मद सर्वश्रेष्ठ माने जा सकते हैं। कुछ दिन पूर्व 'जायसी' अपने ढग के प्रथम, अतिम और श्रेष्ठ कवि माने जाते थे पर अब खोज से मुसलमान कवियो-द्वारा प्रणीत प्राय १० ग्रथों का पता लग चुका है। जायसी के पूर्व के दो कवियो के ग्रथों का पता मिला है। स्वय जायसी के लिखने से ज्ञात होता है कि उसके पूर्व आख्यानो का प्रचार था। जायसी अपनी पदमावत मे लिखते हैं—

विक्रम धँसा प्रेम के बारा। सपनावति कहँ गयउ पतारा।
मधूपाछ मुगुधावति लागी। गगनपूर होइगा बैरागी।
राजकुँवर कंचनपुर गयऊ। मिरगावति कहँ जोगी भयऊ

साधा कुँवर मनोहर जोगू। मधुमालति कहँ कीन्ह वियोगू।
प्रेमावति कहँ सुरसरि साधा। ऊपा लागि अनिरुध बर बाँधा।

इससे स्पष्ट है कि जायसी के पूर्व स्वप्नावति, मुगधावति, मिरगावति, मधुमालति और प्रेमावति इन पाँच आख्यानों का प्रचार हिंदी-साहित्य में था। इन उल्लिखित आख्यानो में मृगावती और मधुमालती तो काव्य रूप में हस्तगत हुई हैं, शेप का अब तक पता नहीं चला। सभव है, आगे चलकर इनका भी पता चल जाय। जायसी के पश्चात् आलम, उसमान, शेख नबी, कासिम, नूरमोहम्मद, फाजिल शाह आदि अनेक कवि हुए हैं जिनके आख्यान-ग्रंथ पदमावती ही के ढग के हैं। उसमानकृत 'चित्रावली' तथा नूरमोहम्मदकृत 'इंद्रावती' काशी ना० प्र० सभा-द्वारा प्रकाशित हो चुकी हैं।

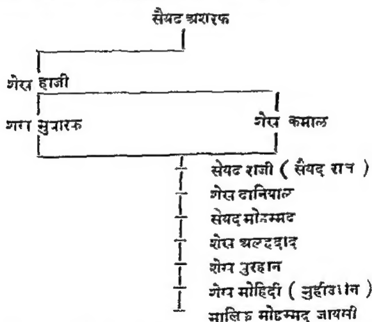
जायसी

पदमावत के लेखक मलिक मोहम्मद जायसी अवध के रहनेवाले थे। उनके जन्म आदि के विपय में कुछ भी ज्ञात नहीं। कवि के कथन से पता चलता है कि ये जायस में आकर बस गए थे।

जायस नगर धरम-अस्थानू। तहाँ आइ कवि कीन्ह बखानू।

एक जनश्रुति से पता चलता है कि ये गाजीपुर के किसी दरिद्र मुसलमान के पुत्र थे। बचपन में इन्हें चेचक निकली जिससे इनके बचने की आशा नहीं रही। इनकी माता ने मकनपुर के मदारशाह की मनौती मानी। कहते हैं, जायसी की जान तो बच गई पर इनकी एक आँख जाती रही। ये कुरूप भी हो गए।

मनोती पूर्ण होने के पूर्व इनकी माता चल बसीं। पिता पहले ही मर चुके थे। ये अनाथ होकर साधुओं के साथ रहने लगे। कवि ने अपनी आँख फूटने का उल्लेख पदमावत में किया है— "एक नयन कवि मोहम्मद गुनी।" इनकी बाईं आँख फूटी थी। आप लिखते हैं—"मोहम्मद बाईं दिसि तजा एक सरवन, एक आँखि।" इससे तो यह भी पता चलता है कि इनका एक कान भी बहरा हो गया था। कवि मलिक मोहम्मद निजामुद्दीन औलिया की शिष्य-परंपरा में थे। आपने अपनी गुरु-परंपरा का वर्णन पदमावत में यों किया है—



मुसलमानों में प्रचलित गुरु-परंपरा के अनुसार जायसी की दी हुई परंपरा में अंतर पड़ता है। उनके अनुसार सैयद

राजे शेख कुतुब आलम और शेख हशामुद्दीन के पश्चात् हुए हैं। शेख आलम और सैयद अशरफ शेख अलाउल हक के चेले थे।

कहते हैं कि जायसी सिद्ध फकीर थे। इनकी प्रशंसा सुनकर अमेठी के राजा ने इन्हें अपने यहा बुलाया और रखा। इन्हीं के आशीर्वाद से अमेठी के राजा के पुत्र भी हुआ। तभी से राजा इनका अनन्य भक्त हो गया। मरने पर इनकी कब्र इन्हीं राजा के कोट के सामने बनी जो अभी तक वर्तमान है। कहते हैं कि एक बार किसी राजा ने इन्हे न पहचानकर इनकी कुरूपता की हँसी उड़ाई थी, तब इन्होंने उत्तर दिया था "मोहि कहँ हँससि कि कोहरहि" अर्थात् मुझे हँसता है कि कुम्हार या बनानेवाले ईश्वर को? इस पर वह बडा लज्जित हुआ और उसने क्षमा माँगी।

जायसी ने अपने ग्रथ मे अपने चार मित्रों का उल्लेख किया है—यूसुफ मलिक, सलार कादिम, सलोने मियाँ और बडे शेख। यूसुफ मलिक और सलोने मियाँ गाजीपुर और भोजपुर के शासक महाराज जगतदेव (स० १५८४) के आश्रित थे।

जायसी की जानकारी

डाक्टर ग्रियर्सन का कथन है कि जायसी ने जायस मे आकर स्थानीय पडितों से सस्कृत काव्य-रीति का अध्ययन किया था। यह सर्वथा अमाननीय है। जायसी की भाषा से यह बात

कभी नहीं झलकती कि ये संस्कृत अच्छी तरह जानते थे। प्राय इनकी भाषा में तत्सम शब्दों का व्यवहार ही नहीं है। इन्होंने चद्र को स्त्री माना है जो संस्कृत जाननेवाला पंडित कभी न करेगा। जायसी का शब्द-भांडार भी परिमित है, संस्कृत जाननेवाले कवि को कभी शब्दों की कमी न होगी। जायसी को यद्यपि संस्कृत रीति-ग्रथों तथा काव्यों का पूर्ण ज्ञान न था पर वे खूब घूमे थे। सत्संग से उन्होंने अपना ज्ञानभांडार भली भांति बढा लिया था। वे बहुश्रुत भी थे। भाषा काव्य-परंपरा का ज्ञान उन्होंने अवश्य किसी भाषा-कवि से प्राप्त किया था पर उनकी जानकारी परिपक्व नहीं कही जा सकती। छंद-शास्त्र, नखशिख आदि का इन्हें परंपरागत ओछा ज्ञान था। छंद शास्त्र का ज्ञान तो इसी से स्पष्ट है कि इन्होंने दोहे-चौपाई जैसे सरल छंदों का व्यवहार पद्मावत में किया है। इसमें संदेह नहीं कि अवधी भाषा में ये दोनों छंद मँजे हुए हैं और इन्हीं में वह अच्छी भी लगती है पर ऐसे सरल छंदों को रचने में भी जायसी ने अनेक स्थानों पर भूलें की हैं। दोहे और चौपाइयों में हमें अनेक स्थानों पर मात्रा की कमी-बेशी दिखाई पडती है।

जायसी मुसलमान थे तो भी इन्होंने अपने काव्य में स्थान-स्थान पर हिंदू पौराणिक कथाओं का हवाला दिया है। इससे पता चलता है कि हिंदू पौराणिक वृत्तों का इन्होंने सत्संग से अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था पर यह ज्ञान

पक्का न था। इन्होंने अनेक स्थानों पर भूलें की हैं यथा—'कैलास' शब्द का प्रयोग इन्होंने स्वर्ग के अर्थ में किया है। इंद्र का स्थान स्वर्ग है, कैलास नहीं। मानसरोवर हिंदुओं के अनुसार उत्तर में है। पर इन्होंने उसे सिंहल द्वीप के निकट माना है। सात समुद्रों के नाम भी इन्हें भली भाँति ज्ञात न थे, क्योंकि इनके गिनाए हुए नामों में किलकिला और मानसर पुराणों के अनुसार नहीं हैं। ये रामायण और महाभारत के पात्रों के गुण-शील और कृतियों से भली भाँति परिचित थे। यह समय का प्रभाव था क्योंकि माध्यमिक काल में उत्तरीय भारत में राम-कृष्ण की चर्चा जोरों से चल रही थी। लोग महाभारत और रामायण का अध्ययन धर्मग्रंथों की भाँति करते थे। इन्होंने अवश्य अनेकों बार उनकी कथा सुनी होगी।

जायसी को भारतवर्ष के भिन्न-भिन्न स्थानों का अच्छा ज्ञान था। पदमावत में कई स्थलों पर इसका परिचय मिलता है। उदाहरणार्थ रतनसेन की सिंघल-यात्रा के वर्णन में जायसी का वर्णन भौगोलिक दृष्टि से ठीक जान पड़ता है। ज्योतिष का ज्ञान भी जायसी को अच्छा था। मुसलमान तो आप थे ही। मुसलमानी धर्मग्रंथ कुरान का इन्हें पूर्ण ज्ञान रहा होगा। पदमावत में स्थल-स्थल पर हमें ऐसे भाव मिलते हैं जिन्हें हम कुरान की आयतों से मिला सकते हैं। मुसलमानी धर्म की अनेक बातों का भी समावेश पदमावत में कहीं-कहीं हुआ है।

संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि कवि मलिक मोहम्मद जायसी यद्यपि बहुत पढ़े-लिखे न थे पर उनकी जानकारी अनेक विषयों में अच्छी थी। जायसी भावुक थे, बहुश्रुत थे, और सच्चे कवि थे जिन्हें 'पेम की पीर' ने पदमावत जैसे सुंदर ग्रंथ के रचने के लिये प्रेरित किया था।

पदमावत का निर्माणकाल

पदमावत के निर्माणकाल में अभी बड़ा झगड़ा है। मिश्रबंधुओं ने पदमावत का निर्माणकाल हिजरी सन् ९२७ माना है। इस हिसाब से जायसी ने संवत् १५७५ में ग्रंथ आरंभ किया। अनेक पोथियों में निर्माणकाल हिजरी ९२७ ही मिलता है। पर ना० प्र० सभा द्वारा प्रकाशित संस्करण में जायसी ने निर्माणकाल यों दिया है—

सन् नव से सैतालीस अहा। कथा अरंभ बैन कवि कहा॥

इससे जायसी ने पदमावत का आरंभ हि० सन् ९४७ में किया अर्थात् संवत् १५९७ में। यह काल युक्तिसंगत भी जान पड़ता है क्योंकि जायसी ने पदमावत में शेरशाह सूर की प्रशंसा की है जो उस समय दिल्ली का सुलतान था। मुसलमान आख्यान-लेखक तत्कालीन शासक की प्रशंसा करते थे। अतः यदि शेरशाह सूर को तत्कालीन शासक मानें तो हिजरी सन् ९२७ को पदमावत का निर्माणकाल नहीं मान सकते। उस समय दिल्ली के तख्त पर इब्राहीम लोदी वर्तमान था।

'पदमावत' अपने समय मे बहुत प्रचलित और लोकप्रिय ग्रथ हुआ। इसका अनुवाद बँगला में भी हुआ। अराकान राज्य के वजीर मगन ठाकुर को पदमावत बहुत प्रिय थी। इन्होंने अपने आश्रित एक 'आलोउजालो' नामक कवि से पदमावत का अनुवाद बँगला में कराया। अनुवाद बहुत ही उत्तम हुआ है। इस अनुवाद की हस्तलिखित प्रतियाँ मिली हैं जिनमे पदमावत का निर्माणकाल यो मिलता है—

"शेख महम्मद जति, जखन रचिल ग्रथि
संख्या सप्तविश नव शत।"

इसका अर्थ होगा कि शेख मुहम्मद ने जब ग्रथ की रचना की उस समय सन् था "नौ सै सत्ताइस"। यह अनुवाद सवत् १७०० के लगभग हुआ था। अब यह विचारणीय है कि जायसी ने पदमावत की रचना कब की। इसके समाधान मे दो बाते कही जा सकती हैं—

(१) या तो कवि ने—जैसा कि मिश्रबधु कहते हैं—ग्रथ (पदमावत) का आरभ हिजरी सन् ९२७ मे किया जिस समय इब्राहीम लोदी शासन करता था पर शेरशाह सूर के सुल्तान होने पर उन्होंने वदना बनाई।

(२) पदमावत की प्रतियाँ अधिकतर उर्दू लिपि मे मिलती हैं। सभव है, और अधिक सभव है कि जायसी ने स्वय उसे उर्दू लिपि में लिखा हो। उर्दू में 'सत्ताईस' और 'सैंतालीस' लिखने पर उनमें अधिक अतर नहीं होता। थोडे

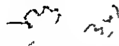
से भ्रम मे सैंतालीस का सत्ताईस पढा जा सकता है। उर्दू लिपि की यह कठिनाई जगत्प्रसिद्ध है। कितनी बार लोगों ने कुछ का कुछ पढ लिया है। लायलपुर (पजाब) के पते से भेजी हुई एक रजिस्टरी के मिर्जापुर में डेलिवर हो जाने का उल्लेख स्वर्ग० बाबू जगन्मोहन वर्म्मा ने चित्रावली की भूमिका में भी किया है। अत यह नितांत अमाननीय नहीं कि जायसी ने पदमावत में निर्म्माणकाल ९४७ ही लिखा हो पर उर्दू लिपि मे लिखने के कारण कुछ लोगों ने उसे ९२७ पढा हो कुछ लोगों ने ९४७।

पदमावत की कथा

सिंहलद्वीप अति सुदर द्वीप है। अन्य द्वीपो से उसकी सुदरता बढ-चढकर है। यहाँ का राजा गधर्वसेन है। उसका प्रताप चारो ओर फैला है। उसके पास असख्य सेना है। उसकी रानी चपावती को पदमावती नामक अपूर्व सुदरी कन्या उत्पन्न हुई। उसने एक हीरामन नामक सूआ पाल रखा था। हीरामन बडा बुद्धिमान् था। युवावस्था प्राप्त होने पर भी पदमावती का पिता उसके विवाह की कोई परवा नहीं करता था। एक दिन पदमावती ने अपने प्रिय शुक से अपनी मनोव्यथा कही। उसने कहा "प्रिय शुक, मुझे दिन पर दिन मदन सता रहा है, पर मेरे पिता मेरे विवाह का कोई आयोजन नहीं करते।" शुक ने उत्तर दिया "जो भाग्य में लिखा है वही होगा। यदि आप आज्ञा दें तो मैं

जाकर देश-विदेश में आपके लिए कोई वर खोजूँ।" उन दोनों की बातचीत कोई सुन रहा था। उसने जाकर राजा से चुगली खाई। इस पर राजा ने क्रुद्ध होकर शुक को मार डालने की आज्ञा दी। पद्मावती ने बड़ी विनती और युक्ति से उसकी जान बचाई। एक दिन वह अपनी सखियों के साथ मानसरोवर मे नहाने गई। इसी बीच शुक के पिंजरे को बिल्ली ने आ घेरा। वह मौका पाकर अपनी जान बचाकर वन की ओर उड़ गया। वहाँ वह एक चिड़ीमार के जाल में पड़ गया। वह उसे लेकर चला। पद्मावती को जब शुक के उड़ जाने का समाचार मिला तब वह अत्यंत दुखी हुई। उसने बड़ा शोक मनाया। शुक को लेकर बहेलिया सिंघलद्वीप की हाट में बेचने को चला। वहाँ चित्तौरगढ का एक ब्राह्मण भी कुछ व्यापार करने की अभिलाषा से आया था। उसने उस शुक को खरीद लिया और घर की ओर लौट पड़ा। जब वह चित्तौर पहुँचा तब शुक के गुणो की चर्चा चारों ओर फैलने लगी, फैलते-फैलते राजा के कानों तक जा पहुँची।

चित्तौरगढ़ का राजा रतनसेन था। उसने जब शुक के गुण का हाल सुना तब उसने ब्राह्मण को बुलाया और शुक को मुँहमाँगे मूल्य पर खरीद लिया। वह उसे बड़े प्रेम से अपने यहाँ रखने लगा। उसकी रानी नागमती बड़ी सुंदरी थी। एक दिन नागमती राजा की अनुपस्थिति मे शृंगार करके शुक के समीप आई और पूछने लगी "क्यो शुक, मेरे जैसा



रूप तुमने कहाँ देखा है ?" शुक हीरामन पदमावती का ध्यान करके हँस पड़ा और कहने लगा "सिंघल की नारियों का क्या हाल पूछती हो ? उनकी बराबरी ससार में कोई नहीं कर सकता।" यह सुनकर नागमती बडी रुष्ट हुई। उसने शुक को मार डालने की आज्ञा दी। धाय ने शुक को छिपाकर रानी से कहा कि वह मार डाला गया।

राजा रतनसेन जब शिकार से लौटा तो उसने शुक की खोज की। उसने नागमती से कहा 'या तो शुक को ला या स्वय अपनी जान दे।" नागमती वडे सकट में पड़ी। अत में धाय ने शुक ला दिया तब राजा प्रसन्न हुआ। शुक के मिलने पर राजा ने उससे सच्ची बात पूछी। उसने पदमावती के रूप-गुण की चर्चा की। वह उस पर मुग्ध हो गया। लोगों के लाख समझाने पर भी उसने निश्चय किया कि पदमावती को अवश्य अपनाऊँगा। वह योगी होकर अपने साथियो को ले शुक को आगे कर सिंघल द्वीप की ओर चल पड़ा। मार्ग में अनेक कष्टों को झेलकर वह समुद्र-तट पर पहुँचा और 'गजपति' की सहायता से उसने बोहित लेकर समुद्र पार करना निश्चय किया। खार, खीर, दधि, उदधि, सुरा, किलकिला और मानसरोवर आदि सात समुद्रों को पार करता हुआ वह सिंघल द्वीप मे पहुँचा। वहाँ पर महादेव का एक मदिर था, जहाँ रतनसेन अपने साथियों के साथ बैठकर तप करने लगा। शुक को उसने पदमावती के पास भेज दिया।

शुक ने जाते समय राजा से कहा कि वसंतपचमी को पद्मावती यहाँ पूजा करने आवेगी तब आपसे भेंट होगी।

शुक को बहुत दिन के बाद देखकर पद्मावती बड़ी प्रसन्न हुई। हीरामन ने अपना सारा हाल कह सुनाया और रतन सेन के पहुँचने का समाचार भी दिया। पद्मावती उस पर मुग्ध हो गई। उसने प्रतिज्ञा की कि राजा के गले में जयमाल डालूँगी। इसके पश्चात् शुक राजा के पास लौट आया। पद्मावती वसतपचमी के दिन उस महादेव के मडप में पहुँची और उससे राजा का साचात् हुआ पर राजा उसे देखते ही मूर्छित हो गया। उसके मूर्छित होने पर पद्मावती ने उसके वच स्थल पर चदन से लिख दिया "जोगी, तू अभी भिचा प्राप्त करने योग्य नहीं है, तू ठीक मौके पर सो जाता है।" यह लिखकर वह चली गई।

पद्मावती के चले जाने पर राजा को होश हुआ। वह बहुत पछताने लगा। उसने प्राण देने का निश्चय किया। यह समाचार सुनकर सब देवता घबरा उठे। महादेव और पार्वती ने वेश बदलकर उसकी परीचा करने का निश्चय किया। पार्वती ने अप्सरा का रूप धारण किया और राजा से कहने लगी कि मैं ही पद्मावती हूँ। राजा को सच्चा प्रेम था। उसने उत्तर दिया कि तू पद्मावती नहीं है। पार्वती को विश्वास हो गया कि उसे सच्चा प्रेम है। उसने महादेव से कहा कि इसकी रचा करनी चाहिए। राजा ने महादेव और

पार्वती का यथार्थ रूप पहचान लिया और उनकी स्तुति करने लगा। महादेव ने प्रसन्न होकर सिद्धिगुटिका उसे दी और सिंघलगढ़ में उसे घुसने की आज्ञा दी।

योगियों ने गढ़ जा घेरा। राजा के दूत आए और उनका अभिप्राय पूछने लगे। उन्होंने उत्तर दिया कि हमें 'पदमावती' चाहिए। इस पर दूत क्रुद्ध होकर चले गए और राजा से सब हाल जा सुनाया। वह बड़ा क्रुद्ध हुआ। योगियों ने गढ़ के भीतर प्रवेश किया। वे राजा की आज्ञा से पकड़ लिए गए। रत्नसेन को सूली देने की आज्ञा हुई। वह इस पर बड़ा प्रसन्न हुआ। उपस्थित लोगों ने कहा कि अवश्य यह कोई राजकुमार है। महादेव और पार्वती रत्नसेन की सहायता को आ पहुँचे। महादेव ने (जो भाँट के वेश में थे) राजा को बहुत समझाया कि यह जोगी नहीं राजा है, यह पदमावती के योग्य वर है इससे अपनी कन्या का विवाह करो। राजा ने न माना। इस पर लड़ाई की तैयारी हुई। योगियों की तरफ से देवता भी थे। देवताओं की शंखध्वनि सुनकर राजा घबरा गया और उसने महादेव का असली रूप पहचानकर उनसे क्षमा माँगी और कहने लगा कि "कन्या आपकी है, चाहे जिससे उसका विवाह कीजिए।"

इसी बीच हीरामन शुक ने आकर राजा को चित्तौर का सारा हाल कह सुनाया। गंधर्वसेन रत्नसेन के साथ पदमावती का विवाह करने पर राजी हुआ। विवाह शुभ अवसर

शुभ घड़ी में हुआ। रतनसेन अपने साथियों के साथ सिंघल में रहकर सुख लूटने लगा। उसकी अनुपस्थिति में उसकी रानी नागमती बहुत दुखी हो रही थी—उसके विरह-विलाप से पशु-पक्षी तक दुखी होते थे। एक दिन, रात को, एक पक्षी ने उसका रोदन सुना। उसके दुःख पर तरस खाकर उसने प्रतिज्ञा की कि मैं तुम्हारा संदेश रतनसेन के पास पहुँचाऊँगा। संदेश लेकर वह सिंघल पहुँचा और एक वृक्ष पर बैठकर सुस्ताने लगा। संयोग से रतनसेन शिकार खेलता हुआ उसी वृक्ष के नीचे थककर आ बैठा।

पक्षी उस वृक्ष पर बैठकर एक दूसरे पक्षी से बातचीत कर रहा था। उसने नागमती का कष्ट कह सुनाया। राजा ने उन दोनों की बात सुनी। वह व्याकुल हो उठा और उसने अपने राज्य को लौटने की ठानी। रतनसेन अपने राज्य को लौटने की तैयारी करने लगा। उसने पद्मावती को साथ लिया। गंधर्वसेन ने उसे असंख्य धन दिया। सब ले-देकर वह जहाज पर सवार हुआ। समुद्र-तट पर उसे समुद्र भिक्षुक के रूप में मिला। उसने राजा से दान माँगा। राजा ने लोभ-वश उसे कुछ न दिया। जहाज पर चढ़कर राजा जब आधे समुद्र में आया तब तूफान बड़े जोर का आया और उसका जहाज लंका की ओर बह चला। वहाँ विभीषण का एक केवट मछली मार रहा था। उसने राजा को भरमाना चाहा। राजा को अपनी बातों में लाकर वह जहाज

को एक भयंकर समुद्र में ले चला। वहाँ पहुँचकर जहाज डूबने-डूबने होने लगा। तब राजा बहुत घबराया। इसी बीच में एक पक्षी आकर उस राक्षस को ले उड़ा। राजा का जहाज फट गया। वह एक पटरे पर एक ओर बह चला और रानी पद्मावती दूसरी ओर।

पद्मावती बहते-बहते एक तट पर लगी। पास ही मे समुद्र की कन्या लक्ष्मी खेल रही थी। उसने उसे बचाया। वह उसे अपने घर ले गई और आदर से अपने यहाँ रखा। इधर राजा बहते-बहते एक दूसरे निर्जन तट पर जा लगा। वहाँ पहुँचकर वह बहुत विलाप करने लगा। अंत में दुखी होकर वह अपनी हत्या करने पर तैयार हुआ। उसको ऐसा करने के लिये उद्यत होते देख समुद्र, ब्राह्मण का रूप धरकर, उसे रोकने को उपस्थित हुआ और उसे लेकर पद्मावती के पास पहुँचा।

राजा जिस समय पद्मावती के पास पहुँचा उस समय लक्ष्मी उसकी परीक्षा लेने को रास्ते में मिली। उसने चाहा कि राजा को भरमावे पर वह सच्चा प्रेमी था। अंत में प्रसन्न होकर लक्ष्मी ने उसे पद्मावती से मिला दिया। समुद्र की कृपा से राजा को उसके अन्य साथी भी मिले और वह सब को लेकर घर चला। चलते समय समुद्र ने उसे अमृत, हंस, राजलक्ष्मी, शार्दूल और पारस पत्थर उपहार में दिए। सब कुछ लेकर रत्नसेन चित्तौर पहुँचा और पद्मावती तथा

नागमती के साथ सुख से रहने लगा। नागमती से नागसेन और पद्मावती से कमलसेन नामक पुत्र हुए।

रतनसेन की सभा में राघव चेतन नामक एक पंडित था जिसने यक्षिणी को सिद्ध किया था। एक दिन रतनसेन ने पूछा 'द्विज कब है'। राघव के मुँह से निकल पड़ा 'आज'। अन्य लोगों ने कहा—'आज नहीं हो सकती, कल है'। राघव अपनी बात पर अड़ गया। उसने यक्षिणी के प्रभाव से उस दिन द्विज दिखा दी। अंत में दूसरे दिन बात खुली तो राघव देश से निकाल दिया गया। उसका निकाला जाना सुनकर पद्मावती बड़ी चिंतित हुई। उसने उसे बुलवा भेजा और दान देकर प्रसन्न करना चाहा। रानी ने अपने हाथ का एक कंकण उसे दान दिया। इसे लेकर राघव दिल्ली पहुँचा। वहाँ उसने सुल्तान अलाउद्दीन से सारा हाल कहकर पद्मावती की सुंदरता का वर्णन किया। अलाउद्दीन पद्मावती की सुंदरता का हाल सुनकर उस पर मुग्ध हो गया। उसने चित्तौर पर चढ़ाई करने की ठानी। उसने सरजा नामक दूत को चित्तौर भेजा। राजा यह सुनकर बड़ा क्रुद्ध हुआ। उसने कहा 'जीते जी यह हो नहीं सकता'। सुल्तान ने आखिर चित्तौर पर चढ़ाई कर दी। आठ वर्ष तक मुसलमान चित्तौर घेरे रहे पर कुछ न हुआ, अंत में सुल्तान ने एक चाल चली। उसने प्रकट में राजा से मित्रता की और चित्तौर दावत खाने गया। रतनसेन के यहाँ गोरा-बादल

दो घोर थे। वे इस कपट को समझ गए। उन्होंने राजा को खबरदार किया पर राजा ने एक न मानी।

चित्तौर में कई दिन तक सुल्तान की खातिरदारी होती रही। एक दिन सुल्तान राजा के साथ शतरज खेलने लगा। संयोग से पदमावती ऊपर झरोखे पर बैठकर देख रही थी। बादशाह ने उसका प्रतिबिंब दिवाल पर लगे हुए आइने में देखा। उसे देखकर वह मुग्ध हो गया—उसे मूर्च्छा आ गई। राघव ने समझाया कि वही पदमावती थी। अत में बादशाह ने विदा माँगी। राजा उसे पहुँचाने चला। अपने किले से बाहर होते ही राजा सुल्तान के सिपाहियों द्वारा पकड़ लिया गया और बंदी करके दिल्ली भेजा गया। कारागार में उसे अनेक प्रकार के क्लेश दिए जाने लगे। इधर चित्तौर में हाहाकार मच गया, दोनों रानियाँ सती होने को तैयार हुई। गोरा-बादल पदमावती के कहने पर, उनकी सहायता करने पर उद्यत हुए।

सुल्तान के यहाँ दिल्ली में चित्तौर से सोलह सै पालकियों पर चढकर सिपाही पहुँचे। बादशाह से कहा गया कि पदमावती आई है। वह एक बार राजा से मिलना चाहती है। फिर सुल्तान के महल में रहेगी। बादशाह ने इसे मान लिया और राजा से मिलने की आज्ञा दे दी। रतनसेन के बंदीगृह में वह पालकी पहुँचाई गई जिसमें एक लोहार बैठा था। उसने राजा की बेडी तुरत काट दी और

राजा घोडे पर सवार होकर भागा। अन्य छिपे हुए सिपाहियों ने उसकी रक्षा की। इस प्रकार शाही सेना को मारकाटकर लोग रतनसेन को छुडा लाए। रतनसेन जब चित्तौर पहुँचा तो उसने देवपाल की शरारत सुनी। उसने राजा की अनुपस्थिति मे पदमावती को वहकाने के लिए दूती भेजी थी। वह क्रोध से लाल हो गया और देवपाल से लडने को उद्यत हो उठा। दोनों राजाओ मे लडाई हुई। इस द्वंद्व में देवपाल मारा गया। उसकी साँग से रतनसेन बेतरह घायल हुआ। मरते समय उसने चित्तौर की रक्षा का भार बादल पर सौंपा।

रतनसेन के शव को लेकर उनकी दोनो रानियाँ सती हुई। उनके सती होने के पश्चात् शाही सेना चित्तौर पहुँची। सती होने का समाचार बादशाह ने सुना। वह हाथ मलकर रह गया।

पदमावत की कथा का आधार

पदमावत की कथा का आधार ऐतिहासिक है, पर थोडे अशो मे। भारतीय इतिहास मे अलाउद्दीन और चित्तौर के भीमसिंह की कथा प्रसिद्ध है। कहते हैं कि भीमसिंह की स्त्री पद्मिनी अपूर्व सुदरी थी। उसकी सुदरता का वर्णन सुनकर अलाउद्दीन ने चित्तौर पर चढाई की और भीमसिंह को हराया। उसने सधि करने के उद्देश से कहला भेजा कि यदि पद्मिनी का चित्र मुझे दिखा दिया जाय तो मैं दिल्ली लौट जाऊँगा। अलाउद्दीन की यह बात राजा ने मजूर कर ली और पद्मिनी की

छाया दर्पण में उसे दिखा दी गई। अलाउद्दीन उसके रूप पर और भी मुग्ध हो गया और उसने चाल से भीमसिंह को कैद कर लिया। अलाउद्दीन ने चित्तौर में कहला भेजा कि जब तक पद्मिनी न भेजी जायगी तब तक राजा को मुक्त न किया जायगा।

यह समाचार सुनकर पद्मिनी ने एक ढंग निकाला। उसने अपने मायके से गोरा-बादल नामक दो वीरों को बुला भेजा और उनसे सहायता करने को कहा। दोनों ने एक युक्ति सोची। उन्होंने बादशाह को कहला भेजा कि 'पद्मिनी तुम्हारे पास रहने को तैयार है।' उन दोनों ने बहुत से वीरों को सुसज्जित कर पालकी में बैठाया और सब बादशाह के शिविर में पहुँचे। सुल्तान को सूचित किया गया कि पद्मिनी आ रही है, वह पहले अपने पति से भेंट करना चाहती है। अलाउद्दीन ने उसकी इच्छा-पूर्ति के लिए आज्ञा दे दी। वेश बदले हुए सब राजपूत भीमसिंह के पास पहुँचे। उन्हें लेकर वे चित्तौर की ओर चले। अलाउद्दीन को शक हुआ। उसने पीछा किया। भीमसिंह सकुशल चित्तौर पहुँच गया। गोरा-बादल खूब लडे। गोरा युद्ध में मारा गया और बादशाह अपना मुँह लेकर वापस गया।

इस कथा को थोडे हेर-फेर से अन्य लोगों ने भी लिखा है। आईन अकबरी में भीमसिंह के स्थान पर रत्नसिंह नाम मिलता है। इसके अनुसार रत्नसिंह की मृत्यु अलाउद्दीन

के साथ युद्ध मे हुई। पद्मिनी पति के साथ सती हुई। जो हो, सीधी-सादी कथा यह जान पडती है कि रतनसेन चित्तौर के राजा थे। उनकी पत्नी पद्मिनी या पदमावती अपूर्व सुदरी थी। उसके रूप की चर्चा सुनकर अलाउद्दीन ने उसे पाने की इच्छा से चित्तौर पर चढाई की। युद्ध मे राजा ने उसे कई बार हराया, पर अत में उसने सधि की और पदमावती को बादशाह ने देखा। उसने धोखे से राजा को कैद कर लिया। गोरा-बादल सुलतान को धोखा देकर राजा को छुडा ले गए। राजा मारा गया और पदमावती उसके साथ सती हो गई। बादशाह को कुछ न मिला। वह खिसिया कर रह गया।

इस ऐतिहासिक कथा का प्रचार भारत में बहुत प्रबलता के साथ हुआ। प्राय सभी प्रांतों में इसका कोई न कोई रूपांतर प्रचलित हुआ। उत्तरी भारत, विशेष कर अवध मे इसके आधार पर एक कहानी प्रचलित हुई जिसका नाम था हीरामन सूआ और पद्मिनी रानी की कहानी। अभी तक अशिक्षित जनता में यह किसी न किसी रूप मे पाई जाती है। गांवों मे प्राय लोग इसे कहा करते हैं। जान पडता है, जायसी ने उसी प्रचलित कहानी को लेकर अपना काव्य खडा किया है। वे इतिहास के अधिक जानकार थे अत जो अश उन्होंने लिया है, ठीक लिया है। कथा में बहुत कुछ अश कवि को अपनी ओर से मिलाना पडा है जैसे पद्मिनी को

सिंहलराज की कन्या मानना। सिंहल में पद्मिनी स्त्रियों का होना केवल गोरखपंथी साधु मानते हैं। इस विचार के आधार पर जायसी ने पदमावती को सिंहल की माना और उसके पिता का नाम गंधर्वसेन रखा जो केवल कल्पित है। सिंहल तक की यात्रा आदि सारी बातें कवि को अपनी कल्पना-द्वारा पूर्ण करनी पड़ी हैं। यदि वह ऐसा न करता तो उसके काव्य की कथा अपूर्ण रह जाती। यह कहना ठीक है कि रत्नसेन और पदमावती के संबंध के पूर्व की सारी बातें कवि को केवल कथा की भूमिका बाँधने के लिए लिखनी पड़ी हैं। यदि ऐसा न किया जाता तो न तो कवि नायक और नायिका का 'प्रयत्न' ही लिख सकता और न उसका काव्य ही पूर्ण होता।

प्राचीन पद्धति के अनुसार जायसी अपने काव्य में अलौकिक वस्तुओं को लाने में भी नहीं हिचके हैं जैसे शुक का मनुष्य की भाँति बातचीत करना, राक्षस का मिलना आदि। प्राचीन विश्वास के अनुसार कवि को ऐसा करने में हिचक नहीं हुई। कादंबरी में भी इसी प्रकार शुक बातचीत करता है। राक्षस आदि का वर्णन प्राय भारतीय सभी प्राचीन आख्यायिकाओं में कुछ न कुछ मिलता है। इन इनी-गिनी बातों को छोड़कर पदमावत में हम कोई और अलौकिकता तथा अस्वाभाविकता नहीं पाते। पात्र प्राय सजीव व्यक्तियों की भाँति आचरण करते हुए पाए जाते हैं। उनके आचरण किसी प्रकार अलौकिक या अस्वाभाविक नहीं दिखाई पड़ते।

पदमावत की विशेषता

प्राय सभी मुसलमान आख्यान-लेखक सूफी सम्प्रदाय के थे। सूफी मतानुसार ईश्वर की कल्पना प्रियतम के रूप में की जाती है। 'उपासना के व्यवहार के लिए सूफी परमात्मा को अनत सौंदर्य, अनत शक्ति और अनत गुणों का समुद्र मानते हैं।' सूफी मत भारतीय अद्वैतवाद से वहुत कुछ मिलता-जुलता है। प्रोफेसर ब्राउन का मत है कि वह भारतवर्ष के वेदात का रूपातर है। सूफी मत इस्लाम धर्म के विरुद्ध है। इस्लाम धर्म मे सासारिक पदार्थों के उपभोग को ही आनद मानते हैं और स्वर्ग मे इन्हीं वस्तुओ के पाने की इच्छा रखते हैं। सूफी मत मे स्वर्ग में 'प्रभु' का दर्शनमात्र अभीष्ट है। कवि 'मीर' इस पर फरमाते हैं—

शेख तुझे जन्नत मुझे दीदार।
वाँ भी हर एक की जुदा किस्मत॥

सूफी, सच्चे सूफी होने के लिये प्रथम तृष्णा और मोह का दमन अत्यतावश्यक समझते हैं। सूफियो को नमाज-रोजे से कम वास्ता रहता है। अंत शुद्धि ही उनके मोक्ष का पक्का साधन है। यद्यपि जगत् सूफियों के लिये मिथ्या मृगतृष्णा है, ईश्वर निराकार है पर हमारे यहाँ के निर्गुण-वादियों से भिन्न वे ईश्वर का सुदर रूप जगत् के सारे सुदर पदार्थों मे देखते हैं। वे सारे जगत् को ईश्वर के 'प्रेम की पीर' से व्यथित देखते हैं—प्रेम की पुकार उन्हे सर्वत्र सुनाई देती है।

किसी ने सूफी भाव का सच्चा स्वरूप इस प्रकार प्रकट किया है—

'दरियाय इश्क वह रहा है लहरों में बेशुमार'

प्रेम के आनंद में मग्न होना, सौंदर्य और सदाचार की मदिरा पीकर मस्त होना सूफियों की परमोपासना है। इस सिद्धांत के अनुसार भावों की भरमार हम उर्दू और फारसी-साहित्य में देखते हैं। हिंदी-साहित्य में केवल मुसलमानों-द्वारा लिखे आख्यानों में हमें इसका मधुर रूप देखने को मिलेगा।

जायसी सूफी सम्प्रदाय के थे। पदमावत में उन्होंने अपने मत की भली भाँति व्यंजना की है। पदमावत में जहाँ कहीं प्रेम का वर्णन आया है वहाँ कवि उसे लौकिक पक्ष से उठाकर अलौकिक की ओर ले गया है। स्वयं कवि ने सारी कथा अन्योक्ति समझकर लिखी है। वे स्वयं अंत में लिखते हैं—

तन चितउर मन राजा कीन्हा। हिय सिंघल बुधि पदमिनि चीन्हा।
गुरू सुआ जेइ पंथ दिखावा। बिनु गुरु जगत को निर्गुन पावा।
नागमती दुनिया कर धंधा। बाँचा सोइ न एहि चित बंधा।
राघव दूत सोइ सैतानू। माया अलाउदीन सुल्तानू।

सारे पदमावत में हमें आध्यात्मिक प्रेम का आभास मिलेगा, चाहे वह वियोग अवस्था में हो चाहे संयोग। इतना ही नहीं,

प्राकृतिक वर्णन करते-करते कवि को ससार के सारे पदार्थ उस परमात्मा के प्रेम की पीर से व्यथित दिखाई पड़ते हैं। जायसी ने सूफी मत के सच्चे अनुयायी की भाँति पदमावत मे विश्वव्यापी विरह की व्यजना स्थान-स्थान पर की है—जैसे,

विरह के आगि सूर जरि काँपा। रातिउ दिवस जरे ओहि तापा।
इत्यादि।

जायसी की भाषा

जायसी ने पदमावत मे अवधी भाषा का प्रयोग किया है। यह अवधी तुलसीदास की रामायण की भाषा की भाँति साहित्यिक नहीं है वरन् ठेठ प्रचलित भाषा है। अवधी का प्रचार अवध, आगरा प्रदेश, बघेलखड, छोटा नागपुर और मध्यप्रदेश के भागों मे है। अवधी के दो भेद माने जाते हैं—पूर्वी और पश्चिमी। पश्चिमी अवधी लखनऊ से कन्नौज तक बोली जाती है, पूर्वी गोंडा और अयोध्या के पास। जायसी की भाषा पूर्वी अवधी है। ये अधिकतर जायस में रहे जो पूर्वी अवधी की सीमा के भीतर है।

अवधी की माता अर्धमागधी है। प्राचीन समय में गगा और यमुना की उपत्यका मे दो प्राकृतो का प्रचार था—मागधी और शौरसेनी। पूर्वी भाग में मागधी बोली जाती थी, पश्चिमी मे शौरसेनी। इन दोनों के मध्य मे जो भाषा प्रचलित थी वह अर्धमागधी के नाम से विख्यात थी। इसी

अर्धमागधी से अवधी की उत्पत्ति हुई है। जायसी की भाषा को हम अवधी का प्राचीन उदाहरण कह सकते हैं। इनके पूर्व के मुसलमान आख्यान-लेखको ने अवधी भाषा का प्रयाग अपनी भाषा मे किया था पर जायसी जायस के रहनेवाले थे अत उन्होने अवधी के जिस शुद्ध रूप का प्रयोग किया है वह अधिक प्रामाणिक है। जायसी की भाषा को समझने के लिये अवधी भाषा के व्याकरण का सक्षिप्त ज्ञान कर लेना आवश्यक है। सक्षेप मे वह यहाँ दिया जाता है।

संज्ञा और सर्वनाम

अवधी में प्राय सज्ञाएँ तद्भव रूप मे पाई जाती हैं। अधिकतर तो ऐसी होगी जिनका सबध प्राकृत से मिलेगा। कितनो का रूप अभी तक प्राकृत की भाँति है। अवधी के 'वा', और आना' के स्थान मे ब्रजभाषा और खडी बोली में क्रम से 'ओ' और 'आ' होता है। अवधी में लघ्वन्त करने की प्रवृत्ति है और ब्रज और खडी मे दीर्घान्त। यह प्रवृत्ति सर्वनामों में भी पाई जाती है। वचन के विषय मे यह ध्यान देने की बात है कि जब तक सज्ञा में कारक-चिह्न नहीं लगता तब तक उनका रूप एक वचन सा ही रहता है।

जायसी ने 'तू' या 'तैं' के स्थान पर 'तुइँ' प्रयोग किया है। यह रूप कन्नौजी और पश्चिमी अवधी का है।

अवधी के सर्वनामों का रूप इस प्रकार है—

सर्वनाम	एक वचन: कर्ता	एक वचन: विकृत	एक वचन: संबंध	बहुवचन: कर्ता	बहुवचन: विकृत	बहुवचन: संबंध
मैं	मैं	मो	मोर	हम	हम, हमरे	हमार, हमरे
तू	तैं	तो	तोर	तुम, तु	तुम तुम्हरे	तुम्हार, तुम्हरे तोहार, तोहरे
आप	आप	आपु	आपन	आप	आप	आपन
यह	ई	ए, एह, एहि	एकर, एहिकर	इन, ए	इन	इनकेर, इनकर
जो	जो, ज, जौन, जेइ (जायसी)	जे, जेहि	जेकर, जेहिकर	ज	जिन	जिनकेर, जिनकर
वह	ऊ,	ओ, ओहि, ओह	ओकर, ओहिकर	वे, उन	ओन, उन	ओनकर, ओनकेर
सो	सो, से, तौन,	ते, तेहि	तेकर, तेहिकर	ते	तिन	तिनकर, तिनकेर
कौन	को, कौन, के, केइ (जायसी)	के, केहि,	केकर, केकेर	को, के	किन	किनकर, किनकेर

कारक

कारक दो प्रकार से व्यक्त होते हैं। कुछ में तो प्राकृत और अप-भ्रंश की भाँति 'ह' और 'हि' विभक्तियाँ लगती हैं। इन विभक्तियों का प्रयोग प्राय सभी कारकों में होता है। ये विभक्तियां अभी तक संयोगावस्था में हैं। वियोगावस्था के कारक-चिह्न ये हैं।

कर्ता—ऐ (साहित्य में आकारांत शब्दों में सकर्मक भूत क्रिया के साथ)

कर्म—के, काँ, कहँ

करण— सें, सन, से, माँ (केवल पश्चिमीय अवधी)

सम्प्रदान—के, काँ, कहँ

अपादान—सें, तें, मेती, हुँत

संबंध—कर, क, केर, कै (स्त्री०) केरी (स्त्री०)

अधिकरण—मे महँ, माँ, पर

जायसी ने अपादान कारक के लिये 'भै' या भए' का प्रयोग किया है। इस विभक्ति से करण कारक का भी काम लिया है जिसका अर्थ 'कारण' और 'द्वारा' होता है।

संबंध कारक में लिंग-भेद हिंदी मे पाया जाता है। बोल चाल की अवधी मे यह भेद नहीं होता पर साहित्य मे यह दिखाई पड़ता है।

क्रियाएँ

अवधी में तिङंत क्रियाएँ बराबर मिलती हैं। कृदंतमूलक क्रियाओं का पता कहीं-कहीं उनके लिंग भेद से होता है

साधारण क्रिया (Infinitive) का रूप लघ्वत अकारांत होता है। जैसे, आउब, जाब, करब, खाब, पीयब, पढब, लिखब, सुनब, रहब, होब, कहब, सुनब इत्यादि।

अवधी में भविष्यत क्रिया का केवल तिङत रूप है जिसमे लिंगभेद होता ही नहीं। ब्रज और खड़ी मे 'गा' और 'गी' से लिंगभेद स्पष्ट होता है।

उच्चारण

उच्चारण के कुछ साधारण नियम ये हैं।—

(१) दो से अधिक वर्णों के शब्दो में यदि आदि में 'इ' या 'उ' की मात्रा हो तो इनके उपरांत 'आ' का उच्चारण अवधी मे होगा—जैसे, सियार, बियाज, बियाह, दुआर, कुआर, गुवाल, ब्रज और खड़ी में संधि से काम लिया जायगा जैसे स्यार, ब्याज, ब्याह, द्वार, क्वार, ग्वाल।

(२) 'अ' और 'आ' के उपरांत अवधी मे 'इ' अधिक आवेगा। यथा—आइ, जाइ, खाइ, आइहै, जाइहै, खाइहै। अवधी के 'इ' के स्थान मे ब्रज मे 'य' आवेगा जैसे—आय, जाय, खाय, आयहै, जायहै, खायहै।

(३) पद के आदि मे 'ऐ' और 'औ' का उच्चारण अवधी में 'अइ' और 'अउ' की भाँति होगा। यथा ऐस = अइस, जैस = जइस। दौरि = दउरि।

(४) पदान्त 'ऐ' और 'औ' का उच्चारण अवधी में भी ब्रज की भाँति 'अय' और 'अव' सा होगा, जैसे कहै = कहय, तपै = तपय, चलौ = चलव।

जायसी की भाषा की कुछ विशेषताएँ

जायसी ने यद्यपि अपनी पदमावत में पूर्वी अवधी के व्याकरण का अनुसरण किया है पर कहीं-कहीं उनकी भाषा पर अन्य आसपास की भाषाओं का भी प्रभाव पड़ा है। यथा—

(१) ऊपर कहा जा चुका है कि अवधी में क्रिया में पुरुष, वचन और लिंग-भेद कर्ता के अनुसार होता है। पश्चिमी हिंदी में भूतकालिक सकर्मक क्रिया में पुरुष-भेद नहीं होता। जायसी ने कई स्थानों पर इसका अनुसरण किया है। यथा—

(१) का मैं बोआ जनम ओहि भूँजी।
(२) तिन्ह पावा उत्तिम कैलासू।
(३) तुम्ह सिरजा यह समुद अपारा।
(४) भूलि चकोर दिष्टि तहँ लावा।
(५) अब तुम आइ अँतरपट साजा।

(२) जायसी ने कई स्थलों पर सकर्मक भूतकालिक क्रिया में लिंग, वचन पश्चिमी हिंदी की भाँति कर्म के अनुसार रखा है। यथा—

बसिठन्ह आइ कही अस बाता।

(३) कहीं-कहीं साधारण क्रिया का रूप अवधी की भाँति 'व'कारांत न होकर नकारांत मिलता है। जैसे—कित आवन पुनि अपने हाथा।

(४) कहीं-कहीं कारक चिह्न न लगने पर भी पश्चिमी हिंदी की भाँति संज्ञा में बहुवचन का रूप दिखाई देता है। यथा—

(१) नसैं भईं सब ताँति।

(२) जोबन लाग हिलोरैं लेई।

(५) कुछ ऐसे शब्दों का प्रयोग जायसी ने किया है जो ठेठ अवधी क हैं। यथा—

राँध, अहक, जहिया नौजि, तीवइ, महूँ, तहूँ, अधिकौ, इत्यादि।

(६) किसी समय (अपभ्रंश तथा प्राकृत काल) में संबंध कारक की विभक्ति 'हि' या 'ह' सब कारकों की विभक्ति का काम देती थी, पर पीछे से वह केवल कर्म और संप्रदान के लिये काम में आने लगी। जायसी ने प्राचीन प्रथा के अनुसार कहीं कर्ता में 'हि' विभक्ति का स्थानापन्न 'ऐ' का प्रयोग किया है।

(१) राजै (राजहि) कहा सुता कहु सूआ।

(२) सूऐ (सुअहि) तहाँ दिन दस कलकारीं।

यहाँ 'ऐ' 'ने' के स्थान पर आया है।

छंद

जायसी ने पद्मावत में सात चौपाइयों (अर्धालियों) के पीछे एक दोहा रखा है। प्राचीन कवि चंद वरदाई ने अपने रासो में दोहे, चौपाई का प्रयोग किया है। चौपाई का नाम 'रासो' में 'विअक्खरी' कहा है। उदा०—

चरित त्त्वर साहाय चर, गए पास सुरतान।
सजी सेन सामंत पति, आयो योजन यान॥
सुनि चरित्त साहाव नास घर बोलि मीर उमराव मता भर।
दिय निरघात घाव नीसांव चल्यो सेन सज्जै मज्झान॥

दोहा लिखने की प्रथा प्राचीन है। प्राकृत और अपभ्रंश में 'दोधक' छंद मिलता है। दोहे, चौपाइयों का क्रम भिन्न-भिन्न कवियों ने भिन्न-भिन्न रखा है। जायसी के पूर्व कवियों ने (मझन, कुतुबन) पाँच चौपाइयों के बाद एक दोहा लिखा है। जायसी ने सात और जायसी के पीछे तुलसी ने रामायण में आठ चौपाइयों के पश्चात् एक दोहा रखा है। वास्तव में तुलसी की आठ चौपाइयाँ चार चौपाई हुई। चौपाई का अर्थ चतुष्पदी है जिसका अर्थ है चार तुकांतपद। अत दो चौपाइयाँ मिलकर एक चतुष्पदी होगी। मुसलमान कवियों ने अज्ञानवश आधी चौपाई (अर्धाली) को पूरी चौपाई मानकर पाँच और सात चौपाई का क्रम रखा है जो वास्तव में ढाई और साढ़े तीन चौपाई हैं।

दोहे और चोपाई के लिए अवधी भाषा विशेष रूप से उपयुक्त है। जितनी सुगमता से ये छंद अवधी भाषा में चलते

हैं उतनी अन्य भाषा मे नहीं। विहारी आदि कवियो ने सुदर दोहे लिखे हैं पर पदलालित्य मे वे अवधी में रचे दोहो को नहीं पहुँच सकते।

खंड-सूची

संक्षिप्त पदमावत

(१) पदमावती खंड

सुमिरौं आदि एक करतारू। जेहि जिउ दीन्ह कीन्ह संसारू
कीन्हेसि प्रथम जोति परकासू। कीन्हेसि तेइ परबत कैलासू
कीन्हेसि अगिन, पवन, जल, खेहा। कीन्हेसि बहुतै रंग उरेहा
कीन्हेसि धरती, सरग, पतारू। कीन्हेसि बरन बरन औतारू
कीन्हेसि दिन, दिनअर, ससि, राती। कीन्हेसि नखत, तराइन-पाँती
कीन्हेसि धूप, सीउ औ छाँहा। कीन्हेसि मेघ, बीजु तेहि माँहा
कीन्हेसि सप्त मही बरम्हंडा। कीन्हेसि भुवन चौदहो खंडा

> कीन्ह सबै अस जाकर दूसर छाज न काहि।
> पहिलै ताकर नावँ लै कथा करौं औगाहि॥ १॥

धनपति उहै जेहिक संसारू। सबै देइ निति, घट न भँडारू
जावत जगत हस्ति औ चाँटा। सब कहँ भुगुति राति दिन बाँटा
ताकर दीठि जो सब उपराहीं। मित्र सत्रु कोइ बिसरै नाहीं
पंखि पतंग न बिसरै कोई। परगट गुपुत जहाँ लगि होई
भोग भुगुति बहु भाँति उपाई। सबै खवाइ, आप नहिं खाई

ताकर उहै जो खाना पियना । सब कहँ देइ भुगुति औ जियना
सबै आस-हर ताकर आसा । वह न काहु के आस निरासा
जुग जुग देत घटा नहिं उभै हाथ अस कीन्ह ।
और जो दीन्ह जगत महँ सो सब ताकर दीन्ह ॥ २ ॥
आदि एक बरनो सोइ राजा । आदि न अंत राज जेहि छाजा
सदा सरबदा राज करेई । औ जेहि चहै राज तेहि देई
छत्रहि अछत, निछत्रहिं छावा । दूसरि नाहि जो सरवरि पावा
परबत ढाह देख सब लोगू । चाटहि करै हस्ति सरि जोगू
बज्रहि तिनकहि मारि उड़ाई । तिनहिं बज्र करि देइ बड़ाई
ताकर कीन्ह न जानै कोई । करै सोइ जो चित्त न होई
काहू भोग भुगुति सुख सारा । काहू भूख बहुत दुख मारा
सबै नास्ति वह अहथिर ऐस साज जेहि केर ।
एक साजै औ भाजै, चहै सँवारै फेर ॥ ३ ॥
अलख अरूप अबरन सो कर्ता । वह सब सो सब ओहि सो बर्ता
परगट गुपुत सो सरब-बिआपी । धरमी चीन्ह, न चीन्है पापी
ना ओहि पूत, न पिता, न माता । ना ओहि कुटुंब, न कोइ सँग नाता
जना न काहु, न कोइ ओहि जना । जहँ लगि सब ताकर सिरजना
वै सब कीन्ह जहाँ लगि कोई । वह नहि कीन्ह काहु कर होई
हुत पहिले अरु अब है सोई । पुनि सो रहै, रहै नहिं कोई
और जो होइ सो बाउर अंधा । दिन दुइ चारि मरै करि धंधा
ना वह मिला न बेहरा ऐस रहा भरिपूरि ।
दीठिवंत कहँ नीयरे अंध मूरुखहिं दूरि ॥ ४ ॥

कीन्हेसि पुरुष एक निरमरा। नाम मुहम्मद पूनो-करा
प्रथम जोति बिधि ताकर साजी। औ तेहि प्रीति सिहिटि उपराजी
दीपक लेसि जगत कहँ दीन्हा। भा निरमल जग, मारग चीन्हा
जौं न होत अस पुरुष उजारा। सूझि न परत पंथ अँधियारा
दुसरे ठावँ दैव वै लिखे। भए धरमी जे पाढ़त सिखे
जेहि नहिं लीन्ह जनम भरि नाऊँ। ता कहँ कीन्ह नरक महँ ठाऊँ
जगत बसीठ दई ओहि कीन्हा। दुइ जग तरा नावँ जेहि लीन्हा
गुन अवगुन बिधि पूछब होइहि लेख औ जोख।
वह बिनउब आगे होइ करब जगत कर मोख॥ ५॥

सेरसाहि देहली सुलतानू। चारिउ खंड तपै जस भानू
ओही छाज छात औ पाटा। सब राजै भुइँ धरा लिलाटा
जाति सूर औ खाँडे सूरा। औ बुधिवंत सबै गुन पूरा
सूर नवाए नव-खँड वई। सातउ दीप दुनी सब नई
तहँ लगि राज खडग करि लीन्हा। इसकंदर जुलकरन जो कीन्हा
हाथ सुलेमाँ केरि अँगूठी। जग कहँ दान दीन्ह भरि मूठी
औ अति गरू भूमिपति भारी। टेकि भूमि सब सिहिटि सँभारी
दीन्ह असीस मुहम्मद करहु जुगहि जुग राज।
बादसाह तुम जगत के जग तुम्हार मुहताज॥ ६॥

सैयद असरफ पीर पियारा। जेहि मोहिं पंथ दीन्ह उँजियारा
लेसा हिये प्रेम कर दीया। उठी जोति, भा निरमल हीया
मारग हुत अँधियार जो सूझा। भा अँजोर, सब जाना बूझा
खार समुद्र पाप मोर मेला। बोहित-धरम लीन्ह कै चेला

उन्ह मोर कर बूडत कै गहा। पायों तीर घाट जो अहा।
जाकहँ ऐस होइ कँधारा। तुरत वेगि सो पावै पारा।
दस्तगीर गाढ़े कै साथी। वह अवगाह, दीन्ह तेहि हाथी।
जहाँगीर वै चिस्ती निहकलंक जस चाँद।
वै मखदूम जगत के हौं ओहि घर कै बाँद ॥ ७ ॥

ओहि घर रतन एक निरमरा। हाजी सेख सबै गुन भरा
तेहि घर दुइ दीपक उजियारे। पंथ देइ कहँ दैव सँवारे
सेख मुहम्मद पून्यो-करा। सेख कमाल जगत निरमरा
दुऔ अचल धुव डोलहि नाहीं। मेरु खिखिंद तिन्हहुँ उपराहीं
दीन्ह रूप औ जोति गोसाईं। कीन्ह खंभ दुइ जग के ताईं
दुहूँ खंभ टेके सब मही। दुहुँ के भार सिहिटि थिर रही
जेहि दरसे औ परसे पाया। पाप हरा, निरमल भइ काया
मुहमद तेइ निचिंत पथ जेहि सँग मुरसिद पीर।
जेहिके नाव औ खेवक वेगि लाग सो तीर ॥ ८ ॥

गुरु मेहदी खेवक मैं सेवा। चलै उताइल जेहिं कर खेवा
अगुआ भयउ सेख बुरहानू। पंथ लाइ मोहि दीन्ह गियानू
अलहदाद भल तेहि कर गुरू। दीन दुनी रोसन सुरखुरू
सैयद मुहमद कै वै चेला। सिद्ध-पुरुष-संगम जेहि खेला
दानियाल गुरु पंथ लखाए। हजरत ख्वाज खिजिर तेहि पाए
भए प्रसन्न ओहि हजरत ख्वाजे। लिये मेरइ जहँ सैयद राजे
ओहि सेवत मैं पाई करनी। उघरी जीभ, प्रेम कवि बरनी

वै सुगुरू हौं चेला निति बिनवौं भा चेर।
उन्ह हुत देखै पायउँ दरस गोसाईं केर॥ ९॥

एक-नयन कवि मुहमद गुनी। सोइ बिमोहा जेहि कवि सुनी
चाँद जैस जग बिधि औतारा। दीन्ह कलंक, कीन्ह उजियारा
जग सूझा एकै नयनाहाँ। उआ सूक जस नखतन्ह माहाँ
जौ लहि अबहि डाभ न होई। तौ लहि सुगँध बसाइ न सोई
कीन्ह समुद्र पानि जौ खारा। तौ अति भयउ असूझ अपारा
जौ सुमेरु तिरसूल बिनासा। भा कंचन-गिरि लाग अकासा
जौ लहि घरी कलंक न परा। काँच होइ नहिं कंचन-करा
एक नयन जस दरपन औ निरमल तेहि भाउ।
सब रुपवतइ पाउँ गहि मुख जोहहि कै चाउ॥ १०॥

चारि मीत कवि मुहमद पाए। जोरि मिताई सिर पहुँचाए
यूसुफ मलिक पँडित बहु ग्यानी। पहिलै भेद-बात वै जानी
पुनि सलार कादिम मतिमाहाँ। खाँडे-दान उभै निति बाहाँ
मियाँ सलोने सिंघ बरियारू। बीर खेत-रन खड़ग जुझारू
सेख बड़, बड़ सिद्ध बखाना। किए आदेस सिद्ध बड माना
चारिउ चतुरदसा गुन पढे। औ संजोग गोसाईं गढे
बिरिछ होइ जौ चंदन पासा। चंदन होइ बेधि तेहि बासा
मुहमद चारिउ मीत मिलि भए जो एकै चित्त।
एहि जग साथ जो निबहा ओहि जग बिछुरन कित्त॥११॥

जायस नगर धरम-अस्थानू। तहाँ आइ कवि कीन्ह बखानू
औ बिनती पँडितन सन भजा। टूट सँवारहु, मेरवहु सजा

हौं पंडितन केर पछलगा । किछु कहि चला तबल देइ डगा
हिय भँडार नग अहै जो पूँजी । खोली जीभ तारु कै कूँजी
रतन-पदारथ बोल जो बोला । सुरस प्रेम मधु भरी अमोला
जेहि के बोल बिरह कै घाया । कहँ तेहि भूख, कहाँ तेहि माया ?
फेरे भेख रहै भा तपा । धूरि-लपेटा मानिक छपा

मुहमद कवि जौ बिरह भा ना तन रकत न माँसु ।
जेइ मुख देखा तेइ हँसा सुनि तेहि आयउ आँसु ॥१२॥

सन नव सै सैंतालिस अहा । कथा अरंभ बैन कवि कहा
सिंघल दीप पदमिनी रानी । रतनसेन चितउर गढ़ आनी
अलउदीन देहली सुलतानू । राघौ चेतन कीन्ह बखानू
सुना साहि गढ़ छेका आई । हिंदू तुरुकन्ह भई लराई
आदि अंत जस गाथा अहै । लिखि भाखा चौपाई कहै
कवि बियास रस-कँवला पूरी । दूरि सो नियर, नियर सो दूरी
नियरे दूर फूल जस काँटा । दूरि जो नियरे जस गुड़ चाँटा

भँवर आइ बनखंड सन लेइ कँवल कै बास ।
दादुर बास न पावई भलहि जो आछै पास ॥ १३ ॥

सिंघलदीप कथा अब गावौं । औ सो पदमिनि बरनि सुनावौं
निरमल दरपन भाँति बिसेखा । जो जेहि रूप सो तैसइ देखा
धनि सो दीप जहँ दीपक बारी । औ पदमिनि जो दई सँवारी
गंध्रबसेन सुगंध नरेसू । सो राजा, वह ताकर देसू
लंका सुना जो रावन राजू । तेहू चाहि बड़ ताकर साजू

अस्सपतिक-सिरमौर कहावै । गजपतीक
नरपतीक कहँ और नरिंदू । भूपतीक
ऐस चकवे राजा चहूँ खंड भय
सबै आइ सिर नावहिं सरवरि करै न
जबहि दीप नियरावा जाई । जनु कैला
घन अमराउ लाग चहुँ पासा । उठा भूमि
तरिवर सबै मलयगिरि लाई । भइ जग
मलय-समीर सोहावन छाहाँ । जेठ जाड
ओही छाँह रैनि होइ आवै । हरियर स
पथिक जो पहुँचै सहि कै घामू । दुख बिसरै,
जेइ वह पाई छाँह अनूपा । फिरि नहि
अस अमराउ सघन घन बरनि न पारै
फूलै फरै छवो रितु जानहु सदा
बसहिं पंखि बोलहिं बहु भाखा । करहिं हुल
भोर होत बोलहिं चुहचूही । बोलहिं प
सारौं सुआ जो रहचह करहीं । कुरहिं प
'पीउ-पीउ' कर लाग पपीहा । 'तुही-तुही'
'कुहू-कुहू' करि कोइलि राखा । औ भिंगरा
'दही दही' करि महरि पुकारा । हारिल वि
कुहकहि मोर सोहावन लागा । होइ कुराह
जावत पंखी जगत के भरि बैठे अमरा

पैग पैग पर कुवाँ बावरी। साजी बैठक और पाँवरी
और कुड बहु ठावहिं ठाऊँ। सब तीरथ औ तिन्ह के नाऊँ
मठ मडप चहुँ पास सँवारे। तपा जपा सब आसन मारे
मानसरोदक बरनौं काहा। भरा समुद अस अति अवगाहा
पानि मोति अस निरमल तासू। अमृत आनि कपूर सुवासू
खँड खँड सीढी भईं गरेरी। उतरहिं चढहिं लोग चहुँ फेरी
फूला कवँल रहा होइ राता। सहस सहस पखुरिन कर छाता
ऊपर पाल चहूँ दिसि अमृत-फल सब रूख।
देखि रूप सरवर कै गै पियास औ भूख॥ १७॥

आस पास बहु अमृत बारी। फरीं अपूर, होइ रखवारी
पुनि फुलवारि लागि चहुँ पासा। बिरिछ बेधि चदन भइ बासा
सिंहलनगर देखु पुनि बसा। धनि राजा अस जेकै देसा
ऊँची पौरी ऊँच अवासा। जनु कैलास इद्र कर बासा
राव रक सब घर घर सुखी। जो दीखै सो हँसता-मुखी
रचि रचि साजे चदन चौरा। पोतें अगर मेद औ गौरा
सबै गुनी औ पडित ग्याता। ससकिरित सब के मुख बाता
अस कै मँदिर सवारैं जनु सिवलोक अनूप।
घर घर नारि पदमिनी मोहहि दरसन रूप॥ १८॥

पुनि आए सिंघलगढ पासा। का बरनौं जनु लाग अकासा
तरहिं करिन्ह बासुकि कै पीठी। ऊपर इद्रलोक पर दीठी
परा खोह चहुँ दिसि अस बाँका। काँपै जाँघ, जाइ नहि झाँका
अगम असूझ देखि डर खाई। परै सो सपत-पतारहि जाई

नवौ पौरी बाँकी नव खंडा । नवौ जो चढ़ै जाइ बरम्हंडा
कंचन-कोट जरे नग सीसा । नखतहिं भरी बीजु जनु दीसा
लंका चाहि ऊँच गढ़ ताका । निरखि न जाइ, दीठि मन थाका

हिय न समाइ दीठि नहिं, जानहुँ ठाढ़ सुमेर ।
कहँ लगि कहौं उँचाई कहँ लगि बरनौं फेर ॥ १९ ॥

निति गढ़ बाँचि चलै ससि सूरू । नाहिं त होइ बाजि-रथ चूरू
पौरी नवौ बज्र कै साजी । सहस सहस तहँ बैठे पाजी
फिरहिं पाँच कोतवार सुभौंरी । काँपै पावँ चपत वह पौरी
पौरिहि पौरि सिंह गढ़ि काढ़े । डरपहिं लोग देखि तहँ ठाढ़े
बहु निधान वै नाहर गढ़े । जनु गाजहिं चाहहिं सिर चढ़े
टारहिं पूँछ, पसारहिं जीहा । कुंजर डरहिं कि गुंजरि लीहा
कनक-सिला गढ़ि सीढ़ी लाई । जगमगाहि गढ़ ऊपर ताई

नवौ खंड नव पौरी औ तहँ बज्र केवार ।
चारि बसेरे सौ चढ़ै, सत सौं उतरै पार ॥ २० ॥

नव पौरी पर दसवँ दुवारा । तेहि पर बाज राज-घरियारा
घरी सो बैठि गनै घरियारी । पहर पहर सो आपनि बारी
जबहीं घरी पूजि तेहि मारा । घरी घरी घरियार पुकारा
परा जो डाँड, जगत सब डाँडा । 'का निचिंत माटी कर भाँडा ?
तुम्ह तेहि चाक चढ़े हौ काँचे । आएहु रहै, न थिर होइ बाँचे
घरी जो भरी घटी तुम्ह आऊ । का निचिंत होइ सोउ बटाऊ ?'
पहरहिं पहर गजर निति होई । हिया बजर, मन जाग न सोई

मुहमद जीवन-जल भरन रहँट घरी कै रीति।
घरी जो आई ज्यों भरी, ढरी, जनम गा बीति ॥ २१ ॥

गढ पर बसहिं झारि गढपती। असुपति गजपति भू-नर-पती
सब धौराहर सोने साजा। अपने अपने घर सब राजा
रूपवंत धनवंत सभागे। परस-पखान पौरि तिन्ह लागे
भोग बिलास सदा सब माना। दुख चिंता कोइ जनम न जाना
मँदिर मँदिर सब के चौपारी। बैठि कुँवर सब खेलहिं सारी
पासा ढरहिं खेल भल होई। खड़गदान-सरि पूज न कोई
भाट बरनि कहि कीरति भली। पावहिं हस्ति घोड़ सिंघली
मँदिर मँदिर फुलवारी चोवा चंदन बास।
निसि दिन रहै बसंत तहँ छवौ ऋतु बारह मास ॥ २२ ॥

पुनि चलि देखा राज-दुआरा। मानुष फिरहिं पाइ नहिं बारा
हस्ति सिंघली बाँधे बारा। जनु सजीव सब ठाढ पहारा
कौनौ सेत पीत रतनारे। कौनौ हरे धूम औ कारे
पुनि बाँधे रज-बार तुरंगा। का बरनौ जस उन्हकै रंगा
मन तें अगमन डोलहिं बागा। लेत उसास गगन सिर लागा
पौन समान समुद पर धावहिं। बूड न पावँ, पार होइ आवहिं
थिर न रहहिं रिस लोह चबाहीं। भाँजहिं पूँछ, सीस उपराहीं
अस तुखार सब देखे जनु मन के रथवाह।
नैन-पलक पहुँचावहिं जहँ पहुँचा कोइ चाह ॥ २३ ॥

राजसभा पुनि देख बईठी। इंद्रसभा जनु परि गै डीठी
धनि राजा असि सभा सँवारी। जानहु फूलि रही फुलवारी

मुकुट बाँधि सब बैठे राजा । दर-निसान नित जिन्हके बाजा
रूपवंत, मनि दिपै लिलाटा । माथे छात, बैठ सब पाटा
मानहुँ कँवल सरोवर फूले । सभा क रूप देखि मन भूले
पान कपूर मेद कस्तूरी । सुगँध बास भरि रही अपूरी
माँझ ऊँच इंद्रासन साजा । गंध्रबसेन बैठ तहँ राजा

छत्र गगन लगि ताकर, सूर तवै जस आप ।
सभा कँवल अस बिगसइ, माथे बड़ परताप ॥ २४ ॥

साजा राजमँदिर कैलासू । सोने कर सब धरति अकासू
सात खंड धौराहर साजा । उहै सँवारि सकै अस राजा
बरनौं राजमँदिर रनिवासू । जनु अछरीन्ह भरा कैलासू
सोरह सहस पदमिनी रानी । एक एक तें रूप बखानी
अति सुरूप औ अति सुकुवाँरी । पान फूल के रहहिं अधारी
तेहि ऊपर चंपावति रानी । महा सुरूप पाट-परधानी
सकल दीप महँ जेती रानी । तिन्ह महँ दीपक बारह-बानी

कुँवरि बतीसौ लच्छनी अस सब माँह अनूप ।
जावत सिंघलदीप के सबै बखानैं रूप ॥ २५ ॥

चंपावति जो रूप सँवारी । पदमावति चाहै औतारी
भै चाहै असि कथा सलोनी । मेटि न जाइ लिखी जस होनी
सिंघलदीप भयउ तब नाऊँ । जो अस दिया बरा तेहिं ठाऊँ
प्रथम सो जोति गगन निरमई । पुनि सो पिता माथे मनि भई
पुनि वह जोति मातु-घट आई । तेहि ओदर आदर बहु पाई

जस अवधान पूर होइ मासू। दिन दिन हिये होइ परग
जस अचल महँ छिपै न दीया। तस उँजियार दिखावै ही
सोने मँदिर सँवारहि औ चदन सब लीप।
दिया जो मनि सिवलोक महँ उपना सिघलदीप ॥ २६
भए दस मास पूरि भइ घरी। पदमावति कन्या औत
जानौ सूर किरिन हुति काढी। सूरुज कला घाटि, वह बा
भा निसि महँ दिनकर परकासू। सब उजियार भयउ कैला
इते रूप मूरति परगटी। पूनौ ससी छीन होइ घ
घटतहि घटत अमावस भई। दिन दुइ लाज गाडि भुइँ ग
पुनि जो उठी दुइज होइ नई। निहकलक ससि बिधि निरम
पदुमगध बेधा जग बासा। भौंर पतग भए चहुँ पास
इते रूप भै कन्या जेहिं सरि पूज न कोइ।
धनि सो देस रुपवता जहाँ जनम अस होइ ॥ २७ ॥
भै छठि राति छठीं सुख मानी। रहस कूद सौं रैनि बिहान
भा बिहान पडित सब आए। काढि पुरान जनम अरथा
कन्यारासि उदय जग कीया। पदमावती नाम अस दीय
कहेन्हि जनमपत्री जो लिखी। देइ असीस बहुरे जोतिषं
पाँच बरस महँ भै सो बारी। दीन्ह पुरान पढै बैसारं
भै पदमावति पडित गुनी। चहूँ खड के राजन्ह सुनं
सात दीप के बर जो ओनाहीं। उत्तर पावहि फिरि फिरि जाहिं
राजा कहै गरब कै अहौ इद्र सिवलोक।
को सरवरि है मोरे कासौं करौ बरोक ॥ २८ ॥

बारह बरस माहँ भै रानी। राजैं सुना सँयोग सयानी
सात खंड धौराहर तासू। सो पदमिनि कहँ दीन्ह निवासू
औ दीन्ही सँग सखी सहेली। जो सँग करैं रहसि रस-केली
सबै नवल पिउ सग न सोई। कवँल पास जनु बिगसी कोई
सुआ एक पदमावति ठाऊँ। महा पँडित हीरामन नाऊँ
दई दीन्ह पंखिहि अस जोती। नैन रतन, मुख मानिक मोती
कंचन-बरन सुआ अति लोना। मानहुँ मिला सोहागहि सोना
रहहिं एक सँग दोऊ पढहिं सासतर बेद।
बरम्हा सीस डोलावहीं सुनत लाग तस भेद॥ २९॥

भै उनंत पदमावति बारी। रचि रचि बिधि सब कला सँवारी
जग बेधा तेहिं अंग-सुबासा। भँवर आइ लुबुधे चहुँ पासा
बेनी नाग मलयगिरि पैठी। ससि माथे होइ दूइज बैठी
भौंह धनुक साधे सर फेरै। नयन कुरंग भूलि जनु हेरै
नासिक कीर, कवँल मुख सोहा। पदमिनि रूप देखि जग मोहा
मानिक अधर, दसन जनु हीरा। हिय हुलसे कुच कनक-जँभीरा
केहरि लंक, गवन गज हारे। सुर नर देखि माथ भुइँ धारे
जग कोइ दीठि न आवै आछहि नैन अकास।
जोगि जती सन्यासी तप साधहिं तेहि आस॥ ३०॥

एक दिवस पदमावति रानी। हीरामनि तुइँ कहा सयानी
'सुनु, हीरामनि, कहौं बुझाई। दिन दिन मदन सतावै आई
पिता हमार न चालै बाता। त्रासहि बोलि सकै नहिं माता
देस देस के बर मोहिं आवहिं। पिता हमार न आँखि लगावहि

जाइ परा वनखँड जिउ लीन्हें। मिले परिख, बहु आदर कीन्हें
आनि धरेन्हि आगे फरि साखा। भुगुति भेंट जौ लहि विधि राखा
पाइ भुगुति सुख तेहि मन भयऊ। दुख जो अहा विसरि सब गयऊ
ए गुसाइँ तूँ ऐस विधाता। जावत जीव सवन्ह भुकदाता
पाहन महँ नहि पतँग विसारा। जहँ तोहि सुमिर दीन्ह तुइँ चारा

तौ लहि सोग विछोह कर भोजन परा न पेट।
पुनि विसरन भा सुमिरना जब सपति भै भेंट ॥ ३६ ॥

पदमावति पहँ आइ भँडारी। कहेसि मँदिर महँ परी मजारी
सुआ जो उतर देत रह पूछा। उडिगा, पिंजर न बोलै छूँछा
रानी सुना सबहि सुख गयऊ। जनु निसि परी, अस्त दिन भयऊ
गहने गही चाँद कै करा। आँसु गगन जस नखतन्ह भरा
टूट पाल सरवर वहि लागे। कवँल बूड, मधुकर उडि भागे
एहि विधि आँसु नखत होइ चूए। गगन छाँडि सरवर महँ ऊए
चिहुर चुई मोतिन कै माला। अब सँकेत बाँधा चहुँ पाला

'उडि यह सुअटा कहँ बसा खोजु सखी सो बासु।
दहुँ है धरती की सरग, पौन न पावै तासु' ॥ ३७ ॥

चहूँ पास समुझावहिं सखी। 'कहाँ सो अब पाउब, गा पँखी
जौ लहि पींजर अहा परेवा। रहा वंदि महँ कीन्हेसि सेवा
तेहि वंदि हुति छुटै जो पावा। पुनि फिरि वंदि होइ कित आवा?
वै उडान-फर तहियै खाए। जब भा पखि, पाँख तन आए
पींजर जेहि क सौंपि तेहि गयऊ। जो जाकर सो ताकर भयऊ

दस दुआर जेहि पींजर माहाँ। कैसे बाँच मँजारी पाहाँ ?
यह धरती अस केतन लीला। पेट गाढ अस, बहुरि न ढीला
जहाँ न राति न दिवस है जहाँ न पौन न पानि।
तेहि बन सुअटा चलि बसा कौन मिलावै आनि ?' ॥ ३८ ॥

सुए तहाँ दिन दस कल काटी। आय बियाध ढुका लेइ टाटी
पैग पैग भुइँ चापत आवा। पंखिन्ह देखि हिये डर खावा
वै तौ उडे और बन ताका। पंडित सुआ भूलि मन थाका
बँधिगा सुआ करत सुख केली। चूरि पाँख मेलेसि धरि डेली
तहवाँ बहुत पंखि खरभरहीं। आपु आपु महँ रोदन करहीं
'जौं न होत चारा कै आसा। कित चिरिहार ढुकत लेइ लासा ?
एहि झूठी माया मन भूला। ज्यों पंखी तैसे तन फूला
हम तौ बुद्धि गँवावा बिख-चारा अस खाइ।
तैं सुअटा पंडित होइ कैसे बाझा आइ ?' ॥ ३९ ॥

सुए कहा 'हमहूँ अस भूले। टूट हिंडोल-गरब जेहि झूले
केरा के बन लीन्ह बसेरा। परा साथ तहँ बैरि केरा
सुख कुरबारि फरहरी खाना। ओहु बिख भा जब ब्याध तुलाना
काहेक भोग बिरिछ अस फरा। आड लाइ पंखिन्ह कहँ धरा ?
भूले हमहुँ गरब तेहि माहाँ। सो बिसरा पावा जेहि पाहाँ'
सुनि कै उतर आँसु पुनि पोंछे। 'कौन पंखि बाँधा बुधि-ओछे
तो दिन ब्याध भए जिउलेवा। उठे पाँख, भा नावँ परेवा
भै बियाधि तिसना सँग खाधू। सूझै भुगुति, न सूझ बियाधू
हम निचित वह आव छिपाना। कौन बियाधहि दोष अपाना
सो औगुन कित कीजिए जिउ दीजै जेहि काज।
अब कहना है किछु नहीं मस्ट भली पँखिराज' ॥ ४० ॥

(२) रतनसेन खंड

चित्रसेन चितउर गढ राजा । कै गढ कोट चित्र सम साजा
तेहि कुल रतनसेन उजियारा । धनि जननी जनमा अस बारा
पडित गुनि सामुद्रिक देखा । देखि रूप औ लखन बिसेखा
रतनसेन यह कुल निरमरा । रतन-जोति मनि माथे परा
पदुम-पदारथ लिखी सो जोरी । चाँद सुरुज जस होइ अँजोरी
जस मालति कहँ भौंर बियोगी । तस ओहि लागि होइ यह जोगी
सिंघलदीप जाइ यह पावै । सिद्ध होइ चितउर लेइ आवै
भोग भोज जस माना, बिक्रम साका कीन्ह ।
परखि सो रतन पारखी सबै लखन लिखि दीन्ह ॥ १ ॥

चितउरगढ कर एक बनिजारा । सिंघलदीप चला बैपारा
बाम्हन हुत एक निपट भिखारी । सो पुनि चला चलत बैपारी
रिन काहू कर लीन्हेसि काढी । मकु तहँ गए होइ किछु बाढी
मारग कठिन बहुत दुख भयऊ । नाँघि समुद्र दीप ओहि गयऊ
देखि हाट किछु सूझ न ओरा । सबै बहुत, किछु देख न थोरा
पै सुठि ऊँच बनिज तहँ केरा । धनी पाव, निधनी मुख हेरा
लाख करोरिन्ह वस्तु बिकाई । सहसन केरि न कोउ ओनाई
सबहीं लीन्ह बेसाहना औ घर कीन्ह बहोर ।
बाम्हन तहवाँ लेइ का ? गाँठि साँठि सुठि थोर ॥ २ ॥

भूरै ठाढ हौं, काहे क आवा? बनिज न मिला रहा पछितावा
लाभ जानि आयउँ एहि हाटा। मूर गँवाइ चलेउँ तेहि बाटा।
अपने चलत सो कीन्ह कुवानी। लाभ न देख, मूर भै हानी
तबहीं व्याध सुआ लेइ आवा। कंचन-बरन अनूप सुहावा
बेचै लाग हाट लै ओही। मोल रतन मानिक जहँ होहीं
बाम्हन आइ सुआ सों पूछा। 'दहुँ गुनवंत कि निरगुन छूछा?
पंडित हौ तौ सुनावहु वेदू। बिनु पूछे पाइय नहिं भेदू
हौं बाम्हन औ पंडित कहु आपन गुन सोइ।
पढे के आगे जो पढे दून लाभ तेहि होइ' ॥ ३ ॥

'तब गुन मोहि अहा, हो देवा। जब पिंजर हुत छूट परेवा
अब गुन कौन जो बँद, जजमाना। घालि मँजूसा बेचै आना
रोवत रकत भयउ मुख राता। तन भा पियर, कहौं का बाता?'
सुनि बाम्हन बिनवा चिरिहारू। 'करि पंखिन्ह कहँ मया,न मारू
निठुर होइ जिव बधसि परावा। हत्या केरि न तोहि डर आवा'
कहसि 'पंखि का दोस जनावा। निठुर तेइ जे परमस खावा
जौं न होहि अस परमँस-खाधू। कित पंखिन्ह कहँ धरै बियाधू?'
बाम्हन सुआ बेसाहा सुनि मति वेद गरंथ।
मिला आइ कै साथिन्ह भा चितउर के पंथ ॥ ४ ॥

तब लगि चित्रसेन सिव साजा। रतनसेन चितउर भा राजा
आइ बात तेहि आगे चली। 'राजा, बनिज आए सिंघली
हैं गजमोति भरी सब सीपी। औार वस्तु बहु सिंघलदीपी
बाम्हन एक सुआ लेइ आवा। कंचन-बरन अनूप सोहावा

राते स्याम कठ दुइ काँठा । राते डहन लिखा सब पाठा
औ दुइ नयन सुहावत राता । राते ठोर अमीरस बाता
मस्तक टीका काँध जनेऊ । कवि वियास, पडित सहदेऊ

बोल अरथ सो बोलै सुनत सीस सब डोल ।
राजमँदिर महँ चाहिय अस वह सुआ अमोल' ॥ ५ ॥

भै रजाइ जन दस दौराए । बाम्हन सुआ बेगि लेइ आए
विप्र असीसि विनति औधारा । सुआँ जीउँ नहिं करौं निरारा
सुआ असीस दीन्ह बड साजू । 'बड परताप अखडित राजू
भागवत विधि वड औतारा । जहाँ भाग तहँ रूप जोहारा
कोइ विनु पूछे बोल जो बोला । होइ बोल माँटी के मोला
गुनी न कोई आपु सराहा । जो विकाइ गुन कहा सो चाहा
जौ लहि गुन परगट नहिं होई । तौ लहि मरम न जानै कोई

चतुरवेद हौं पडित हीरामन मोहि नावँ ।
पदमावति सौं मेरवौं सेव करौं तेहि ठावँ' ॥ ६ ॥

रतनसेन हीरामन चीन्हा । एक लाख बाम्हन कहँ दीन्हा
विप्र असीसि जो कीन्ह पयाना । सुआ सो राजमँदिर महँ आना
बरनौं काह सुआ कै भाखा । धनि सो नावँ हीरामन राखा
जौ बोलै राजा मुख जोवा । जानौं मोतिन हार परोवा
जौ बोलै तौ मानिक मूँगा । नाहि त मौन बाँधि रह गूँगा
मनहुँ मारि मुख अमृत मेला । गुरु होइ आप, कीन्ह जग चेला
सुरज चाँद कै कथा जो कहेऊ । पेम क कहनि लाइ चित गहेऊ

जो जो सुनै धुनै सिर राजहि प्रीति अगाहु ।
अस गुनवंता नाहिं भल बाउर करिहै काहु ॥ ७ ॥

दिन दस पाँच तहाँ जो भए । राजा कतहुँ अहेरैं गए
नागमती रुपवती रानी । सब रनिवास पाट-परधानी
कै सिँगार कर दरपन लीन्हा । दरसन देखि गरब जिउ कीन्हा
बोलहु सुआ 'पियारे-नाहाँ । मोरे रूप कोइ जग माहाँ ?'
हँसत सुआ पहँ आइ सो नारी । दीन्ह कसौटी ओपनिवारी
सुआ 'बानि कसि कहु कस सोना । सिंघलदीप तोर कस लोना ?
कौन रूप तोरी रुपमनी । दहुँ हौं लोनि कि वै पदमिनी ?
जो न कहसि सत सुअटा तोहि राजा कै आन ।
है कोई एहि जगत महँ मोरे रूप समान' ॥ ८ ॥

सुमिरि रूप पदमावति केरा । हँसा सुआ, रानी मुख हेरा
'जेहि सरवर महँ हंस न आवा । बगुला तेहि सर हंस कहावा
दई कीन्ह अस जगत अनूपा । एक एक तें आगरि रूपा
कै मन गरब न छाजा काहू । चाँद घटा औ लागेउ राहू
लोनि बिलोनि तहाँ को कहै । लोनी सोई कंत जेहि चहै
का पूँछहु सिंघल कै नारी । दिनहिं न पूजै, निसि अँधियारी
पुहुप सुबास सो तिन्ह कै काया । जहाँ माथ का बरनौं पाया ?
गढ़ी सो सोने सोंधै भरी सो रूपै भाग ।
सुनत रूखि भइ रानी हिये लोन अस लाग ॥ ९ ॥

जौ यह सुआ मँदिर महँ अहई । कबहुँ बात राजा सौं कहई
सुनि राजा पुनि होइ बियोगी । छाँडै राज, चलै होइ जोगी

बिग राखिय नहि, होइ अँकूरू । सबद न देइ भोर तमचूरू'
धाय दामिनी-बेग हँकारी । ओहि सौपा हीये रिस भारी
'देखु, सुआ यह है मँदचाला । भयउ न ताकर जाकर पाला
मुख कह आन, पेट बस आना । तेहि औगुन दस हाट बिकाना
पखि न राखिय होइ कुभाखी । लेइ तहँ मारु जहाँ नहि साखी

जेहि दिन कहँ मैं डरति हौं रैनि छपावौ सूर ।
लै चह दीन्ह कवँल कहँ मोकहँ होइ मयूर' ॥ १० ॥

'धाय सुआ लेइ मारै गई । समुझि गियान हिये मति भई
सुआ सो राजा कर बिसरामी । मारि न जाइ चहै जेहि स्वामी
यह पंडित खंडित बैरागू । दोष ताहि जेहि सूझ न आगू
जो तिरिया के काज न जाना । परै धोख, पाछे पछिताना
नागमती नागिनि-बुधि ताऊ । सुआ मयूर होइ नहि काऊ
जो न कंत के आयसु माहीं । कौन भरोस नारि कै वाही ?
मकु यह खोज होइ निसि आए । तुरय-रोग- हरि-माथे जाए

दुइ सो छपाए ना छपै एक हत्या, एक पाप ।
अंतहि करहि बिनास लेइ सेइ साखी देइँ आप' ॥ ११ ॥

राखा सुआ धाय मति साजा । भयउ खोज निसि आयउ राजा
रानी उतर मान सौं दीन्हा । 'पंडित सुआ मँजारी लीन्हा
मैं पूछा सिंघल पदमिनी । उतर दीन्ह, तुम्ह को नागिनी ?
वह जस दिन, तुम निसि अँधियारी । कहाँ बसंत करील क बारी
का तोर पुरुष रैनि कर राऊ । उलू न जान दिवस कर भाऊ

का वह परिस कूट मुँह कूटे । अस वड बोल जीभ मुख छोटे
जहर चुवै जो जो कह बाता । अस हवियार लिए मुख राता
'माथे नहि वैसारिय जौ सुठि सुआ सलोन ।
कान टुटै जेहि पहिरे का लेड करव सो सोन ?' ॥ १२ ॥
राजै सुनि वियोग तस माना । जैसे हिय विक्रम पछिताना
वह हीरामन पडित सुआ । जो बोलै मुख अमृत चूआ
'की परान घट आनहु मती । की चलि होहु सुआ सँग सती'
चाँद जैस धनि उजियरि अही । भा पिउ-रोस, गहन अस गही
परम सोहाग निवाहि न पारी । भा दोहाग सेवा जव हारी
ऐसे गरव न भूलै कोई । जेहि डर बहुत पियारी सोई
रानी आइ धाय के पासा । सुआ मुआ सेवँर के आसा
'मैं पिउ-प्रीति भरोसे गरव कीन्ह जिउ माँह ।
तेहि रिस हौं परहेली, रूसेउ नागर नाहँ' ॥ १३ ॥
उतर धाय तव दीन्ह रिसाई । 'रिस आपुहि, वुधि औरहि खाई
मैं जो कहा रिस जिनि करु वाला । को न गयउ एहि रिस कर घाला ?'
जुआ-हारि समुझी मन रानी । सुआ दीन्ह राजा कहँ आनी
'मानु, पीय, हौं गरव न कीन्हा । कत तुम्हार मरम मैं लीन्हा
मिलतहु महँ जनु अहौ निरारे । तुम्ह सौं अहै अँदेस, पियारे !
मैं जानेउँ तुम्ह मोही माहाँ । देखौ ताकि तौ हौ सब पाहाँ
का रानी, का चेरी कोई । जा कहँ मया करहु भल सोई
तुम्ह सौं कोइ न जीता हारे वररुचि भोज ।
पहिले आपु जो खोवै करै तुम्हार सो खोज' ॥ १४ ॥

राजै कहा 'सत्य कहु, सूआ । बिनु सत जस सेंवर कर भूआ
होइ मुख रात सत्य के बाता । जहाँ सत्य तहँ धरम सँघाता'
'सत्य कहत, राजा, जिउ जाऊ । पै मुख असत न भाखौं काऊ
पदमावति राजा कै बारी । पदुम-गंध ससि बिधि औतारी
ससि मुख, अंग मलयगिरि रानी । कनक सुगंध दुआदस बानी
अहैं जो पदमिनि सिंघल माहाँ । सुगँध रूप सब तिन्हकै छाहाँ
हीरामन हौं तेहि क परेवा । कंठा फूट करत तेहि सेवा
जौ लहि जिऔं राति दिन सवँरौं ओहि कर नावँ ।
मुख राता, तन हरियर दुहूँ जगत लेइ जावँ' ॥ १५ ॥

हीरामन जो कवँल बखाना । सुनि राजा होइ भँवर भुलाना
'अहा जो कनक सुवासित ठाऊँ । कस न होइ हीरामन नाऊँ
को राजा, कस दीप उतंगू । जेहि रे सुनत मन भयउ पतंगू
कहु सुगंध धनि कस निरमली । भा अलि-संग कि अबहीं कली'
'का राजा हौं बरनौं तासू । सिंघलदीप आहि कैलासू
गंध्रबसेन तहाँ बड राजा । अछरिन्ह महँ इंद्रासन साजा
सो पदमावति तेहि कर बारी । जो सब दीप माँह उजियारी
उअत सूर जस देखिय चाँद छपै तेहि धूप ।
ऐसै सबै जाहिं छपि पदमावति के रूप' ॥ १६ ॥

सुनि रवि नावँ रतन भा राता । 'पंडित फेरि उहै कहु बाता
तैं सुरंग मूरति वह कही । चित महँ लागि चित्र होइ रही'
'पेम सुनत मन भूल न राजा । कठिन पेम, सिर देइ तौ छाजा
पेम-फाँद जो परा, न छूटा । जीउ दीन्ह पै फाँद न टूटा'

राजै लीन्ह ऊबि कै साँसा । 'ऐस बोल जिनि बोलु निरासा
भलेहि पेम है कठिन दुहेला । दुइ जग तरा पेम जेइ खेला
अब मैं पेम-पथ सिर मेला । पाँव न ठेलु, राखि कै चेला

जस अनूप, तैं बरनेसि, नखसिख बरनु सिंगार ।
है मोहि आस मिलै कै जौ मेरवै करतार' ॥ १७ ॥

'का सिंगार ओहि बरनौं, राजा । ओहि क सिंगार ओही पै छाजा
प्रथम सीस कस्तूरी केसा । बलि बासुकि, का और नरेसा ?
भौंर केस, वह मालति रानी । बिसहर लुरे लेहिं अरघानी
बेनी छोरि झार जौं बारा । सरग पतार होइ अँधियारा
कोवर कुटिल केस नग कारे । लहरन्हि भरे भुअँग बैसारे
बेधे जनौं मलयगिरि बासा । सीस चढे लोटहिं चहुँ पासा
घुँघुरवार अलकै बिषभरी । सँकरैं पेम चहैं गिउ परी

अस फँदवार केस वै परा सीस गिउ फाँद ।
अस्टौ कुरी नाग सब अरुझ केस के बाँद ॥ १८ ॥

बरनौं माँग सीस उपराहीं । सेंदुर अबहिं चढा जेहि नाहीं
बिनु सेंदुर अस जानहु दीआ । उजियर पथ रैनि महँ कीआ
कचन रेख कसौटी कसी । जनु घन महँ दामिनि परगसी
सुरुज-किरिन जनु गगन बिसेखी । जमुना माँह सुरसती देखी
खाँडै धार रुहिर जनु भरा । करवत लेइ बेनी पर धरा
तेहि पर पूरि धरे जो मोती । जमुना माँझ गग कै सोती
करवत तपा लेहि होइ चूरू । मकु सो रुहिर लेइ देइ सेंदूरू

कनक दुवादस बानि होइ चह सोहाग वह माँग ।
सेवा करहिं नखत सब उवै गगन जस गाँग ॥ १९ ॥
कहौं लिलार दुइज कै जोती । दुइजहि जोति कहाँ जग ओती
सहस किरिन जो सुरुज दिपाई । देखि लिलार सोउ छपि जाई
का सरवरि तेहि देउँ मयंकू । चाँद कलंकी, वह निकलंकू
औ चाँदहि पुनि राहु गहासा । वह बिनु राहु सदा परगासा
तेहि लिलार पर तिलक बईठा । दुइज-पाट जानहु ध्रुव दीठा
कनक-पाट जनु बैठा राजा । सबै सिंगार अत्र लेइ साजा
ओहि आगे थिर रहा न कोऊ । दहुँ का कहँ अस जुरै सँजोऊ
खरग, धनुक, चक, बान दुइ जग-मारन तिन्हि नाँव ।
सुनि कै परा मुरुछि कै 'मोकहँ हुए कुठावँ' ॥ २० ॥
'भौहैं स्याम धनुक जनु ताना । जा सहुँ हेर मार बिष-बाना
हनै धुनै उन्ह भौंहनि चढे । केइ हथियार काल अस गढे ?
नैन बाँक, सरि पूज न कोऊ । मानसरोदक उलथहि दोऊ
राते कँवल करहि अलि भवाँ । घूमहि माति चहहि अपसवाँ
उठहि तुरंग लेहि नहि बागा । चाहहि उलथि गगन कहँ लागा
जग डोलै डोलत नैनाहाँ । उलटि अडार जाहि पल माहाँ
समुद-हिलोर फिरहि जनु झूले । खंजन लरहिं, मिरिग जनु भूले
सुभर सरोवर नयन वै मानिक भरे तरंग ।
आवत तीर फिरावहीं काल भौंर तेहि संग ॥ २१ ॥
बरुनी का बरनौं इमि बनी । साधे बान जानु दुइ अनी
जुरी राम रावन कै सैना । बीच समुद्र भए दुइ नैना

नासिक खरग देउँ कह जोगू । खरग खीन, वह वदन-सँजोगू
नासिक देखि लजानेउ सूआ । सूक आइ बेसरि होइ ऊआ
पुहुप सुगंध करहिं एहि आसा । मकु हिरकाइ लेइ हम पासा
अधर दसन पर नासिक सोभा । दारिउँ बिंब देखि सुक लोभा
खंजन दुहुँ दिसि केलि कराहीं । दहुँ वह रस कोउ पाव कि नाहीं

देखि अमिय-रस अधरन्ह भयउ नासिका कीर ।
पौन बास पहुँचावै अस रस छाँड न तीर ॥ २२ ॥

अधर सुरंग अमी-रस-भरे । बिंब सुरंग लाजि बन फरे
हीरा लेइ सो बिद्रुम-धारा । बिहँसत जगत होइ उजियारा
अस कै अधर अमी भरि राखे । अबहिं अछूत, न काहू चाखे
दसन चौक बैठे जनु हीरा । औ बिच बिच रँग स्याम गँभीरा
जस भादौं-निसि दामिनि दीसी । चमकि उठै तस बनी बतीसी
जेहि दिन दसनजोति निरमई । बहुतै जोति जोति ओहि भई
जहँ जहँ बिहँसि सुभावहि हँसी । तहँ तहँ छिटकि जोति परगसी

हँसत दसन अस चमके पाहन उठे छरकि ।
दारिउँ सरि जो न कै सका, फाटेउ हिया दरकि ॥ २३ ॥

रसना कहौं जो कह रस बाता । अमृत-बैन सुनत मन राता
भरे पेम-रस बोलै बोला । सुनै सो माति घूमि कै डोला
पुनि बरनौं का सुरँग कपोला । एक नारँग दुइ किए अमोला
तेहि कपोल बाँए तिल परा । जेइ तिल देख सो तिल तिल जरा
अगिनि-बान जानौं तिल सूझा । एक कटाछ लाख दस जूझा

सो तिल गाल मेटि नहि गयऊ । अब वह गाल काल जग भयऊ
देखत नैन परी परछाहीं । तेहि ते रात साम उपराहीं

सो तिल देखि कपोल पर गगन रहा धुव गाडि ।
खिनहिं उठै, खिन बूडै, डोलै नहिं तिल छाँडि ॥ २४ ॥

स्रवन सीप दुइ दीप सँवारे । कुंडल कनक रचे उजियारे
मनि-कुंडल झलकैं अति लोने । जनु कौंधा लौकहि दुइ कोने
दुहुँ दिसि चाँद सुरुज चमकाहीं । नखतन्ह भरे निरखि नहि जाहीं
बरनौं गीउ कंबु कै रीसी । कंचन-तार लागि जनु सीसी
कुंदै फेरि जानु गिउ काढी । हरी पुछार ठगी जनु ठाढी
गए मयूर तमचूर जो हारे । उहै पुकारहि साँझ सकारे
धनि ओहि गीउ दीन्ह विधि भाऊ । दहुँ का सौं लेइ करै मेराऊ

कंठसिरी मुकुतावली सोहै अभरन गीउ ।
लागै कंठहार होइ को तप साधा जीउ ? ॥ २५ ॥

कनक-दंड दुइ भुजा कलाई । जानौं फेरि कुँदेरै भाई
कदलि-गाभ कै जानौ जोरी । औ राती ओहि कँवल-हथोरी
जानौ गति बेड़िन देखराई । बाँह डोलाइ जीउ लेइ जाई
हिया थार, कुच कंचन लारू । कनक कचोर उठे जनु चारू
बेधे भौंर कंट केतकी । चाहहि बेध कीन्ह कंचुकी
जोबन बान लेहि नहिं बागा । चाहहि हुलसि हिये हठि लागा
उतँग जँभीर होइ रखवारी । छुइ को सकै राजा कै बारी

राजा बहुत मुए तपि लाइ लाइ भुइँ माथ ।
काहू छुवै न पाए गए मरोरत हाथ ॥ २६ ॥

पेट परत जनु चदन लावा । कुहँकुहँ केसर बरन सुहावा
खाम भुअगिनि रोमावली । नाभी निकसि कँवल कहँ चली
आइ दुऔ नारँग बिच भई । देखि मयूर ठमकि रहि गई
नाभि-कुड बिच बारानसी । सौंह को होइ, मीचु तहँ बसी?
बैरिनि पीठि लीन्ह वह पाछे । जनु फिरि चली अपछरा काछे
मलयागिरि कै पीठि सँवारी । बेनी नागिनि चढी जो कारी
लहरैं देति पीठि जनु चढी । चीर-ओहार केंचुली मढी
पन्नग पकज मुख गहे खजन तहाँ बईठ ।
छत्र, सिंघासन, राज, धन ताकहँ होइ जो डीठ ॥ २७ ॥

लक पहुमि अस आहि न काहू । केहरि कहौं न ओहि सरि ताहू
बसा लक बरनै जग झीनी । तेहि तें अधिक लक वह खीनी
नाभिकुड सो मलय-समीरू । समुद-भँवर जस भँवै गँभीरू
तीवइ कवँल-सुगध सरीरू । समुद-लहरि सोहै तन चीरू
बरनौं नितँब लक कै सोभा । औ गज-गवन देखि मन लोभा
जुरे जघ सोभा अति पाए । केरा-खभ फेरि जनु लाए
माथे भाग कोउ अस पावा । चरन-कवँल लेइ सीस चढ़ावा
बरनि सिंगार न जानेउँ नखसिख जैस अभोग ।
तस जग किछुइ न पायउँ उपमा देउँ ओहि जोग' ॥ २८ ॥

सुनतहि राजा गा मुरछाई । जानौं लहरि सुरुज कै आई
पेम-घाव-दुख जान न कोई । जेहि लागै जानै पै सोई
परा सो पेम-समुद्र अपारा । लहरहिं लहर होइ बिसँभारा
बिरह-भौंर होइ भाँवरि देई । खिन खिन जीउ हिलोरा लेई

खिनहि उसास बूडि जिउ जाई । खिनहिं उठै निसरै बौराई
खिनहि पीत, खिन होइ मुख सेता । खिनहि चेत, खिन होइ अचेता
कठिन मरन तें प्रेम-बेवस्था । ना जिउ जियै, न दसवँ अवस्था

जनु लेनिहार न लेहिं जिउ हरहिं तरासहिं ताहि ।
एतनै बोल आव मुख करै "तराहि तराहि" ॥ २९ ॥

जहँ लगि कुटुँब लोग औ नेगी । राजा राय आय सब बेगी
जावत गुनी गारुडी आए । ओझा, बैद, सयान बोलाए
नहिं सो राम, हनिवँत बडि दूरी । को लेइ आव सजीवन-मूरी ?
जब भा चेत उठा बैरागा । बाउर जनौं सोइ उठि जागा
आवत जग बालक जस रोआ । उठा रोइ 'हा ग्यान सो खोआ'
अब जिउ उहाँ, इहाँ तन सूना । कब लगि रहै परान-बिहूना
जौ जिउ घटहि काल के हाथा । घट न नीक पै जीउ निसाथा

अहुठ हाथ तन-सरवर, हिया कवँल तेहि माहँ ।
नैनहिं जानहु नीयरे, कर पहुँचत औगाह ॥ ३० ॥

सबन्ह कहा 'मन समुझहु राजा । काल सेंति कै जूझ न छाजा
तासौं जूझ जात जो जीता । जानत कृस्न तजा गोपीता
औ न नेह काहू सौं कीजै । नावँ मिटै, काहे जिउ दीजै'
सुए कहा 'मन बूझहु राजा । करब पिरीति कठिन है काजा
तुम राजा जेईं घर पोई । कवँल न भेंटेउ, भेंटेउ कोई
जानहिं भौंर जो तेहि पथ लूटे । जीउ दीन्ह औ दियहु न छूटे
कठिन आहि सिंघल कर राजू । पाइय नाहिं जूझ कर साजू

साधन्ह सिद्धि न पाइय जौ लगि सधै न तप्प ।
सो पै जानै बापुरा करै जो सीस कलप्प ॥ ३१ ॥
का भा जोग-कथनि के कथे । निकसै घिउ न बिना दधि मथे
जौ लहि आप हेराइ न कोई । तौ लहि हेरत पाव न सोई
पेम-पहार कठिन बिधि गढा । सो पै चढै जो सिर सौ चढा
तू राजा का पहिरसि कथा । तोरे घरहि माँझ दस पथा
काम, क्रोध, तिस्ना, मद, माया । पाँचौ चोर न छाँडहि काया'
सुनि सो बात राजा मन जागा । पलक न मार, पेम चित लागा
'गुरू बिरह-चिनगी जो मेला । जो सुलगाइ लेइ सो चेला
फूल फूल फिरि पूँछौ जौ पहुँचौं ओहि केत ।
तन नेवछावरि कै मिलौ ज्यो मधुकर जिउ देत' ॥ ३२ ॥
बधु मीत बहुतै समुझावा । मान न राजा कोउ भुलावा
उपजी पेम-पीर जेहि आई । परबोधत होइ अधिक सो आई
तजा राज, राजा भा जोगी । औ किंगरी कर गहेउ बियोगी
तन निसँभर, मन बाउर लटा । अरुझा पेम, परी सिर जटा
चद्र-बदन औ चदन-देहा । भसम चढाइ कीन्ह तन खेहा
कथा पहिरि दड कर गहा । सिद्ध होइ कहँ गोरख कहा
मुद्रा स्रवन, कठ जपमाला । कर उदपान, काँध बघछाला
चला भुगुति माँगै कहँ साधि कया तप जोग ।
सिद्ध होइ पदमावति जेहि कर हिये बियोग ॥ ३३ ॥
गनक कहहिं गनि 'गौन न आजू । दिन लेइ चलहु, होइ सिध काजू'
'पेम-पथ दिन घरी न देखा । तब देखै जब होइ सरेखा'

चहुँ दिसि आन साँटिया फेरी। भै कटकाई राजा केरी
'राजा चला साजि कै जोगू। साजहु वेगि चलहु सब लोगू'
बिनवै रतनसेन कै माया। 'माथे छात, पाट निति पाया
बिलसहु नौ लख लच्छि पियारी। राज छाँडि जिनि होहु भिखारी
सब दिन रहेहु करत तुम भोगू। सो कैसे साधव तप जोगू ?

राजपाट, दर, परिगह तुम्ह ही सौं उजियार।
बैठि भोग रस मानहु कै न चलहु अँधियार' ॥ ३४ ॥

'मोहिं यह लोभ सुनाव न माया। काकर सुख, काकर यह काया
जो निआन तन होइहि छारा। माटिहि पोखि मरै को भारा ?
का भूलौ एहि चदन चोवा। वैरी जहाँ अग कर रोवाँ'
रोवहि नागमती रनिवासू। 'केइ तुम्ह कत दीन्ह वनबासू
अब को हमहि करहि भोगिनी। हमहूँ साथ होव जोगिनी
तुम्ह अस बिछुरै पीउ पिरीता। जहँवाँ राम तहाँ सँग सीता
जौ लहि जिउ सँग छाँड न काया। करिहौ सेव, पखरिहौ पाया

देहिं असीस सबै मिलि तुम्ह माथे निति छात।
राज करहु चितउरगढ राखहु पिय अहिवात' ॥ ३५ ॥

'तुम्ह तिरिया मति हीन तुम्हारी। मूरुख सो जो मतै घर-नारी
राघव जो सीता सँग लाई। रावन हरी, कौन सिधि पाई ?
यह ससार सपन कर लेखा। बिछुरि गए जानौं नहि देखा'
रोवत माय, न बहुरत बारा। रतन चला, घर भा अँधियारा
'बार मोर जो राजहि रता। सो लै चला, सुआ परवता'

रोवहिं रानी, तजहिं पराना । नोचहिं बार, करहिं खरिहाना
चूरहिं गिउ-अभरन, उर-हारा । 'अब का पर हम करब सिंगारा ?'
टूटे मन नौ मोती फूटे मन दस काँच ।
लीन्ह समेटि सब अभरन होइगा दुख कर नाच ॥ ३६ ॥

निकसा राजा सिंगी पूरी । छाँडा नगर मेलि कै धूरी
राय रान सब भए बियोगी । सोरह सहस कुँवर भए जोगी
नगर नगर औ गाँवहिं गाँवाँ । छाँडि चले सब ठाँवहिं ठावाँ
का कर मढ, का कर घर माया । ताकर सब जाकर जिउ काया
आगे सगुन सगुनियैं ताका । दहिने माछ रूप के टाँका
भरे कलस तरुनी जल आई । 'दहिउ लेहु' ग्वालिनि गोहराई
मालिनि आव मौर लिए गाँथे । खंजन बैठ नाग के माथे
जा कहँ सगुन होहि अस औ गवनै जेहि आस ।
अस्ट महासिधि तेहि कहँ जस कवि कहा बियास ॥ ३७ ॥

भयउ पयान चला पुनि राजा । सिंगि-नाद जोगिन कर बाजा
कहेन्हि 'आजु किछु थोर पयाना । कालि पयान दूरि है जाना
ओहि मिलान जौ पहुँचै कोई । तब हम कहब पुरुष भल सोई
है आगे परवत कै बाटा । बिषम पहार अगम सुठि घाटा
करहु दीठि थिर होइ बटाऊ । आगे देखि धरहु भुइँ पाऊ
पाँयन पहिरि लेहु सब पौंरी । काँट धसैं, न गड़ै अँकरौरी
परे आइ बन परवत माहाँ । दंडाकरन बीझ-बन जाहाँ
एक बाट गइ सिंघल, दूसरि लंक समीप ।
हैं आगे पथ दूओ दहुँ गौनब केहि दीप' ॥ ३८ ॥

ततखन बोला सुआ सरेखा। 'अगुआ सोइ पथ जेइ देखा
सुनु मत, काज चहसि जौं साजा। पहुँचहु नगर विजयगिरि राजा'
मासेक लाग चलत तेहि बाटा। उतरे जाइ समुद के घाटा
रतनसेन भा जोगी-जती। सुनि भेंटै आवा गजपती
'आए भलेहि, मया अब कीजै। पहुनाई कहँ आयसु दीजै'
'सुनहु, गजपती, उतर हमारा। हम तुम्ह एकै, भाव निरारा
इहै बहुत जौ बोहित पावौं। तुम्ह तै सिंघलदीप सिधावौं

जहाँ मोहिं निजु जाना कटक होउँ लेइ पार।
जौ रे जिऔं तौ बहुरौं मरौं त ओहि के बार' ॥ ३९ ॥

गजपति कहा 'सीस पर माँगा। बोहित नाव न होइहि खाँगा
ए सब देउँ आनि नव-गढे। फूल सोइ जो महेसुर चढे
पै गोसाइँ सन एक बिनाती। मारग कठिन जाब केहि भाँती'
'गजपति, यह मन सकती-सीऊ। पै जेहि पेम कहाँ तेहि जीऊ
जौ पै जीउ बाँध सत बेरा। बरु जिउ जाइ फिरै नहि फेरा
है। पदमावति कर भिखमगा। दीठि न आव समुद औ गगा
जेहि कारन गिउ कायरि कथा। जहाँ सो मिलै जावँ तेहि पथा

मरग सीस, धर धरती, हिया सो पेम-समुद।
नैन कौडिया होइ रहे, लेइ लेइ उठहिं सो बुद' ॥ ४० ॥

सो न डोल देखा गजपती। राजा सत्त दत्त दुहुँ सँती
निहचै चला भरम जिउ खोई। साहस जहाँ सिद्धि तहँ होई
निहचै चला छाँडि कै राजू। बोहित दीन्ह,दीन्ह सब साजू
चढा बेगि, तब बोहित पेले। धनि सो पुरुष पेम जेइ खेले

जस बन रेंगि चलै गज-ठाटी । बोहित चले, समुद गा पाटी
धावहिं बोहित मन उपराहीं । सहस कोस एक पल महँ जाहीं
समुद अपार सरग जनु लागा । सरग न घाल गनै बैरागा

'दस महँ एक जाइ कोइ करम, धरम, तप, नेम ।
बोहित पार होइ जब तबहि कुसल औ खेम' ॥ ४१ ॥

राजै कहा 'कीन्ह मैं पेमा । जहाँ पेम कहँ कूसल खेमा
मायर तरैं हिये सत पूरा । जौ जिउ सत, कायर पुनि सूरा
तेइ सत बोहित कुरी चलाए । तेइ सत पवन पंख जनु लाए
सत साथी, सत कर ससारू । सत्त खेइ लेइ लावै पारू'
उठै लहरि जनु ठाढ पहारा । चढै सरग औ परै पतारा
डोलहिं बोहित लहरैं खाहीं । खिन तर होहिं, खिनहिं उपराहीं
राजै सो सत हिरदै बाँधा । जेहि सत टेकि करै गिरि काँधा

खार समुद सो नाँघा आए समुद जहँ खीर ।
मिले समुद वै सातौ बेहर बेहर नीर ॥ ४२ ॥

खीर समुद का बरनौं नीरू । सेत सरूप, पियत जस खीरू
दधि-समुद्र देखत तस दाधा । पेम क लुबुध दगध पै साधा
आए उदधि समुद्र अपारा । धरती सरग जरै तेहि झारा
सुरा समुद पुनि राजा आवा । महुआ मद-छावा देखरावा
पुनि किलकिला समुद महँ आए । गा धीरज, देखत डर खाए
उठै लहरि परवत कै नाईं । फिरि आवै जोजन सौ ताईं
धरती लेइ सरग लहि बाढा । सकल समुद जानहुँ भा ठाढा

गै औसान सबन्ह कर देखि समुद कै बाढि ।
नियर होत जनु लीलै रहा नैन अस काढ़ि ॥ ४३ ॥

हीरामन राजा सौ बोला । 'एही समुद आए सत डोला
सिंघलदीप जो नाहिं निबाहू । एही ठावँ साँकर सब काहू
एहि किलकिला समुद्र गँभीरू । जेहि गुन होइ सो पावै तीरू
इहै समुद्र-पथ मँझधारा । खाँडे कै असि धार निनारा'
राजै दीन्ह कटक कहँ बीरा । 'सुपुरुष होहु, करहु मन धीरा'
ठाकुर जेहिक सूर भा कोई । कटक सूर पुनि आपुहि होई
जौ लहि सती न जिउ सत बाँधा । तौ लहि देइ कहाँर न काँधा

कान समुद धँसि लीन्हेसि भा पाछे सब कोइ ।
कोइ काहू न सँभारै आपनि आपनि होइ ॥ ४४ ॥

कोइ बोहित जस पौन उडाहीं । कोई चमकि बीजु अस जाहीं
कोई जस भल धाव तुखारू । कोई जैस बैल गरियारू
कोइ जानहुँ हरुआ रथ हाँका । कोई गरुअ भार बहु थाका
कोई रेंगहि जानहुँ चाँटी । कोई टूटि होहिं तर माटी
कोई खाहिं पौन कर झोला । कोई करहिं पात अस डोला
कोई परहि भौंर जल माहाँ । फिरत रहहिं,कोइ देइ न बाहाँ
राजा कर भा अगमन खेवा । खेवक आगे सुआ परेवा

कोइ दिन मिला सवेरे, कोइ आवा पछ-राति ।
जा कर जस जस साजु हुत सो उवरा तेहि भाँति ॥ ४५ ॥

सतएँ समुद मानसर आए । मन जो कीन्ह साहस, सिधि पाए
गा अँधियार, रैनि-मसि छूटी । भा भिनसार किरिन-रवि फूटी

'अस्ति अस्ति' सब साथी बोले। अंध जो अहे नैन विधि खोले
कवँल बिगस तस बिहँसी देहीं। भौंर दसन होइ कै रस लेहीं
पूछा राजै 'कहु गुरु सूआ। न जनौं आजु कहाँ दहुँ ऊआ
कबहुँ न ऐस जुड़ान सरीरू। परा अगिनि महँ मलय-समीरू
निकसत आव किरिन-रवि-रेखा। तिमिर गए निरमल जग देखा
औरु दखिन दिसि नीयरे कंचन-मेरु देखाव।
जनु बसंत रितु आवै तैसि बास जग आव' ॥ ४६ ॥
'तूँ राजा जस बिक्रम आदी। तू हरिचंद बैन सतबादी
जोग पेम तुइँ भूमि अकासू। दीठि परा सिंघल-कैलासू
तहाँ देखु पदमावति रामा। भौंर न जाइ, न पंखी नामा
कंचन-मेरु देखाव सो जहाँ। महादेव कर मंडप तहाँ
मास मास, पाछिल पख लागे। सिरी-पंचमी होइहि आगे
उघरिहि महादेव कर बारू। पूजिहि जाइ सकल संसारू
पदमावति पुनि पूजै आवा। होइहि एहि मिस दीठ-मेरावा
तुम्ह गौनहु ओहि मंडप, हौं पदमावति पास।
पूजै आइ बसंत जब तब पूजै मन-आस' ॥ ४७ ॥

(३) प्रेम खंड

पदमावति तेहि जोग सँजोगा। परी पेम-बस गहे वियोगा
नींद न परै रैनि जौं आवा। सेज केंवाच जानु कोइ लावा
दहै चंद औ चंदन चीरू। दगध करै तन विरह गँभीरू
कलप समान रैनि तेहि बाढी। तिलै तिल भर जुग जुग जिमि गाढी
गहै बीन मकु रैनि विहाई। ससि-बाहन तहँ रहै ओनाई
पुनि धनि सिंघ उरेहै लागै। ऐसिहि बिथा रैनि सब जागै
कहँ वह भौंर कँवल रस-लेवा। आइ परै होइ घिरिनि परेवा
सो धनि बिरह-पतंग भइ, जरा चहै तेहि दीप।
कंत न आव भिरिंग होइ, का चंदन तन लीप ? ॥ १ ॥
परी बिरह बन जानहुँ घेरी। अगम असूझ जहाँ लगि हेरी
चतुर दिसा चितवै जनु भूली। सो बन कहँ जहँ मालति फूली ?
कँवल भौंर ओही बन पावै। को मिलाइ तन-तपनि बुझावै ?
अंग अंग अस कँवल सरीरा। हिय भा पियर कहै पर-पीरा
चहै दरस, रवि कीन्ह बिगासू। भौंर-दीठि मनो लागि अकासू
पूँछै धाय, 'बारि, कहु बाता। तुइँ जस कवँल फूल रँग राता
केसर बरन हिया भा तोरा। मानहुँ मनहि भयउ किछु भोरा
पौन न पावै संचरै, भौंर न तहाँ बईठ।
भूलि कुरंगिनि कस भई, जानु सिंघ तुइँ डीठ' ॥ २ ॥

'धाय, सिंह वरु खातेउ मारी। की तसि रहति अही जसि बारी
जोबन सुनेउँ कि नवल बसंतू। तेहि वन परउ हस्ति मैमंतू
अब जोबन-बारी को राखा। कुंजर-बिरह बिधंसै साखा
मैं जानेउँ जोबन रस भोगू। जोबन कठिन सँताप बियोगू'
'पदमावति, तुइँ समुद सयानी। तोहि सरि समुद न पूजै, रानी
नदी समाहिं समुद महँ आई। समुद डोलि कहु कहाँ समाई?
अबहीं कवँल-करी हिय तोरा। आइहि भौंर जो तो कहँ जोरा

जब लगि पीउ मिलै नहि साधु पेम कै पीर।
जैसे सीप सेवाति कहँ तपै समुद मँझ नीर' ॥ ३ ॥

'दहै, धाय, जोबन एहि जीऊ। जानहुँ परा अगिनि महँ घीऊ
करवत सहौं होत दुइ आधा। सहि न जाइ जोबन कै दाधा
बिरह समुद्र भरा असँभारा। भौंर मेलि जिउ लहरिन्ह मारा'
कहेसि 'पेम जौं उपना, बारी। बाँधु सत्त, मन डोल न भारी
सती जो जरै पेम सत लागी। जौ सत हिये तौ सीतल आगी
पौन बाँध सो जोगी जती। काम बाँध सो कामिनि सती
आव बसंत फूल फुलवारी। देव-बार सब जैहैं बारी

तुम्ह पुनि जाहु बसंत लेइ पूजि मनावहु देव।
जीउ पाइ जग जनम है, पीउ पाइ कै सेव' ॥ ४ ॥

जब लगि अवधि आइ नियराई। दिन जुग जुग बिरहिनि कहँ जाई
तेहि वियोग हीरामन आवा। पदमावति जानहुँ जिउ पावा
कंठ लाइ सूआ सौं रोई। अधिक मोह जौं मिलै बिछोई
रही रोइ जब पदमिनि रानी। हँसि पूछहिं सब सखी सयानी

'मिले रहस भा चाहिय दूना । कित रोइय जौ मिलै बिछूना' ?
तेहि क उतर पदमावति कहा । 'बिछुरन-दुख जो हिये भरि रहा
मिलत हिये आयउ सुख भरा । वह दुख नैन-नीर होइ ढरा

बिछुरता जब भेंटै सो जानै जेहि नेह ।
सुख सुहेला उग्गवै दु ख झरै जिमि मेह' ॥ ५ ॥

पुनि रानी हँसि कूसल पूछा । 'कित गवनेहु पींजर कै छूँछा' ?
'रानी, तुम्ह जुग जुग सुखपाट्ट । छाज न पखिहि पींजर-ठाट्ट
जब भा पंख कहाँ थिर रहना । चाहै उडा पंखि जौ डहना
पींजर महँ जो परेवा घेरा । आइ मजारि कीन्ह तहँ फेरा
दिन एक आइ हाथ पै मेला । तेहि डर बनोवास कहँ खेला
तहाँ बियाध आइ नर साधा । छूटि न पाव मीचु कर बाँधा
वै धरि बेचा बाम्हन हाथा । जबूदीप गयउँ तेहि साथा

तहाँ चित्र चितउरगढ चित्रसेन कर राज ।
टीका दीन्ह पुत्र कहँ, आपु लीन्ह सिव साज ॥ ६ ॥

बैठ जो राज पिता के ठाऊँ । राजा रतनसेन ओहि नाऊँ
बरनौं काह देस मनियारा । जहँ अस नग उपना उँजियारा
धनि माता औ पिता बखाना । जेहि के बस अस अस आना
लछन बतीसौ कुल निरमला । बरनि न जाइ रूप औ कला
वै हौं लीन्ह, अहा अस भागू । चाहै सोने मिला सोहागू
सो नग देखि हींछा भइ मोरी । है यह रतन पदारथ जोरी
है ससि जोग इहै पै भानू । तहाँ तुम्हार मैं कीन्ह बखानू

कहाँ रतन रतनागर, कंचन कहाँ सुमेरु।
दैव जो जोरी दुहुँ लिखी मिलै सो कौनेहु फेर ॥ ७ ॥

सुनत बिरह-चिनगी ओहि परी। रतन पाव जौं कंचन-करी
कठिन पेम बिरहा दुख भारी। राज छाँडि भा जोगि-भिखारी
कहेसि पतंग होइ धनि लेऊँ। सिंघलदीप जाइ जिउ देऊँ'
हीरामन जो कही यह बाता। सुनि कै रतन पदारथ राता
जस सूरुज देखे होइ ओपा। तस भा बिरह, कामदल कोपा
सुनि कै जोगी केर बखानू। पदमावति मन भा अभिमानू
'को अन हाथ सिंघ मुख घालै। को यह बात पिता सौ चालै
सरग इंद्र डरि काँपै बासुकि डरै पतार।
कहाँ सो अस बर प्रिथिमी मोहि जोग संसार' ॥ ८ ॥

'तू, रानी, ससि कंचन-करा। वह नग रतन सूर निरमरा
आगि बुझाइ परे जल गाढै। वह न बुझाइ आपु ही बाढै'
सुनि कै धनि, जारी अस कया। तब भा मयन, हिये भै मया
'देखौं जाइ जरै कस भानू। कंचन जरे अधिक होइ बानू
अब जौ मरै वह पेम वियोगी। हत्या मोंहि जेहि कारन जोगी
जौं वह जोग सँभारै छाला। पाइहि भुगुति, देहुँ जयमाला
आव बसंत कुसल जौं पावौं। पूजा मिस मंडप कहँ आवौं
कवँल-भवँर तुम्ह बरना मैं माना पुनि सोइ।
चाँद सूर कहँ चाहिय जौ रे सूर वह होइ' ॥ ९ ॥

हीरामन जो सुना रस बाता। पावा पान भयउ मुख राता
चला सुआ, रानी तब कहा। 'भा जो परावा कैसे रहा ?'

'सुनु रानी, हौं रहतेउँ राधा। कैसे रहौं वचन कर बाँधा'
आवा सुआ बैठ जहँ जोगी। मारग नैन, बियोग बियोगी
आइ पेम-रस कहा सँदेसा। 'गोरख मिला, मिला उपदेसा
तुम्ह कहँ गुरू मया बहु कीन्हा। कीन्ह अदेस, आदि कहि दीन्हा
सबद, एक उन्ह कहा अकेला। गुरु जस भिंग, फनिग जस चेला

आवै रितू बसंत जब तब मधुकर, तब बासु।
जोगी जोग जो इमि करै सिद्धि समापत तासु' ॥ १० ॥

दैउ दैउ कै रितु सो गँवाई। सिरी-पचमी पहुँची आई
भयउ हुलास नवल रितु माहाँ। खिन न सोहाइ धूप औ छाहाँ
पदमावति सब सखी हँकारी। जावत सिंघलदीप कै बारी
आजु बसंत नवल रितुराजा। पचमि होइ, जगत सब साजा
नवल सिंगार बनसपति कीन्हा। सीस परासहि सेंदुर दीन्हा
बिगसि फूल फूले बहु बासा। भौंर आइ लुबुधे चहुँ पासा
पियर-पात-दुख झरे निपाते। सुख-पल्लव उपने होइ राते

अवधि आइ सो पूजी जो हींछा मन कीन्ह।
चलहु देवमढ गोहने चहुँ सो पूजा दीन्ह ॥ ११ ॥

फिरी आन, रितु-बाजन बाजे। औ सिंगार बारिन्ह सब साजे
कवँल-कली पदमावति रानी। होइ मालति जानौं बिगसानी
तारा-मँडल पहिरि भल चोला। भरे सीस सब नखत अमोला
सखी कुमोद सहस दस संगा। सबै सुगंध चढाये अंगा
सब राजा रायन्ह कै बारी। बरन बरन पहिरे सब सारी

सवै सुरूप, पदमिनी जाती। पान, फूल, सेँदुर सब राती
करहिँ किलोल सुरग-रँगीली। औ चोवा चदन सब गीली
चहुँ दिसि रही सो बासना फुलवारी अस फूलि।
वै बसत सौं भूली गा बसत उन्ह भूलि॥ १२॥
भै आग्या पदमावति चली। छत्तिस कुरि भइँ गोहन भली
कवँल सहाय चलीं फुलवारी। फर फूलन सब करहिँ धमारी
आपु आपु महँ करहिँ जोहारू। यह बसत सबकर तिवहारू
चहै मनोरा झूमक होई। फर औ फूल लियउ सब कोई
फागु खेलि पुनि दाहब होरी। सैँतब खेह, उडाउब झोरी
भा आयसु पदमावति केरा। 'बहुरि न आइ करब हम फेरा
तस हम कहँ होइहि रखवारी। पुनि हम कहाँ, कहाँ यह बारी
पुनि रे चलब घर आपने पूजि निसेसर-देव।
जेहि काहुहि होइ खेलना आजु खेलि हँसि लेव' ॥ १३॥
काहू गही आँब कै डारा। काहू जाँबु बिरह अति झारा
पुनि बीनहि सब फूल सहेली। खोजहिँ आस-पास सब बेली
फर फूलन्ह सब डार ओढाई। झुड बाँधि कै पचम गाई
बाजहि ढोल दुदुभी भेरी। मादर, तूर, झाँझ चहुँ फेरी
रथहिँ चढी सब रूप सोहाई। लेइ बसत मठ-मँडप सिधाई
नवल बसत, नवल सब बारी। सेंदुर बुक्का होइ धमारी
खिनहि चलहि, खिन चाँचरि होई। नाँच कूद भूला सब
सेँदुर-खेह उडा अस, गगन भयउ सब रात।
राती सगरिउ धरती, राते बिरिछन्ह पात॥ १४॥

जनहुँ लक सब लूटी हनुवँ विधसी वारि।
जागि उठिउँ अस देखत,सखि, कहु सपन विचारि' ॥ १९ ॥

सखी सो बोली सपन-विचारू। 'कालिह जो गइहु देव के बारू॥
पूजि मनाइहु बहुतै भाँती। परसन आइ भये तुम्ह राती॥
सूरुज पुरुष चाँद तुम रानी। अस बर दैउ मेरावै आनी॥
पच्छिउँ खँड कर राजा कोई। सो आवा वर तुम्ह कहँ होई॥
किछु पुनि जूझ लागि तुम्ह रामा। रावन सौं होइहि सँगरामा॥
चाँद सुरुज सौं होइ वियाहू। बारि विधसब बेधब राहू॥
जस ऊषा कहँ अनिरुध मिला। मेटि न जाइ लिखा पुरविला॥
सुख सोहाग जो तुम्ह कहँ पान फूल रस भोग।
आजु कालिह भा चाहै अस सपने क सँजोग' ॥ २० ॥

कै बसत पदमावति गई। राजहि तब बसत सुधि भई॥
जो जागा न बसत न बारी। ना वह खेल, न खेलनहारी॥
ना वह ओहि कर रूप सुहाई। गै हेराइ, पुनि दिस्टि न आई॥
केइ यह बसत बसत उजारा?। गा सो चाँद, अथवा लेइ तारा॥
बिरह-दवा को जरत सिरावा?। को पीतम सौं करै मेरावा?॥
जस बिछोह जल मीन दुहेला। जल हुँत काढि अगिनि महँ मेला॥
चदन-ऑक दाग हिय परे। बुझहि न ते आखर परजरे॥
आइ बसत जो छपि रहा होइ फूलन्ह के भेस।
केहि विधि पावौं भौंर होइ कौन गुरू-उपदेस ॥ २१ ॥

रोवै रतन-माल जनु चूरा। जहँ होइ ठाढ, होइ तहँ कूरा॥
'कहाँ सो मूरति परी जो डीठी। काढि लिहेसि जिउ हिये पईठी॥

अरे मलिछ निसवासी देवा । कित मैं आइ कीन्ह तोरि सेवा
सुफल लागि पग टेकेउँ तोरा । सुआ क सेंवर तू भा मोरा
पाहन चढि जो चहै भा पारा । सो ऐसे बूडै मँझधारा
पाहन सेवा कहा पसीजा ? । जनम न ओद होइ जौ भीँजा
बाउर सोइ जो पाहन पूजा । सकत को भार लेइ सिर दूजा ?

सिंघ तरेंदा जेइ गहा पार भए तेहि साथ ।
ते पै बूडे बाउरे भेंड-पूँछि जिन्ह हाथ ॥ २२ ॥

आनहिं दोस देहुँ का काहू । संगी कया मया नहिं ताहू
हुता पियारा मीत बिछोई । साथ न लाग आपु गै सोई
का मैं कीन्ह जो काया पोषी । दूषन मोहि, आप निरदोषी
फागु बसत खेलि गई गोरी । मोहि तन लाइ बिरह कै होरी
अब अस कहाँ छार सिर मेलौं ? । छार जो होहुँ फाग तन खेलौं
कित तप कीन्ह छाँडि कै राजू । गयउ अहार न भा सिध काजू
पायउँ नहि होइ जोगी जती । अब सर चढौं जरौं जस सती

आइ जो पीतम फिरि गा मिला न आइ बसत ।
अब तन होरी घालि कै जारि करौं भसमत' ॥ २३ ॥

हनुवँत बीर लंक जेहि जारी । परबत उहै अहा रखवारी
बैठि तहाँ होइ लंका ताका । छठएँ मास देइ उठि हाँका
जाइ तहाँ वै कहा सँदेसू । पारवती औ जहाँ महेसू
ततखन पहुँचे आइ महेसू । बाहन बैल, कुस्टि कर भेसू
सेसनाग जाके कँठमाला । तनु भभूति, हस्ती कर छाला

चँवर, घट औ डँवरू हाथा। गौरा पारवती धनि साथा
अवतहि कहेन्हि 'न लावहु आगी। तेहि कै सपथ जरहु जेहि लागी
की तप करै न पारेहु, की रे नसाएहु जोग ?।
जियत जीउ कस काढहु ? कहहु सो मोहिं वियोग' ॥२४॥
कहेसि 'मोहि बातन्ह विलँमावा। हत्या केरि न डर तोहि आवा
जरै देहु, दुख जरौं अपारा। निस्तर पाइ जाउँ एक बारा
जस भरथरी लागि पिंगला। मो कहँ पदमावति सिंघला
मैं पुनि तजा राज औ भोगू। सुनि सो नावँ लीन्ह तप जोगू
एहि मढ सेएउँ आइ निरासा। गइ सो पूजि, मन पूजि न आसा
तैं यह जिउ डाढे पर दाधा। आधा निकसि रहा, घट आधा
जो अधजर सो विलँव न लावा। करत विलंब बहुत दुख पावा'
एतना बोल कहत मुख उठी बिरह कै आगि।
जौं महेस न बुझावत जाति सकल जग लागि ॥ २५ ॥
पारवती मन उपना चाऊ। देखौं कुँवर केर सत भाऊ
ओहि एहि बीच, कि पेमहि पूजा। तन मन एक, कि मारग दूजा
भइ सुरूप जानहुँ अपछरा। विहँसि कुँवर कर ऑचर धरा
'सुनहु, कुँवर, मो सौं एक बाता। जस मोहिं रंग न औरहिं राता
औ विधि रूप दीन्ह है तोका। उठा सो सबद जाइ सिव-लोका
तब हौं तोपहँ इंद्र पठाई। गइ पदमिनि, तैं अछरी पाई
अब तजु जरन, मरन, तप, जोगू। मो सौं मानु जनम भरि भोगू
हौं अछरी कैलास कै जहि सरि पूज न कोइ।
मोहिं तजि सँवरि जो ओहि मरसि, कौन लाभ तोहि होइ ?२६

'भलेहिं रंग अछरी तोर राता। मोहि दुसरे सौं भाव न बाता
मोहि ओहि सँवरि मुए तस लाहा। नैन जो देखसि पूछसि काहा?
अबहिं ताहि जिउ देइ न पावा। तोहि असि अछरी ठाढि मनावा
जौं जिउ देइहौं ओहि कै आसा। न जनौं काह होइ कैलासा'
गौरइ हँसि महेस सौं कहा। 'निहचै एहि बिरहानल दहा
वदन पियर जल डभकहिं नैना। परगट दुवौ पेम के बैना
एहू कहँ सत मया करेहू। पुरवहु आस, कि हत्या लेहू'

तन रोवै जस जिउ जरै गिरै रकत औ माँसु।
रोवँ रोवँ सब रोवहिं सूत सूत भरि आँसु॥ २७॥

रोवत बूडि उठा समारू। महादेव तब भयउ मयारू
कहेन्हि 'न रोव, बहुत तैं रोवा। अब ईसर भा, दारिद खोवा
जो दुख सहै होइ सुख ओका। दुख बिनु सुख न जाइ सिवलोका
अब तै सिद्ध भयसि सिधि पाई। दरपन-कया छूटि गइ काई
गढ तस बाँक जैसि तोरि काया। पुरुष देखु ओही कै छाया
नौ पौरी तेहि गढ मझियारा। औ तहँ फिरहिं पाँच कोटवारा
दसवँ दुवार गुपुत एक ताका। अगम चढाव, बाट सुठि बाँका

जस मरजिया समुद धँसि हाथ आव तब सीप।
ढूँढि लेइ जो सरग-दुआरी चढै सो सिंघलदीप॥ २८॥

दसवँ दुआर ताल कै लेखा। उलटि दिस्टि जो लाव सो देखा
परगट लोकचार कहु बाता। गुपुत लाउ मन जासौं राता
"हौं हौं" कहत सबै मति खोई। जौं तू नाहिं आहि सब कोई'

सिधि-गुटिका राजै जब पावा । पुनि भइ सिद्धि गनेस मनावा
जब संकर सिधि दीन्ह गुटेका । परी हूल, जोगिन्ह गढ छेंका
पौरि पौरि गढ लाग केवारा । औ राजा सौं भई पुकारा
'जोगी आइ छेंकि गढ मेला । न जनौं कौन देस तें खेला'
भयेउ रजायसु 'देखौ को भिखारि अस ढीठ ।
बेगि बरजि तेहि आवहु जन दुइ पठै बसीठ' ॥ २९ ॥

उतरि बसीठन्ह आइ जोहारे । 'की तुम जोगी, की बनिजारे
भयउ रजायसु आगे खेलहिं । गढ तर छाँडि अनत होइ मेलहिं
हौ जोगी तौ जुगुति सौं माँगौ । भुगुति लेहु, लै मारग लागौ'
'आनु जो भीखि हौं आयउँ लेई । कस न लेउँ जौ राजा देई
पदमावति राजा कै बारी । हौ जोगी ओहि लागि भिखारी
सोई भुगुति-परापति भूजा । कहाँ जाउँ अस बार न दूजा
तुम्ह बसीठ राजा के ओरा । साखि होहु एहि भीख निहोरा
जोगी बार आव सो जेहि भिच्छा कै आस ।
जो निरास दिढ आसन कित गौनै केहु पास ?' ॥ ३० ॥

सुनि बसीठ मन उपनी रीसा । जौ पीसत घुन जाइहि पीसा
'जोगी अस कहुँ कहै न कोई । सो कहु बात जोग जो होई
वह बड राज इंद्र कर पाटा । धरती परा सरग को चाटा ?
जौ यह बात जाइ तहँ चली । छूटहिं अबहि हस्ति सिंघली'
'तुम्हरे जोर सिंघलु के हाथी । हमरे हस्ति गुरू हैं साथी
अस्ति नास्ति ओहि करत न बारा । परबत करै पाँव कै छारा
जोर गिरे गढ जावत भए । जे गढ गरब करहिं ते नए

जोगिहि कोह न चाहिय, तस न मोहिं रिस लागि ।
जोग तंत ज्यों पानी, काह करै तेहि आगि ?' ॥३१॥

बसिठन्ह जाइ कही अस बाता । राजा सुनत कोह भा राता
ठावहिं ठाँव कुँवर सब माखे । 'केइ अब लीन्ह जोग, केइ राखे ?
अबहीं बेगिहि करौं सँजोऊ । तस मारहु हत्या नहिं होऊ'
मंत्रिन्ह कहा 'रहौ मन बूझे । पति न होइ जोगिन्ह सौं जूझे
ओहि मारे तौ काह भिखारी । लाज होइ जौ माना हारी
ना भल मुए, न मारे मोखू । दुवौ बात लागै सम दोखू
रहै देहु जौं गढ़ तर मेले । जोगी कित आछैं बिनु खेले ?
आछै देहु जो गढ़ तरे, जनि चालहु यह बात ।
तहँ जो पाहन भख करहिं अस केहिके मुख दाँत' ॥ ३२ ॥

गए बसीठ पुनि बहुरि न आए । राजै कहा बहुत दिन लाए
न जनौं सरग बात दहुँ काहा । काहु न आइ कही फिरि चाहा
पंख न काया, पौन न पाया । केहि बिधि मिलौं होइ कै छाया
सँवरि रकत नैनहिं भरि चूआ । रोइ हँकारेसि माँझी सूआ
परीं जो आँसु रकत कै टूटी । रेंगि चलीं जस बीर-बहूटी
ओही रकत लिखि दीन्ही पाती । सुआ जो लीन्ह चोंच भइ राती
बाँधी कंठ परा जरि काँठा । बिरह क जरा जाइ कित नाठा ?
मसि नैना, लिखनी बरुनि, रोइ रोइ लिखा अकत्थ ।
आखर दहै, न कोइ छुवै, दीन्ह परेवा हत्थ ॥३३॥

कंचन-तार बाँधि गिउ पाती । लेइ गा सुआ जहाँ धनि राती
जैसे कवँल सूर के आसा । नीर कंठ लहि मरत पियासा

बिसरा भोग सेज सुख-बासा। जहाँ भौर सब तहाँ हुलासा
तौ लगि धीर सुना नहि पीऊ। सुना त घरी रहै नहि जीऊ
तौ लगि सुख हिय पेम न जाना। जहाँ पेम कत सुख बिसरामा
अगर चदन सुठि दहै सरीरू। औ भा अगिनि कया कर चीरू
कथा कहानी सुनि जिउ जरा। जानहुँ घीउ बसदुर परा

बिरह न आपु सँभारै, मैल चीर, सिर रूख।
पिउ पिउ करत राति दिन जस पपिहा मुख सूख ॥ ३४ ॥

ततखन गा हीरामन आई। मरत पियास छाह जनु पाई
'भल तुम्ह, सुआ, कीन्ह है फेरा। कहहु कुसल अब पीतम केरा
बाट न जानौं, अगम पहारा। हिरदय मिला न होइ निनारा
मरम पानि कर जान पियासा। जो जल महँ ता कहँ का आसा?'
का रानी यह पूछहु बाता। जिनि कोइ होइ पेम कर राता
'तुम्हरे दरसन लागि बियोगी। अहा सो महादेव मठ जोगी
तुम्ह बसत लेइ तहा सिधाई। देव पूजि पुनि ओहि पहँ आई

दिस्टि बान तस मारेहु घायल भा तेहि ठाँव।
दूसरि बात न बोलै लेइ पदमावति नाँव ॥ ३५ ॥

तुम्ह तौ खेलि मँदिर महँ आई। ओहिक मरम पै जान गोसाई
कहेसि जरै को बारहि बारा। एकहि बार होहुँ जरि छारा
अब धँसि लीन्ह चहै तेहि आसा। पावै साँस कि मरै निरासा'
कहि कै सुआ जो छोडेसि पाती। जानहु दीप छुवत तस ताती
गीउ जो बाँधा कचन-तागा। राता साँव कठ जरि लागा

रोइ रोइ सुआ कहै सो बाता। रकत कै आँसु भयउ मुख राता
'वह तोहि लागि कया सब जारी। तपत मीन, जल देहि पवारी
तोहि कारन वह जोगी भसम कीन्ह तन दाहि।
तू असि निठुर निछोही बात न पूछै ताहि' ॥ ३६ ॥
कहेसि 'सुआ, मो सौं सुनु बाता। चहौं तो आज मिलौ जस राता
हौं जानति हौं अबही काचा। ना जेइ प्रीति रंग थिर राँचा'
पुनि धनि कनक पानि मसि माँगी। उतर लिखत भीजी तन आँगी
'हौं जो गई सिव-मंडप भोरी। तहँवाँ कस न गाँठि तै जोरी?
भा बिसँभार देखि कै नैना। सखिन्ह लाज का बोलौ बैना?
खेलहि मिस मैं चंदन घाला। मकु जागसि तौ देउँ जयमाला
तबहुँ न जागा, गा तू सोई। जागे भेंट, न सोए होई
तौ लगि भुगुति न लेइ सका रावन सिय जब साथ।
कौन भरोसे अब कहौं जीउ पराए हाथ ॥ ३७ ॥
अब जौ सूर गगन चढि आवै। राहु होइ तौ ससि कहँ पावै
बहुतन्ह ऐस जीउ पर खेला। तू जोगी कित आहि अकेला
हौं पुनि इहाँ ऐस तोहि राती। आधी भेंट पिरीतम-पाती
तहुँ जौ प्रीति निबाहै आँटा। भौर न देख केत कर काँटा
होइ पतंग अधरन्ह गहु दीया। लेसि समुद धँसि होइ मरजीया
चातक होइ पुकारु पियासा। पीउ न पानि सेवाति कै आसा
होहि चकोर दिस्टि ससि पाहाँ। औ रवि होहि कवलदल माहाँ
महुँ ऐसै होउँ तोहि कहँ, सकहि तौ ओर निबाहु।
राहु बेधि अरजुन होइ जीतु दुरपदी ब्याहु' ॥ ३८ ॥

राजा इहाँ ऐस तप भूरा। भा जरि बिरह छार कर कूरा
नैन लाइ सो गयउ बिमोही। भा बिनु जिउ, जिउ दीन्हेसि ओही
सुऐ जाइ जब देखा तासू। नैन रकत भरि आए आँसू
सदा पिरीतम गाढ करेई। ओहि न भुलाइ, भूलि जिउ देई
मुआ जिया अस बास जो पावा। पाती देइ मुख बचन सुनावा
गुरू क बचन स्रवन दुइ मेला। 'कीन्हि सुदिस्टि, बेगि चलु चेला
तोहि अलि कीन्ह आप भइ केवा। हौं पठवा गुरु बीच परेवा

आवहु सामि सुलच्छना जीउ बसै तुम्ह नावँ।
नैनहि भीतर पंथ है हिरदय भीतर ठावँ' ॥ ३९ ॥

सुनि पदमावति कै असि मया। भा बसंत, उपनी नइ कया
सुआ क बोल पौन होइ लागा। उठा सोइ, हनुवँत अस जागा
चाँद मिलै कै दीन्हेसि आसा। सहसौ कला सूर परगासा
पाति लीन्हि, लेइ सीस चढावा। दीठि चकोर चंद जस पावा
उठा फूलि हिरदय न समाना। कथा टूक टूक बेहराना
लीन्हे सिंघि साँसा मन मारा। गुरू मछंदरनाथ सँभारा
खोजि लीन्ह सो सरग-दुवारा। बज्र जो मूँदे जाइ उघारा

बाँक चढाव सरग-गढ चढत गयउ होइ भोर।
भइ पुकार गढ ऊपर चढे सेंधि देइ चोर ॥ ४० ॥

राजै सुनि जोगी गढ चढे। पूछै पास जो पंडित पढे
'जोगी गढ जो सेंधि दै आवहि। बोलहु सबद सिद्धि जस पावहि'
कहहि बेद पढि पंडित बेदी। 'जोगि भौंर जस मालति-भेदी'
सेंध जो मन्त्री बोले सोई। 'ऐस जो चोर सिद्ध पै कोई

सिद्ध निसंक रैनि दिन भवँहीं। ताका जहाँ तहाँ अपसवहीं
सिद्ध निडर अस अपने जीवा। खडग देखि कै नावहिं गीवा
सिद्ध अमर, काया जस पारा। छरहिं मरहिं नर जाइ न मारा

छरहीं काज कृस्न कर राजा चढ़ै रिसाइ।
सिध गिध दिस्टि गगन पर, बिनु छर किछु न समाइ ॥४१॥

अबहीं करहु गुदर मिस साजू। चढ़हिं बजाइ जहाँ लगि राजू
चौबिस लाख छत्रपति साजें। छपन कोटि दर बाजन बाजें
देखि कटक औ मैमँत हाथी। चाले रतनसेन कर साथी
'होत आव दल बहुत असूझा। अस जानिय किछु होइहि जूझा
राजा तू जोगी होइ खेला। एही दिवस कहँ हम भए चेला
जहाँ गाढ ठाकुर कहँ होई। संग न छाँडै सेवक सोई
गुरू केर जौं आयसु पावहिं। सौंह होहिं औ चक्र चलावहिं।

आजु करहिं रन भारत सत बाचा देइ राखि।
सत्य देख सब कौतुक, सत्य भरै पुनि साखि' ॥ ४२ ॥

गुरू कहा 'चेला सिध होहू। पेम-बार होइ करहु न कोहू
एहि सेंति बहुरि जूझ नहिं करिए। खडग देखि पानी होइ ढरिए
पानिहि काह खडग कै धारा। लौटि पानि होइ सोइ जो मारा'
राजैं छेंकि धरे सब जोगी। दुख ऊपर दुख सहै बियोगी
नाग-फाँस उन्ह मेला गीवा। हरष न बिसमौ एकौ जीवा
भलेहि आनि गिउ मेली फाँसी। है न सोच हिय, रिस अस नासी
'मैं गिउ फाँद ओहि दिन मेला। जेहि दिन पेम-पंथ होइ खेला

परगट गुपुत सकल महँ पूरि रहा सो नावँ ।
जहँ देखौ तहँ ओही, दूसर नहिं जहँ जावँ ॥ ४३ ॥

जब लगि गुरु हौं अहा न चीन्हा । कोटि अँतरपट बीचहि दीन्हा
जब चीन्हा तब और न कोई । तन मन जिउ जीवन सब सोई
'हौं हौं' करत धोख इतराहीं । जब भा सिद्ध कहाँ परछाहीं ?
मारै गुरू, कि गुरू जियावै । और को मार ? मरै सब आवै
सो पदमावति गुरु, हौं चेला । जोग-तंत जेहि कारण खेला
माँगौ सीस देउँ सह गीवा । अधिक तरौं जौ मारै जीवा
अपने जिउ कर लोभ न मोहीं । पेम-बार होइ माँगौ ओहीं
दरसन ओहि कर दिया जस हौं सो भिखारि पतंग ।
जौ करवत सिर सारै मरत न मोरौं अंग' ॥४४॥

पदमावति कँवला ससि-जोती । हँसै फूल, रोवै सब मोती
जबहिं सुरुज कहँ लागा राहू । तबहि कँवल मन भयउ अगाहू
परगट ढारि सकै नहिं आँसू । घटि घटि माँसु गुपुत होइ नासू
पदमावति सँग सखी सयानी । गनत नखत सब रैनि बिहानी
जानहिं मरम कँवल कर कोई । देखि बिथा बिरहिनि कै रोई
बिरहा कठिन काल कै कला । बिरह न सहै, काल बरु भला
काल काढि जिउ लेइ सिधारा । बिरह-काल मारे पर मारा
तन रावन होइ सुर चढा बिरह भयउ हनुवंत ।
जारे ऊपर जारै चित मन करि भसमंत ॥ ४५ ॥

घरी चारि इमि गहन गरासी । पुनि बिधि हिये जोति परगासी
निमँस ऊभि भरि लीन्हेसि साँसा । भा अधार, जीवन कै आसा

विनवहिं सखी 'छूट ससि राहू । तुम्हरी जोति जोति सब काहू
तू ससि-बदन जगत उजियारी । केइ हरि लीन्ह, कीन्ह अँधियारी
तू गजगामिनि गरब-गहेली । अब कस आस छाँडु तू, बेली
तू हरि लंक हराए केहरि । अब कित हारि करति है हिय हरि
तू कोकिल-बैनी जग मोहा । केइ व्याधा होइ गहा निछोहा ?

कँवल-करी तू पदमिनि, गइ निसि, भयउ बिहान ।
अबहुँ न संपुट खोलसि जब रे उआ जग भानु' ॥ ४६ ॥

भानु-नावँ सुनि कँवल बिगासा । फिरि कै भौंर लीन्ह मधु बासा
सरद-चंद मुख जबहि उघेली । खंजन-नैन उठे करि केली
बिरह न बोल आव मुख ताई । मरि मरि बोल जीउ बरियाई
दवै बिरह दारुन, हिय काँपा । खोलि न जाइ बिरह दुख झाँपा
उदधि-समुद जस तरँग देखावा । चख घूमहिं, मुख बात न आवा
यह सुनि लहरि लहरि पर धावा । भँवर परा, जिउ थाह न पावा
'सखी, आनि बिष देहु तौ मरऊँ । जिउ न पियार, मरै का डरऊँ?

खिनहिं उठै, खिन बूडै अस हिय कँवल सँकेत ।
हीरामनहि बुलावहि, सखी, गहन जिउ लेत' ॥ ४७ ॥

चेरी धाय सुनत खिन धाई । हीरामन लेइ आईं बोलाई ।
जनहुँ बैद ओषद लेइ आवा । रोगिया रोग मरत जिउ पावा
सुनत असीस नैन धनि खोले । बिरह-बैन कोकिल जिमि बोले
कँवलहि बिरह-बिथा जस बाढ़ी । केसर बरन पीर हिय गाढ़ी
कौर दगध का कहौं अपारा । सती सो जरे कठिन अस झारा

परगट गुपुत सकल महँ पूरि रहा सो नावँ ।
जहँ देखौ तहँ ओही, दूसर नहिं जहँ जावँ ॥ ४३ ॥

जब लगि गुरु हौं अहा न चीन्हा । कोटि अँतरपट बीचहिं दीन्हा
जब चीन्हा तब और न कोई । तन मन जिउ जीवन सब सोई
'हौं हौं' करत धोख इतराहीं । जब भा सिद्ध कहाँ परछाहीं ?
मारै गुरू, कि गुरू जियावै । और को मार ? मरै सब आवै
सो पदमावति गुरु, हौं चेला । जोग-तत जेहि कारण खेला
माँगै सीस देउँ सह गीवा । अधिक तरौं जौ मारै जीवा
अपने जिउ कर लोभ न मोही । पेम-बार होइ माँगौं ओही
दरसन ओहि कर दिया जस हौं सो भिखारि पतंग ।
जौ करवत सिर सारै मरत न मोरौं अंग ॥४४॥

पदमावति कँवला ससि-जोती । हँसै फूल, रोवै सब मोती
जबहि सुरुज कहँ लागा राहू । तबहि कँवल मन भयउ अगाहू
परगट टारि सकै नहिं आँसू । घटि घटि माँसु गुपुत होइ नासू
पदमावति सँग सखी सयानी । गनत नखत सब रैनि बिहानी
जानहिं मरम कँवल कर कोई । देखि बिथा बिरहिनि कै रोई
बिरहा कठिन काल कै कला । बिरह न सहै, काल बरु भला
काल काढि जिउ लेइ सिधारा । बिरह-काल मारे पर मारा
तन रावन होइ सर चढा बिरह भयउ हनुवंत ।
जारे ऊपर जारै चित मन करि भसमंत ॥ ४५ ॥

घरी चारि इमि गहन गरासी । पुनि बिधि हिये जोति परगासी
निसँस ऊभि भरि लीन्हेसि साँसा । भा अधार, जीवन कै आसा

हीरामन जो बात यह कही। सूर के गहन चाँद तब गही
'अब जौं जोगि मरै मोहि नेहा। मोहि ओहि साथ धरति गगनेहा
रहै त करौं जनम भरि सेवा। चलै त यह जिउ साथ परेवा
कहौ जाइ अब मोर सँदेसू। तजौ जोग, अब होहु नरेसू
जिनि जानहु हौं तुम्ह सौ दूरी। नैनन्ह माँझ गडी वह सूरी
तुम्ह परसद घटे घट केरा। मोहिं घट जीउ घटत नहि बेरा
तुम्ह कहँ पाट हिय महँ साजा। अब तुम्ह मोर दुहूँ जग राजा

जौं रे जियहिं मिलि गर रहहिं मरहि तो एकै दोउ।
तुम्ह जिउ कहँ जिनि होइ किछु, मोहिं जि होउ सो होउ' ५१

होइ हनुवत पैठ है कोई। लंकादाहु लागु करै सोई
लंका बुझी आगि जौ लागी। यह न बुझाइ आँच बज्रागी।

जहँ लगि चंदन मलयगिरि औ सायर सब नीर।
सब मिलि आइ बुझावहिं बुझै न आगि सरीर ॥ ४८ ॥

हीरामन जौ देखेसि नारी। प्रीति-बेल उपनी हिय-बारी
कहेसि 'कस न तुम्ह होहु दुहेली। अरुझी पेम जो पीतम बेली
प्रीति-बेलि जिनि अरुझै कोई। अरुझे, मुए न छूटै सोई'
पदमावति उठि टेकै पाया। 'तुम्ह हुँत देखौ पीतम छाया।
कहत लाज औ रहै न जीऊ। एक दिसि आगि दुसर दिसि पीऊ
तुम्ह सो मोर खेवक गुरु देवा। उतरौ पार तेही बिधि खेवा
दमनहि नलहि जो हंस मेरावा। तुम्ह हीरामन नावँ कहावा

मूरि सजीवन दूरि है साले सकती बानु।
प्रान मुकुत अब होत है बेगि देखावहु भानु' ॥ ४९ ॥

हीरामन भुइँ धरा लिलाटू। 'तुम्ह रानी जुग-जुग सुख-पाटू
जेहि के हाथ सजीवन मूरी। सो जानिय अब नाहीं दूरी
पिता तुम्हार राज कै भोगी। पूजै बिप्र, मरावै जोगी
पौरि पौरि कोतवार जो बैठा। पेम क लुबुध सुरँग होइ पैठा
चढत रैनि गढ होइगा भोरू। आवत बार धरा कै चोरू
अब लेइ गए देइ ओहि सूरी। तेहि सौं अगाह बिथा तुम्ह पूरी
अब तुम्ह जिउ, काया वह जोगी। कया क रोग जानु पै जोगी

रूप तुम्हार जीउ कै पिंड कमावा फेरि।
आपु हेराइ रहा, तेहि काल न पावै हेरि' ॥ ५० ॥

जोगिहि जबहि गाढ अस परा । महादेव कर आसन टरा
वै हँसि पारवती सौं कहा । जानहुँ सूर गहन अस गहा
आजु चढे गढ ऊपर तपा । राजै गहा सूर तब छपा
जग देखै गा कौतुक आजू । कीन्ह तपा मारै कहँ साजू
पारवती सुनि पाँयन्ह परी । 'चलि, महेस, देखैं एहि घरी'
भेस भाँट भाँटिनि कर कीन्हा । औ हनुवत बीर सँग लीन्हा
आइ गुपुत होइ देखन लागी । वह मूरति कस सती सभागी

कटक असूझ देखि कै राजा गरब करेइ ।
दैउ क दसा न देखै दहुँ का कहँ जय देइ ॥ ३ ॥

लेइ सँदेस सुअटा गा तहाँ । सूरी देहिं रतन कहँ जहाँ
देखि रतन हीरामन रोवा । राजा जिउ लोगन्ह हठि खोवा
देखि रुदन हीरामन केरा । रोवहिं सब, राजा मुख हेरा
माँगहि सब विधिना सौं रोई । कै उपकार छोड़ावै कोई
कहि सँदेस सब विपति सुनाई । बिकल बहुत, किछु कहा न जाई
काढि प्रान बैठी लेइ हाथा । मरै तौ मरौं, जिऔं एक साथा
सुनि सँदेस राजा तब हँसा । प्रान प्रान घट घट महँ बसा

सुअटा भाँट दसौंधी भए जिउ पर एक ठाँव ।
चलि सो जाइ अब देख तहँ जहँ बैठा रह राव ॥ ४ ॥

राजा रहा दिस्टि कै औंधी । रहि न सका तब भाँट दसौंधी
कहेसि मेलि कै हाथ कटारी । पुरुष न आछ बैठ पेटारी
गंध्रबसेन जहाँ रिस-बाढा । जाइ भाँट आगे भा ठाढा
बोला गंध्रबसेन रिसाई । 'कस जोगी, कस भाँट असाई'

(४) भेंट खंड

बाँधि तपा आने जहँ सूरी । जुरे आइ सब सिंघलपूरी
पहिले गुरुहि देइ कहँ आना । देखि रूप सब कोइ पछिताना
लोग कहहिं यह होइ न जोगी । राजकुँवर कोइ अहै बियोगी
काहुहि लागि भयउ है तपा । हियें सो माल, करहु मुख जपा
जस मारै कहँ बाजा तूरू । सूरी देखि हँसा मसूरू
चमके दसन भयउ उजियारा । जो जहँ तहाँ बीजु अस मारा
जोगी केर करहु पै खोजू । मकु यह होइ न राजा भोजू

सब पूछहिं 'कहु जोगी जाति जनम औ नाँव ।
जहाँ ठाँव रोवै केर हँसा सो कहु केहि भाव' ॥ १ ॥

'का पूछहु अब जाति हमारी । हम जोगी औ तपा भिखारी
जोगिहि कौन जाति, हो राजा । गारि न कोह, मारि नहिं लाजा
निलज भिखारि लाज जेइ खोई । तेहि के खोज परै जिनि कोई
जाकर जीउ मरै पर बसा । सूरी देखि सो कस नहिं हँसा ?
आजु नेह सौं होइ निबेरा । आजु पुहुमि तजि गगन बसेरा
आजु कया-पींजर-बँदि टूटा । आजुहि प्रान-परेवा छूटा
आजु नेह सौं होइ निनारा । आजु पेम सँग चला पियारा

आजु अवधि सिर पहुँची किए जाहुँ मुख रात ।
बेगि होहु मोहिं मारहु, जिनि चालहु यह बात' ॥ २ ॥

जोगिहि जबहि गाढ़ अस परा। महादेव कर आसन टरा
वै हँसि पारबती सौं कहा। जानहुँ सूर गहन अस गहा
आजु चढ़े गढ़ ऊपर तपा। राजै गहा सूर तब छपा
जग देखै गा कौतुक आजू। कीन्ह तपा मारै कहँ साजू
पारबती सुनि पाँयन्ह परी। 'चलि, महेस, देखैं एहि घरी'
भेस भाँट भाँटिनि कर कीन्हा। औ हनुवंत बीर सँग लीन्हा
आइ गुपुत होइ देखन लागी। वह मूरति कस सती सभागी

कटक असूझ देखि कै राजा गरब करइ।
दैउ क दसा न देखै दहुँ का कहँ जय देइ ॥ ३ ॥

लेइ सँदेस सुअटा गा तहाँ। सूरी देहि रतन कहँ जहाँ
देखि रतन हीरामन रोवा। राजा जिउ लोगन्ह हठि खोवा
देखि रुदन हीरामन केरा। रोवहिं सब, राजा मुख हेरा
माँगहि सब बिधिना सौं रोई। कै उपकार छोड़ावै कोई
कहि सँदेस सब बिपति सुनाई। बिकल बहुत, किछु कहा न जाई
काढ़ि प्रान बैठी लेइ हाथा। मरै तौ मरौं, जिऔं एक साथा
सुनि सँदेस राजा तब हँसा। प्रान प्रान घट घट महँ बसा

सुअटा भाँट दसौंधी भए जिउ पर एक ठाँव।
चलि सो जाइ अब देख तहँ जहँ बैठा रह राव ॥ ४ ॥

राजा रहा दिस्टि कै औंधी। रहि न सका तब भाँट दसौंधी
कहेसि मेलि कै हाथ कटारी। पुरुष न आछे बैठ पेटारी
गंध्रबसेन जहाँ रिस-बाढ़ा। जाइ भाँट आगे भा ठाढ़ा
बोला गंध्रबसेन रिसाई। 'कस जोगी, कस भाँट असाई'

महादेव रनवट बजावा। सुनि कै सबद बरम्हा चलि आवा
फनिपति फन पतार सौं काढा। अस्टौ कुरी नाग भए ठाढा
तैंतिस कोटि देवता साजा। औ छानवे मेघदल गाजा

नवो नाथ चलि आवहि औ चौरासी सिद्ध।
आजु महाभारत, चले गगन गरुड औ गिद्ध ॥ ५ ॥

भइ अग्या 'को भाँट अभाऊ। बाएँ हाथ देइ बरम्हाऊ
को जोगी अस नगरी मोरी। जो देइ सेंधि चढै गढ चोरी
भाँट नावँ का मारौं जीवा। अबहूँ बोलु नाइ कै गीवा'
'जौ सत पूछसि गध्रब राजा। सत पै कहौं परै नहिं गाजा
भाटहिं काह मीचु सौं डरना। हाथ कटार, पेट हनि मरना
जबूदीप चित्तउर देसा। चित्रसेन बड तहाँ नरेसा
रतनसेन यह ताकर बेटा। कुल चौहान जाइ नहि मेटा

नाँव महापातर मोहि, तेहिक भिखारी ढीठ।
जौं खरि बात कहे रिस लागै, कहै बसीठ' ॥ ६ ॥

ततखन पुनि महेस मन लाजा। भाँट करा होइ बिनवा राजा
'गध्रबसेन, तुँ राजा महा। हौं महेस-मूरति, सुनु कहा
जौ पै बात होइ भलि आगे। कहा चहिय, का भा रिस लागे
राजकुँवर यह, होहि न जोगी। सुनि पदमावति भयउ बियोगी
जबूदीप राजघर बेटा। जो है लिखा सो जाइ न मेटा
तुम्हरहि सुआ जाइ ओहि आना। औ जेहि कर बर कै तेइ माना
पुनि यह बात सुनी सिव-लोका। करसि बियाह धरम है तोका

माँगै भीख खपर लेइ मुए न छाँड़ै बार।
बूझहु, कनक कचोरी भीखि देहु, नहिं मार' ॥ ७ ॥

'ओछहट होहु रे भाँट भिखारी। का तू मोहि देहि असि गारी
को मोहि जोग जगत होइ पारा। जा महँ हेरौं जाइ पवारा
जोगी जती आव जो कोई। सुनतहि त्रासमान भा सोई
भीखि लेहि फिरि मागहिं आगे। ए सब रैनि रहे गढ़ लागे
जस हीछा चाहौं तिन्ह दीन्हा। नाहि बेधि सूरी जिउ लीन्हा
जेहि अस साध होइ जिउ खोवा। सो पतंग दीपक तस रोवा
सुर, नर, मुनि सब गंध्रब देवा। तेहि को गनै? करहिं निति सेवा
मो सौं को सरवरि कर सुनु, रे झूठे भाँट,।
छार होइ जौ चालौं निज हस्तिन कर ठाट' ॥ ८ ॥

जोगी घिरि मेले सब पाछे। उरए माल आए रन काछे
मंत्रिन्ह कहा, 'सुनहु हो राजा। देखहु अब जोगिन्ह कर काजा
हम जो कहा तुम्ह करहु न जूझू। होत आव दर जगत असूझू
कहहिं बात, जोगी अब आए। खिनक माहँ चाहत हैं धाए
पुनि आए का देखै राजा। ईसर केर घंट रन बाजा
जेहि कर गरब करत हुत राजा। सो सब फिरि बैरी होइ साजा
जहवाँ महादेव रन खड़ा। सीस नाइ नृप पायँन्ह परा
'केहि कारन रिस कीजिए हौं सेवक औ चेर।
जेहि चाहिय तेहि दीजिय बारि गोसाईं केर' ॥ ९ ॥

'तूँ गंध्रब राजा जग पूजा। गुन चौदह, सिख देइ को दूजा?
हीरामन जो तुम्हार परेवा। गा चितउर औ कीन्हेसि सेवा

तेहि बोलाइ पूछहु वह देसू । दहुँ जोगी, की तहाँ नरेसू'
राजै जब हीरामन सुना । गयउ रोस, हिरदय महँ गुना
अग्या भई 'बोलावहु सोई । पंडित हुते धोख नहिं होई'
एकहि कहत सहसक धाए । हीरामनहि बेगि लेइ आए
राजै तेहि पूछी हँसि बाता । 'कस तन पियर, भयउ मुख राता

चतुर वेद तुम्ह पंडित पढे सास्त्र औ वेद ।
कहाँ चढाएहु जोगिन्ह, आइ कीन्ह गढभेद' ॥ १० ॥

हीरामन रसना रस खोला । दै असीस, कै अस्तुति बोला
'हौ सेवक तुम्ह आदि गोसाईं । सेवा करौ जिऔं जब ताईं
तेहि सेवक के करमहि दोषू । सेवा करत करै पति रोषू
औ जेहि दोष निदोषहि लागा । सेवक डरा, जीउ लेइ भागा
सप्त दीप फिरि देखेउँ, राजा । जबूदीप जाइ तब बाजा
तहँ चितउरगढ देखेउँ ऊँचा । ऊँच राज सरि तोहि पहूँचा
रतनसेन यह तहाँ नरेसू । एहि आनेउँ जोगी के भेसू

सुआ सुफल लेइ आयउँ तेहि गुन ते मुख रात ।
कया पीत सो तेहि डर सँवरौ बिक्रम बात' ॥ ११ ॥

पहिले भयउ भाँट सत भाखी । पुनि बोला हीरामन साखी
राजहि भा निसचय, मन माना । बाँधा रतन छोरि कै आना
कुल पूछा, चौहान कुलीना । रतन न बाँधे होइ मलीना
देखि कुँवर बर कंचन जोगू । 'अस्ति अस्ति' बोला सब लोगू
मिला सो बंस अंस उजियारा । भा बरोक तब तिलक सँवारा

पच्छिउँ कर बर, पुरुब क बारी। जोरी लिखी न होइ निनारी
मानुष साज लाख मन साजा। होइ सोइ जो विधि उँपराजा
गए जो बाजन बाजत जिउ मारन रन माहँ।
फिरि बाजन तेइ बाजे मंगलचार ओनाहँ॥ १२ ॥

लगन धरा औ रचा बियाहू। सिंघल नेवत फिरा सब काहू
बाजन बाजे कोटि पचासा। भा अनंद सगरौं कैलासा
रतनसेन कहँ कापड आए। हीरा मोति पदारथ लाए
साजा राजा, बाजन बाजे। मदन सहाय दुवौ दर गाजे
औ राता सोने रथ साजा। भएं बरात गोहने सब राजा
बाजत गाजत भा असवारा। सब सिंघल नइ कीन्ह जोहारा
चहुँ दिसि मसियर नखत तराईं। सुरुज चढा चाँद के ताईं
धरती सरग चहूँ दिसि पूरि रहे मसियार।
बाजत आवै मँदिर कहँ होइ मंगलाचार॥ १३ ॥

जहँ सोने कर चित्तर-सारी। लेइ बरात सब तहाँ उँतारी
माँझ सिंघासन पाट सँवारा। दूलह आनि तहाँ वैसारा
होइ लाग जेवनार-पसारा। कनक पत्र पसर पनवारा
सोन-थार मँनि मानिक जरे। राय रंक के आगैं धरे
भइ जेवनार, फिरा खँडवानी। फिरा अरगजा कुँहँकुँह-पानी
फिरा पान, बहुरा सब कोई। लाग बियाह-चार सब होई
गाँठि दुलह दुलहिनि कै जोरी। दुऔ जगत जो जाइ न छोरी
चाँद सुरुज दुऔ निरमल, दुऔ सँजोग अनूप।
सुरुज चाँद सौं भूला, चाँद सुरुज के रूप॥ १४ ॥

दुऔ नाव लै गावहिं बारा। करहिं सो पदमिनि मगलचारा
चाँद के हाथ दीन्ह जयमाला। चाँद आनि सूरुज गिउ घाला
सूरुज लीन्ह, चांद पहिराई। हार नखत तरइन्ह सो पाई
पुनि धनि भरि अजुलि जल लीन्हा। जोवन जनम कत कहँ दीन्हा
कत लीन्ह, दीन्हा धनि हाथा। जोरी गाँठि दुऔ एक साथा
चाँद सुरुज सत भावरि लेहीं। नखत मोति नेवछावरि देहीं
३२३ फिरहि दुऔ सत फेर, घुटै कै। सातहु फेर गाँठि सो एकै

भइ भाँवरि, नेवछावरि, राज चार सब कीन्ह।
दायज कहौं कहाँ लगि, लिखि न जाइ जत दीन्ह ॥१५॥

रतनसेन जब दायज पावा। गध्रबसेन आइ सिर नावा
'मानुस चित्त आन किछु कोई। करै गोसाइँ सोइ पै होई
अब तुम्ह सिंघलदीप-गोसाईं। हम सेवक अहहीं सेवकाई
जस तुम्हार चितउरगढ देसू। तस तुम्ह इहाँ हमार नरेसू
जबूदीप दूरि का काजू ?। सिंघलदीप करहु अब राजू'
रतनसेन विनवा कर जोरी। 'अस्तुति-जोग जीभ कहँ मोरी
तुम्ह गोसाइँ जेइ छार छुडाई। कै मानुस अब दीन्हि बडाई

जौ तुम्ह दीन्ह तौ पावा जिवन जनम सुख-भोग।
नातरु खेह पायँ कै, हौं जोगी केहि जोग?' ॥१६॥

धौराहर पर दीन्हा बासू। सात खड जहवाँ कैलासू
सखी सहमदस सेवा पाई। जनहु चाँद सँग नखत तराई
होइ मडल ससि के चहुँ पासा। ससि सूरहि लेइ चढी अकासा
'चलु सूरुज दिन अथवै जहाँ। ससि निरमल तू पावसि तहाँ'

पदमावति जो सँवारै लीन्हा । पुनिउँ राति दैउ ससि कीन्हा
करि मज्जन तन कीन्ह नहानू । पहिरे चीर, गयउ छपि भानू
रचि पत्रावलि, माँग सेंदूरू । भरे मोति औ मानिक चूरू

पहिरि जराऊ ठाढ़ि भइ, कहि न जाइ तस भाव ।
मानहुँ दरपन गगन भा तेहि ससि तार देखाव ॥१७॥

पदमिनि-गवन हंस गए दूरी । कुंजर लाज मेल सिर धूरी
बदन देखि घटि चंद छपाना । दसन देखि कै बीजु लजाना
खंजन छपे देखि कै नैना । कोकिल छपी सुनत मधु बैना
गीव देखि कै छपा मयूरू । लंक देखि कै छपा सदूरू
भौंहन धनुक छपा आकारा । बेनी बासुकि छपा पतारा
खडग छपा नासिका बिसेखी । अमृत छपा अधर-रस देखी
पहुँचहि छपीं कवँल पौनारी । जंघ छपा कदली होइ बारी

अछरी रूप छपानीं जबहिं चली धनि साजि ।
जावत गरब-गहेली सबै छपीं मन लाजि ॥ १८ ॥

मिलीं गोहने सखी तराईं । लेइ चाँद सूरज पहँ आईं
पारस रूप चाँद देखराई । देखत सूरुज गा मुरछाई
सोरह कला दिस्टि ससि कीन्ही । सहसौ कला सुरुज कै लीन्ही
भा रवि अस्त, तराईं हँसी । सूर न रहा, चाँद परगसी
जोगी आहि, न भोगी होई । खाइ कुरकुटा गा पै सोई
पदमावति जसि निरमल गंगा । तू जो कंत जोगी भिखमंगा
आइ जगावहिं 'चेला जागै । आवा गुरू, पायँ उठि लागै'

भोग विलास सबै किछु पावा। कहाँ जीभ जेहि अस्तुति आवा?
अब तुम आइ अँतरपट साजा। दरसन कहँ न तपावहु राजा
नैन सेराने, भूखि गइ देखे दरस तुम्हार।
नव अवतार आजु भा जीवन सफल हमार' ॥ २४ ॥
हँसि कै राज रजायसु दीन्हा। 'मैं दरसन कारन एव कीन्हा
अपने जोग लागि अस खेला। गुरु भयउँ आपु, कीन्ह तुम्ह चेला
अहक मोरि पुरुषारथ देखेहु। गुरू चीन्हि कै जोग बिसेखेहु
जौ तुम्ह तप साधा मोहि लागी। अब जिनि हिये होहु बैरागी
जो जेहि लागि सहै तप जोगू। सो तेहि के सँग मानै भोगू'
सोरह सहस पदमिनी माँगी। सबै दीन्हि, नहिं काहुहि खाँगी
सब कर मंदिर सोने साजा। सब अपने अपने घर राजा
हस्ति घोर औ कापर सबहि दीन्ह नव साज।
भए गृही औ लखपती घर घर मानहुँ राज ॥ २५ ॥
पदमावति सब सखी बोलाई। चीर पटोर हार पहिराई
सीस सबन्ह के सेंदुर पूरा। औ राते सब अंग सेंदूरा
चंदन अगर चित्र सब भरीं। नए चार जानहु अवतरीं
जनहुँ कँवल सँग फूलीं कूईं। जनहुँ चाँद सँग तरईं ऊईं
'धनि पदमावति, धनि तोर नाहू। जेहि अभरन पहिरा सब काहू
बारह अभरन, सोरह सिंगारा। तोहि सौंह नहि ससि उजियारा
ससि सकलंक रहै नहिं पूजा। तू निकलंक, न सरि कोइ दूजा'
काहू बीन गहा कर, काहू नाद मृदंग।
सबन्ह अनंद मनावा रहसि कूदि एक संग ॥ २६ ॥

पदमावति कह 'सुनहु, सहेली । हौं सो कँवल, तुम कुमुदिनि-बेली
कलस मानि हौं तेहि दिन आई । पूजा चलहु चढ़ावहि जाई'
मँझ पदमावति कर जो नेवानू । जनु परभात परै लखि भानू
आस पास बाजत चौडोला । दुंदुभि, झाँझ, तूर, डफ, ढोला
एक संग सब सोंधे-भरीं । देव-दुवार उतरि भईं खरी
अपने हाथ देव नहवावा । कलस सहस इक घिरित भरावा
पोता मँडप अगर औ चंदन । देव भरा अरगज औ बंदन
कै प्रनाम आगे भई, विनय कीन्हि बहु भाँति ।
रानी कहा 'चलहु घर, सखी, होति है राति' ॥ २७ ॥
भई निसि, धनि जस ससि परगसी । राजै देखि भूमि फिर बसी
भइ कटकई सरद-ससि आवा । फेरि गगन रवि चाहै छावा
सुनि धनि भौंह-धनुक फिर फेरा । काम कटाछन्ह कोरहि हेरा
'जानहु नाहिं पैज, पिय, साँची । पिता सपथ हौं आजु न बाँची
कालिह न होइ, रही महि रामा । आजु करहु रावन संग्रामा
सेन सिंगार महूँ है सजा । गज-गति चाल, अँचल-गति धजा
नैन समुद औ खड़ग नासिका । सरवरि जूझ को मो सहुँ टिका ?
हौं रानी पदमावति मैं जीता रस भोग ।
तू सरवरि करु ता सौं जो जोगी तोहि जोग' ॥ २८ ॥
'हौं अस जोगि जान सब कोऊ । बीर सिंगार जिते मैं दोऊ
उहाँ सामुहें रिपु दल मारौं । इहाँ त काम-कटक तुम्ह पारौं
उहाँ त हय चढ़ि कै दल मडौं । इहाँ त अधर अमिय-रस खडौं
उहाँ त खड़ग नरिंदहि मारौं । इहाँ त बिरह तुम्हार सँघारौं

उहाँ त गज पेलौं होइ केहरि । इहवाँ काम कामिनी-हिय हरि
उहाँ त लूटौं कटक खँधारू । इहाँ त जीतौं तोर सिंगारू
उहाँ त कुंभस्थल गज नावौं । इहाँ त कंचन-कलसहि पावौं'

परै बीच धरहरिया, पेम-राज को टेक ? ।
मानहि भोग छवौ रितु मिलि दूवौ होइ एक ॥ २९ ॥

प्रथम बसंत नवल रितु आई । सुरितु चैत बैसाख सोहाई
चंदन चीर पहिरि धनि अंगा । सेंदुर दीन्ह बिहँसि भरि मंगा
कुसुम हार औ परिमल बासू । मलयागिरि छिरका कैलासू
सौंर सुपेती फूलन डासी । धनि औ कंत मिले सुखबासी
पिउ सँजोग धनि जोबन बारी । भौंर पुहुप सँग करहि धमारी
होइ फाग भलि चाँचरि जोरी । बिरह जराइ दीन्ह जस होरी
धनि ससि सरिस, तपै पिय सूरू । नखत सिंगार होहि सब चूरू

जिन्ह घर कंता रितु भली, आव बसंत जो नित्त ।
सुख भरि आवहिं देवहरै, दुःख न जानै कित्त ॥ ३० ॥

रितु ग्रीषम कै तपनि न तहाँ । जेठ असाढ़ कंत घर जहाँ
पहिरि सुरंग चीर धनि झीना । परिमल मेद रहा तन भीना
पदमावति तन सिअर सुबासा । नैहर राज, कंत-घर पासा
औ बड जूड़ तहाँ सोवनारा । अगर पोति, सुख तने ओहारा
सेज बिछावन सौंर सुपेती । भोग बिलास करहि सुख सेंती
अधर तमोर कपुर भिमसेना । चंदन चरचि लाव तन बेना
भा अनंद सिंघल सब कहूँ । भागवंत कहँ सुख रितु छहूँ

दारिउँ दाख लेहि रस, आम सदाफर डार ।
हरियर तन सुअटा कर जो अस चाखनहार ॥ ३१ ॥
रितु पावस बरसै, पिउ पावा । सावन भादौं अधिक सोहावा
पदमावति चाहति रितु पाई । गगन सोहावन, भूमि सोहाई
कोकिल बैन, पाँति बग छूटी । धनि निसरीं जनु बीरबहूटी
चमक बीजु, बरसै जल सोना । दादुर मोर सबद सुठि लोना
रँग-राती पीतम सँग जागी । गरजे गगन चौंकि गर लागी
सीतल बूँद, ऊँच चौपारा । हरियर सब देखाइ संसारा
हरियर भूमि, कुसुंभी चोला । औ धनि पिउ सँग रचा हिंडोला
पवन झकोरे होइ हरष, लागे सीतल बास ।
धनि जानै यह पवन है, पवन सो अपने बास ॥ ३२ ॥
आइ सरद रितु अधिक पियारी । आसिन कातिक रितु उजियारी
पदमावति भइ पूनिउँ कला । चौदसि चाँद उई सिंघला
सोरह कला सिंगार बनावा । नखत-भरा सूरुज ससि पावा
भा निरमल सब धरति अकासू । सेज सँवारि कीन्ह फुल-बासू
सेत बिछावन औ उजियारी । हँसि हँसि मिलहिं पुरुष औ नारी
सोन-फूल भइ पुहुमी फूली । पिय धनि सौं,धनि पिय सौं भूली
चख अंजन देइ खंजन देखावा । होइ सारस जोरी रस पावा
एहि रितु कंता पास जेहि, सुख तेहि के हिय माहँ ।
धनि हँसि लागै पिउ गरै, धनि-गर पिउ कै बाहँ ॥ ३३ ॥
रितु हेमंत सँग पिएउ पियाला । अगहन पूस सीत सुख काला
धनि औ पिउ महँ सीउ सोहागा । दुहुँन्ह अंग एकै मिलि लागा

मन सौं मन, तन सा तन गहा। हिय सौं हिय, बिच हार न रहा
जानहु चदन लागेउ अगा। चदन रहै न पावै सगा
भोग करहि सुख राजा रानी। उन्ह लेखे सब सिस्टि जुडानी
जूझ दुवौ जोबन सौं लागा। बिच हुँत सीउ जीउ लेइ भागा
दुइ घट मिलि एकै होइ जाहीं। ऐस मिलहि तबहूँ न अघाहीं
हसा केलि करहि जिमि, खूँदहिं कुरलहिं दोउ।
सीउ पुकारि कै पार भा, जस चकई क बिछोउ॥ ३४॥

आइ सिसर रितु, तहाँ न सीऊ। जहाँ माघ फागुन घर पीऊ
सौंर सुपेती मदिर राती। दगल चीर पहिरहि बहु भाँती
घर घर सिंघल होइ सुख भोजू। रहा न कतहुँ दु ख कर खोजू
जहँ धनि पुरुष सीउ नहिं लागा। जानहुँ काग देखि सर भागा
जाइ इद्र सौं कीन्ह पुकारा। हौं पदमावति देस निसारा
एहि रितु सदा सग महँ सोवा। अब दरसन तें मोर बिछोवा
अब हँसि कै ससि सूरहि भेंटा। रहा जो सीउ बीच सो मेटा
भएउ इद्र कर आयसु, बड सताव यह सोइ।
कबहुँ काहु के पीर भइ, कबहुँ काहु के होइ॥ ३५॥

---

(५) नागमती खंड

नागमती चितउर-पथ हेरा । पिउ जो गए पुनि कीन्ह न फेरा
नागर काहु नारि बस परा । तेइ मोहि पिय मो सौं हरा
सुआ काल होइ लेइगा पीऊ । पिउ नहि जात, जात बरु जीऊ
भयउ नरायन बावँन करा । राज करत राजा बलि छरा
करन पास लीन्हेउ कै छदू । बिप्र रूप धरि झिलमिल इंदू
मानत भोग गोपिचँद भोगी । लेइ अपसवा जलधर जोगी
लेइगा कृस्नहि गरुड़ अलोपी । कठिन बिछोह, जिअहिं किमि गोपी?

सारस जोरी कौन हरि, मारि बियाधा लीन्ह ?
झुरि झुरि पींजर हौं भई, बिरह-काल मोहि दीन्ह ॥ १ ॥

पिउ-बियोग अस बाउर जीऊ । पपिहा निति बोलै 'पिउ पीऊ'
अधिक काम दाधै सो रामा । हरि लेइ सुवा गयउ पिउ नामा
बिरह बान तस लाग न डोली । रकत पसीज, भीजि गइ चोली
सूखा हिया, हार भा भारी । हरि हरि प्रान तजहिं सब नारी
खन एक आव पेट महँ साँसा । खनहि जाइ जिउ, होइ निरासा
पवन डोलावहिं, सींचहिं चोला । पहर एक समुझहिं मुख बोला
प्रान पयान होत को राखा ? को सुनाव पीतम कै भाखा ?

आहि जो मारै बिरह कै, आगि उठै तेहि लागि ।
हंस जो रहा सरीर महँ, पाँख जरा, गा भागि ॥ २ ॥

मन सौं मन, तन सौं तन गहा। हिय सौं हिय, बिच हार न रहा
जानहु चंदन लागेउ अंगा। चंदन रहै न पावै संगा
भोग करहिं सुख राजा रानी। उन्ह लेखे सब सिस्टि जुडानी
जूझ दुवौ जोबन सौं लागा। बिच हुँत सीउ जीउ लेइ भागा
दुइ घट मिलि एकै होइ जाहीं। ऐस मिलहिं तबहूँ न अघाहीं

हंसा केलि करहिं जिमि, खूँदहिं कुरलहिं दोउ।
सीउ पुकारि कै पार भा, जस चकई क बिछोउ ॥ ३४ ॥

आइ सिसर रितु, तहाँ न सीऊ। जहाँ माघ फागुन घर पीऊ
सौंर सुपेती मंदिर राती। दगल चीर पहिरहिं बहु भाँती
घर घर सिंघल होइ सुख भोजू। रहा न कतहुँ दुख कर खोजू
जहँ धनि पुरुष सीउ नहि लागा। जानहुँ काग देखि सर भागा
जाइ इंद्र सौं कीन्ह पुकारा। हौं पदमावति देस निसारा
एहि रितु सदा संग महँ सोवा। अब दरसन तें मोर बिछोवा
अब हँसि कै ससि सूरहि भेंटा। रहा जो सीउ बीच सो मेटा

भएउ इंद्र कर आयसु, बड सताव यह सोइ।
कबहुँ काहु के पीर भइ, कबहुँ काहु के होइ ॥ ३५ ॥

हिय हिंडोल अस डोलै मोरा । विरह झुलाइ देइ झकझोरा
बाट असूझ अथाह गँभीरी । जिउ बाउर भा फिरै भँभीरी
जग जल बूड जहाँ लगि ताकी । मोरि नाव खेवक विनु थाकी

परवत समुद अगम विच, बीहड घन वनढाँख ।
किमि कै भेंटौं कंत तुम्ह ? ना मोहि पाँव, न पाँख ॥ ५ ॥

भा भादों दूभर अति भारी । कैसे भरौं रैनि अँधियारी
मँदिर सून पिउ अनतै बसा । सेज नागिनी फिरि फिरि डसा
रहौं अकेलि गहे एक पाटी । नैन पसारि मरौं हिय फाटी
चमक बीजु, घन गरजि तरासा । विरह काल होइ जीउ गरासा
बरसै मघा झकोरि झकोरी । मोरि दुइ नैन चुवैं जस ओरी
धनि सूखै भरे भादौं माहाँ । अबहुँ न आएन्हि सींचेन्हि नाहा
पुरवा लाग भूमि जल पूरी । आक जवास भई तस झूरी

थल जल भरे अपूर सब, धरति गगन मिलि एक ।
धनि जोबन अवगाह महँ दे बूडत पिउ, टेक ॥ ६ ॥

लाग कुवार, नीर जग घटा । अबहूँ आउ, कंत, तन लटा
तोहि देखे, पिउ, पलुहै कया । उतरा चित्त, बहुरि करु मया
चित्रा मित्र मीन कर आवा । पपिहा पीउ पुकारत पावा
उआ अगस्त, हस्ति-घन गाजा । तुरय पलानि चढे रन राजा
स्वाति बूँद चातक मुख परे । समुद सीप मोती सब भरे
सरवर सँवरि हंस चलि आए । सारस कुरलहिं, खँजन देखाए
भा परगास, काँस बन फूले । कंत न [illegible] मूल

'पाट-महादेइ, हिये न हारू। समुझि जीव चित चेतु सँभारू
भौंर कँवल सँग होइ मेरावा। सँवरि नेह मालति पहँ आवा
पपिहै स्वाती सौं जस प्रीती। टेकु पियास, बाँधु मन थीती
धरतिहि जैस गगन सौं नेहा। पलटि आव बरषा रितु मेहा
पुनि बसंत रितु आव नवेली। सो रस, सो मधुकर, सो बेली
जिनि अस जीव करसि, तू बारी। यह तरिवर पुनि उठिहि सँवारी
दिन दस बिनु जल सूखि बिधंसा। पुनि सोइ सरवर, सोई हंसा
मिलहिं जो बिछुरे साजन, अंकम भेंटि गहंत।
तपनि मृगसिरा जे सहैं, ते अद्रा पलुहंत' ॥ ३ ॥

चढा असाढ, गगन घन गाजा। साजा बिरह दुंद दल बाजा
धूम, साम, धौरे घन धाए। सेत धजा बग-पाँति देखाए
खडग-बीजु चमकै चहुँ ओरा। बुंद-बान बरसहिं घन घोरा
ओनई घटा आइ चहुँ फेरी। कंत, उबारु मदन हौं घेरी
दादुर मोर कोकिला, पीऊ। गिरै बीजु, घट रहै न जीऊ
पुष्य नखत सिर ऊपर आवा। हौं बिनु नाह, मँदिर को छावा?
अद्रा लाग, लागि भुइँ लेई। मोहिं बिनु पिउ को आदर देई?
जिन्ह घर कंता ते सुखी, तिन्ह गारौ औ गर्ब।
कंत पियारा बाहिरै, हम सुख भूला सर्ब ॥ ४ ॥

सावन बरस मेह अति पानी। भरनि परी, हौं बिरह झुरानी
लाग पुनरबसु पीउ न देखा। भइ बाउरि, कहँ कंत सरेखा?
रकत कै आँसु परहिं भुइँ टूटी। रेंगि चलीं जस बीरबहूटी
सखिन्ह रचा पिउ सँग हिंडोला। हरियरि भूमि, कुसुंभी चोला

हिय हिंडोल अस डोलै मोरा । बिरह झुलाइ देइ झकझोरा
बाट असूझ अथाह गँभीरी । जिउ बाउर भा फिरै भँभीरी
जग जल बूड जहाँ लगि ताकी । मोरि नाव खेवक बिनु थाकी

परबत समुद अगम बिच, बीहड़ घन बनढाँख ।
किमि कै भेंटौं कंत तुम्ह ? ना मोहि पाँव, न पाँख ॥ ५ ॥

भा भादों दूभर अति भारी । कैसे भरौं रैनि अँधियारी
मँदिर सून पिउ अनतै बसा । सेज नागिनी फिरि फिरि डसा
रहौं अकेलि गहे एक पाटी । नैन पसारि मरौं हिय फाटी
चमक बीजु, घन गरजि तरासा । बिरह काल होइ जीउ गरासा
बरसै मघा झकोरि झकोरी । मोरि दुइ नैन चुवैं जस ओरी
धनि सूखै भरे भादौं माहाँ । अबहुँ न आएन्हि सींचेन्हि नाहा
पुरबा लाग भूमि जल पूरी । आक जवास भई तस झूरी

थल जल भरे अपूर सब, धरति गगन मिलि एक ।
धनि जोबन अवगाह महँ दे बूड़त पिउ, टेक ॥ ६ ॥

लाग कुवार, नीर जग घटा । अबहूँ आउ, कंत, तन लटा
तोहि देखे, पिउ, पलुहै कया । उतरा चित्त, बहुरि करु मया
चित्रा मित्र मीन कर आवा । पपिहा पीउ पुकारत पावा
उआ अगस्त, हस्ति-घन गाजा । तुरय पलानि चढे रन राजा
स्वाति बूँद चातक मुख परे । समुद सीप मोती सब भरे
सरवर सँवरि हंस चलि आए । सारस कुरलहिं, खँजन देखाए
भा परगास, काँस बन फूले । कंत न फिरे, बिदेसहि भूले

विरह-हस्ति तन सालै, घाय करै चित चूर।
वेगि आइ, पिउ, बाजहु, गाजहु होइ सदूर॥ ७॥

कातिक सरद-चंद उजियारी। जग सीतल, हौं विरहै जारी
चौदह करा चाँद परगासा। जनहुँ जरै सब धरति अकासा।
तन मन सेज करै अगिदाहू। सब कहँ चंद भयउ मोहि राहू
चहूँ खंड लागै अँधियारा। जौ घर नाहीं कंत पियारा
अबहूँ, निठुर, आउ एहि बारा। परब देवारी होइ संसारा
सखि झूमक गावैं अँग मोरी। हौं झुरावँ, बिछुरी मोरि जोरी
जेहि घर पिउ सो मनोरथ पूजा। मो कहँ विरह, सवति-दुख दूजा
सखि मानैं तिउहार सब गाइ, देवारी खेलि।
हौं का गावौं कंत बिनु, रही छार सिर मेलि॥ ८॥

अगहन दिवस घटा, निसि बाढी। दूभर रैनि, जाइ किमि गाढी?
अब-धनि विरह दिवस भा राती। जरौं विरह जस दीपक-बाती
काँपै हिया जनावै सीऊ। तौ पै जाइ होइ सँग पीऊ।
घर घर चीर रचे सब काहू। मोर रूप-रँग लेइगा नाहू
पलटि न बहुरा गा जो बिछोई। अबहूँ फिरै, फिरै रँग सोई
बज्र अगिनि विरहिनि हिय जारा। सुलुगि सुलुगि दगधै होइ छारा
यह दुख दगध न जानै कंतू। जोबन जनम करै भसमंतू
पिउ सौं कहेउ सँदेसडा, हे भौंरा, हे काग।
सो धनि विरहै जरि मुई, तेहि क धुआँ हम लाग॥ ९॥

पूस जाड थर थर तन काँपा। सुरुज जाइ लंका-दिसि चाँपा
विरह बाढ, दारुन भा सीऊ। कँपि कँपि मरौं, लेइ हरि जीऊ

कंत कहाँ, लागौं ओहि हियरे । पंथ अपार, सूझ नहिं नियरे
सौंर सपेती आवै जूडी । जानहु सेज हिवचल बूडी
चकई निसि बिछुरै, दिन मिला । हौं दिन राति बिरह कोकिला
रैनि अकेलि साथ नहिं सखी । कैसे जियै बिछोही पखी
बिरह सचान भयउ तन जाडा । जियत खाइ औ मुए न छाँडा

रकत ढुरा माँसु गरा, हाड भयउ सब संख ।
धनि सारस होइ ररि मुई, पीउ समेटहि पंख ॥ १० ॥

लागेउ माघ, परै अब पाला । बिरहा काल भयउ जडकाला
पहल पहल तन रूई झाँपै । हहरि हहरि अधिकौ हिय काँपै
आइ सूर होइ तपु, रे नाहा । तेहि बिनु जाड न छूटै माहा
एहि माहँ उपजै रसमूलू । तूँ सो भौंर, मोर जोवन फूलू
नैन चुवहिं जस महवट नीरू । तेहि बिनु अंग लाग सर-चीरू
टप टप बूँद परहिं जस ओला । बिरह पवन होइ मारै झोला
केहि क सिंगार, को पहिरु पटोरा? । गीउ न हार, रही होइ डोरा

तुम बिनु काँपै धनि हिया, तन तिनउर भा डोल
तेहि पर बिरह जराइ कै चहै उडावा झोल ॥ ११ ॥

फागुन पवन झकोरा बहा । चौगुन सीउ जाइ नहिं सहा
तन जस पियर पात भा मोरा । तेहि पर बिरह देइ झकझोरा
तरिवर झरहिं, झरहिं बन ढाखा । भई ओनत फूलि फरि साखा
करहिं बनसपति हिये हुलासू । मो कहँ भा जग दून उदासू
फागु करहिं सब चाँचरि जोरी । मोहि तन लाइ दीन्हि जस होरी

जौ पै पीउ जरत अस पावा । जरत मरत मोहिं रोप न आव
राति दिवस बस यह जिउ मोरे । लगौं निहोर कंत अब तो
यह तन जारौं छार कै, कहौं कि 'पवन, उड़ाव' ।
मकु तेहि मारग उड़ि परै कंत धरै जहँ पाव ॥ १२
चैत बसंता होइ धमारी । मोहिं लेखे संसार उजार
पंचम विरह पंच सर मारै । रकत रोइ सगरौं बन ढा
बूड़ि उठे सब तरिवर-पाता । भीजि मजीठ, टेसु बन रात
बौरे आम फरै अब लागे । अबहुँ आउ घर, कंत सभाग
सहस भाँव फूलीं बनसपती । मधुकर घूमहिं सँवरि मालत
मोकहँ फूल भए सब काँटे । दिस्टि परत जनु लागहिं चाँटे
फरि जोबन भए नारँग साखा । सुआ-विरह अब जाइ न राखा
घिरिनि परेवा होइ, पिउ, आउ वेगि, परु टूटि ।
नारि पराए हाथ है तोहि बिनु पाव न छूटि ॥ १३ ॥
भा बैसाख तपनि अति लागी । चोआ चीर, चँदन भा आगी
सूरुज जरत हिवंचल ताका । विरह-बजागि सौंह रथ हाँका
जरत बजागिनि करु, पिउ, छाहाँ । आइ बुझाउ, अँगारन्ह माहाँ
तोहि दरसन होइ सीतल नारी । आइ आगि तें करु फुलवारी
लागिउँ जरै, जरै जस भारू । फिरि फिरि भूँजेसि, तजिउँ न बारू
सरवर-हिया घटत निति जाई । टूक टूक होइ कै विहराई
बिहरत हिया करहु, पिउ टेका । दीठि-दवँगरा मेरवहु एका
कँवल जो विगसा मानसर बिनु जल गयउ सुखाइ ।
अबहुँ बेलि फिरि पलुहै जौ पिउ सींचै आइ ॥१४॥

जेठ जरै जग, चलै लुवारा। उठहि बवंडर, परहिं अँगारा
बिरह गाजि हनुवँत होइ जागा। लंका-दाह करै तनु लागा
चारिहु पवन झकोरै आगी। लंका दाहि पलंका लागी
दहि भई साम नदी कालिंदी। बिरह क आगि कठिन अति मंदी
उठै आगि औ आवै आँधी। नैन न सूझ, मरौं दुख-बाँधी
अधजर भइउँ, माँसु तनु सूखा। लागेउ बिरह काल होइ भूखा
माँसु खाइ अब हाडन्ह लागै। अबहुँ आउ, आवत सुनि भागै

गिरि, समुद्र, ससि, मेघ, रबि सहि न सकहिं वह आगि।
मुहमद सती सराहिए, जरै जो अस पिउ लागि ॥१५॥

तपै लागि अब जेठ-असाढ़ी। मोहि पिउ बिनु छाजनि भइ गाढ़ी
तन तिनउर भा, झूरौं खरी। भइ बरखा, दुख आगरि जरी
बंध नाहिं औ कंध न कोई। बात न आव, कहौं का रोई ?
साँठि नाठि, जग बात को पूछा? । बिनु जिउ फिरै मूँज-तनु छूँछा
भई दुहेली टेक बिहूनी। थाँभ नाहि उठि सकै न थूनी
बरसै मेह, चुवहिं नैनाहा। छपर छपर होइ रहि बिनु नाहा
कोरौं कहाँ ठाट नव साजा। तुम बिनु कंत न छाजनि छाजा

अबहूँ मया-दिस्टि करि, नाह निठुर, घर आउ।
मँदिर उजार होत है, नव कै आइ बसाउ ॥ १६ ॥

रोइ गँवाए बारह मासा। सहस सहस दुख एक एक साँसा
तिल तिल बरस बरस परि जाई। पहर पहर जुग जुग न सेराई
सो नहिं आवै रूप मुरारी। जासौं पाव सोहाग सुनारी
साँझ भए झुरि झुरि पथ हेरा। कौनि सो घरी करै पिउ फेरा?

दहि कोइला भइ कत सनेहा। तोला माँसु रही नहि देहा
रकत न रहा, विरह तन गरा। रती रती होइ नैनन्ह ढरा
पायँ लागि जोरै धनि हाथा। जारा नेह, जुड़ावहु, नाथा

बरस दिवस धनि रोइ कै, हारि परी चित झखि।
मानुष घर घर बूझि कै, बूझै निसरी पखि॥ १७॥

भई पुछार, लीन्ह बनवासू। वैरिनि सवति दीन्ह चिलवाँसू
होइ खर बान विरह तनु लागा। जौ पिउ आवै उडहि तौ कागा
हारिल भई पंथ मैं सेवा। अब तहँ पठवौं कौन परेवा?
धौरी पंडुक कहु पिउ नाऊँ। जौं चित रोख न दूसर ठाऊँ
जाहि बया होइ पिउ कँठ लवा। करै मेराव सोइ गौरवा
कोइल भई पुकारति रही। महरि पुकारै 'लेइ लेइ दही'
पेड़ तिलोरी औ जल हंसा। हिरदय पैठि विरह कटनसा

जेहि पखी के निअर होइ कहै विरह कै बात।
सोई पखी जाइ जरि, तरिवर होइ निपात॥ १८॥

कुहुकि कुहुकि जस कोइल रोई। रकत-आँसु घुँघुची बन बोई
भइ करमुखी नैन तन राती। को सेराव? विरहा-दुख ताती
जहँ जहँ ठाढि होइ बनवासी। तहँ तहँ होइ घुँघुचि कै रासी
बूँद बूँद महँ जानहुँ जीऊ। गुंजा गूँजि करै 'पिउ पीऊ'
तेहि दुख भए परास निपाते। लोहू बूडि उठे होई राते
राते बिंब भीजि तेहि लोहू। परवर पाक, फाट हिय गोहूँ
देखौ जहाँ होइ सोइ राता। जहाँ सो रतन कहै को बाता?

नहि पावस ओहि देसरा, नहिं हेवंत वसंत।
ना कोकिल न पपीहरा, जेहि सुनि आवै कंत ॥ १९ ॥

फिरि फिरि रोव, कोइ नहिं डोला। आधी राति विहंगम बोला
'तू फिरि फिरि दाहै सब पाँखी। केहि दुख रैनि न लावसि आँखी'
नागमती कारन कै रोई। 'का सोवै जो कंत-बिछोई
मनचित हुँते न उतरै मोरे। नैन क जल चुकि रहा न मोरे
कोइ न जाइ ओहि सिंघलदीपा। जेहि सेवाति कहँ नैना सीपा
जोगी होइ निसरा सो नाहू। तब हुँत कहा सँदेस न काहू
निति पूछौं सब जोगी जंगम। कोइ न कहै निज बात, विहंगम।
चारिउ चक्र उजार भए, कोइ न सँदेसा टेक।
कहौं बिरह दुख आपन, बैठि सुनहु दँड एक ॥ २० ॥

तासौं दुख कहिए, हो बीरा। जेहि सुनि कै लागै पर-पीरा
को होइ भिउँ अँगवै पर दाहा। को सिंघल पहुँचावै चाहा ?
जहँवाँ कंत गए होइ जोगी। हौं किंगरी भइ झूरि वियोगी
वै सिंगी पूरी, गुरु भेंटा। हौं भइ भसम, न आइ समेटा
कथा जो कहै आइ ओहि केरी। पाँवरि होउँ, जनम भरि चेरी
ओहि के गुन सँवरत भइ माला। अबहुँ न बहुरा उड़िगा छाला
बिरह गुरू, खप्पर कै हीया। पवन अधार रहै सो जीया
हाड भए सब किंगरी, नसैं भईं सब ताँति
रोवँ रोवँ तें धुनि उठै, कहौं बिथा केहि भाँति ? । २१ ॥

पदमावति सौं कहेहु, विहंगम। कंत लोभाइ रही करि संगम
तू घर घरनि भई पिउ हरता। मोहि तन दीन्हेसि जप औ बरता

रावट कनक सो तोकहँ भयऊ । रावट लंक मोहि कै गयऊ
तोहि चैन सुख मिलै सरीरा । मो कहँ हिये दुद दुख पूरा
हमहुँ बियाही सँग ओहि पीऊ । आपुहि पाइ, जानु पर जीऊ
अबहुँ मया करु, करु जिउ फेरा । मोहिं जियाउ कंत देइ मेरा
मोहि भोग सौं काज न, बारी । सौंह दीठि कै चाहनहारी

'सवति न होसि तू बैरिनि, मोर कंत जेहि हाथ ।
आनि मिलाव एक बेर, तोर पाँय मोर माथ' ॥ २२ ॥

रतनसेन कै माइ सुरसती । गोपीचँद जसि मैनावती
आंधरि बूढ़ि होइ दुख रोवा । जीवन रतन कहाँ दहुँ खोवा
जीवन अहा लीन्ह सो काढी । भइ बिनु टेक करै को ठाढी ?
नैन दीठ नहि दिया बराहीं । घर अँधियार पूत जौ नाहीं
को रे चलै सरवन के ठाऊँ । टेक देह औ टेकै पाऊँ
लेइ सो सँदेस बिहंगम चला । उठी आगि सगरौ सिंघला
जाइ बिहगम समुद डफारा । जरे मच्छ, पानी भा खारा

समुद तीर एक तरिवर जाइ बैठ तेहि रूख ।
जौ लगि कहा सँदेस नहिं, नहि पियास नहि भूख ॥ २३ ॥

रतनसेन बन करत अहेरा । कीन्ह ओहीं तरिवर तर फेरा
सीतल बिरिछ समुद के तीरा । अति उतग औ छाँह गँभीरा
तुरय बाँधि कै बैठ अकेला । साथी और करहिं सब खेला
देखत फिरै सो तरिवर-साखा । लाग सुनै पखिन्ह कै भाखा
पखिन्ह महँ सो बिहगम अहा । नागमती जासौ दुख कहा

पूछहि सबै विहगम नामा । अहो मीत, काहे तुम सामा
कहेसि 'मीत, मासक दुइ भए । जबूदीप तहाँ हम गए
नगर एक हम देखा गढ चितउर ओहि नावँ ।
सो दुख कहौं कहाँ लगि, हम दाटे तेहि ठावँ ॥ २४ ॥
जोगी होइ निसरा सो राजा । सून नगर जानहु धुँध बाजा
नागमती है ताकरि रानी । जरी बिरह, भइ कोइल-बानी'
सुनि चितउर-राजा मन गुना । 'बिधि-सँदेस मैं कासौं सुना
को तरिवर पर पंखी-बेसा । नागमती कर कहै सँदेसा ?
कहाँ सो नागमती तैं देखी । कहेसि बिरह जस मनहिं बिसेखी
हौं सोई राजा भा जोगी । जेहि कारन वह ऐसि बियोगी
जस तूँ पखि महूँ दिन भरों । चाहौं कबहि जाइ उडि परों
पखि, आँखि तेहि मारग, लागी सदा रहाहिं ।
कोइ न सँदेसी आवहिं, तेहि क सँदेस कहाहिं' ॥ २५ ॥
'पूछसि कहा सँदेस-बियोगू । जोगी भए न जानसि भोगू
देखेउँ तोरे मँदिर घमोई । मातु तोरि आँधरि भइ रोई
जस सरवन बिनु अंधी अंधा । तस ररि मुई, तोहि चित बँधा
कहेसि मरौं, को काँवरि लेई ? पूत नाहिं, पानी को देई ?
नागमती दुख बिरह अपारा । धरती सरग जरै तेहि झारा
वह तोहि कारन मरि भइ छारा । रही नाग होइ पवन अधारा
माँसु गिरा पाँजर होइ परी । जोगी, अबहूँ पहुँचु लेइ जरी
देखि बिरह-दुख ताकर मैं सो तजा बनवास ।
आयउँ भागि समुद्रतट तबहुँ न छाँडै पास' ॥ २६ ॥

रावट कनक सो तोकहँ भयऊ । रावट लंक मोहि कै गयऊ
तोहि चैन सुख मिलै सरीरा । मो कहँ हिये दुद दुख पूरा
हमहुँ वियाही सँग ओहि पीऊ । आपुहि पाइ जानु पर जीऊ
अबहुँ मया करु, करु जिउ फेरा । मोहिं जियाउ कंत देइ मेरा
मोहि भोग सौ काज न, बारी । सौंह दीठि कै चाहनहारी
सवति न होसि तू बैरिनि, मोर कंत जेहि हाथ ।
आनि मिलाव एक बेर, तोर पाँय मोर माथ' ॥ २२ ॥

रतनसेन कै माइ सुरसती । गापीचँद जसि मैनावती
आँधरि बूढि होइ दुख रोवा । जीवन रतन कहाँ दहुँ खोवा
जीवन अहा लीन्ह सो काढी । भइ बिनु टेक करै को ठाढी ?
नैन दीठ नहिं दिया बराही । घर अँधियार पूत जौ नाहीं
को रे चलै सरवन के ठाऊँ । टेक देइ औ टेकै पाऊँ
लेइ सो सँदेस बिहँगम चला । उठी आगि सगरौ सिंघला
जाइ बिहंगम समुद डफारा । जरे मच्छ, पानी भा खारा
समुद तीर एक तरिवर जाइ बैठ तेहि रूख ।
जौ लगि कहा सँदेस नहिं, नहि पियास नहिं भूख ॥ २३ ॥

रतनसेन बन करत अहेरा । कीन्ह ओही तरिवर तर फेरा
सीतल बिरिछ समुद के तीरा । अति उतंग औ छाँह गँभीरा
तुरय बाँधि कै बैठ अकेला । साथी और करहिं सब खेला
देखत फिरै सो तरिवर-साखा । लाग सुनै पंखिन्ह कै भाखा
पंखिन्ह महँ सो बिहगम अहा । नागमती जासौं दुख कहा

पूछहि सबै बिहंगम नामा । अहो मीत, काहे तुम सामा
कहेसि 'मीत, मासक दुइ भए । जबूदीप वहाँ हम गए
नगर एक हम देखा गढ़ चितउर ओहि नावँ ।
सो दुख कहौं कहाँ लगि, हम दाढे तेहि ठावँ ॥ २४ ॥
जोगी होइ निसरा सो राजा । सून नगर जानहु धुँध बाजा
नागमती है ताकरि रानी । जरी बिरह, भइ कोइल-बानी'
सुनि चितउर-राजा मन गुना । 'बिधि-सँदेस मैं कासौं सुना
को तरिवर पर पखी-बेसा । नागमती कर कहै सँदेसा ?
कहाँ सो नागमती तैं देखी । कहेसि बिरह जस मनहिं बिसेखी
हौं सोई राजा भा जोगी । जेहि कारन वह ऐसि बियोगी
जस तूँ पखि महूँ दिन भरौं । चाहौं कबहिं जाइ उडि परौं
पखि, आँखि तेहि मारग, लागी सदा रहाहि ।
कोइ न सँदेसी आवहि, तेहि क सँदेस कहाहिं' ॥ २५ ॥
'पूछसि कहा सँदेस-बियोगू । जोगी भए न जानसि भोगू
देखेउँ तोरे मँदिर घमोई । मातु तोरि आँधरि भइ रोई
जस सरवन बिनु अंधी अंधा । तस ररि मुई, तोहि चित बँधा
कहेसि मरौं, को काँवरि लेई ? पूत नाहि, पानी को देई ?
नागमती दुख बिरह अपारा । धरती सरग जरै तेहि झारा
वह तोहि कारन मरि भइ छारा । रही नाग होइ पवन अधारा
माँसु गिरा पाँजर होइ परी । जोगी, अबहूँ पहुँचु लेइ जरी
देखि बिरह-दुख ताकर मैं सो तजा बनवास ।
आयउँ भागि समुद्रतट तबहुँ न छाँडै पास' ॥ २६ ॥

नार्ग लिखित मत्थ

रावट कनक सो तोकहँ भयऊ। रावट लंक मोहि कै गयऊ
तोहि चैन सुख मिलै सरीरा। मो कहँ हिये दुंद दुख पूरा
हमहुँ बियाही सँग ओहि पीऊ। आपुहि पाइ,जानु पर जीऊ
अबहुँ मया करु, करु जिउ फेरा। मोहि जियाउ कंत देइ मेरा
मोहिं भोग सौं काज न, बारी। सौंह दीठि कै चाहनहारी

सवति न होसि तू बैरिनि, मोर कंत जेहि हाथ।
आनि मिलाव एक बेर, तोर पाँय मोर माथ' ॥ २२ ॥

रतनसेन कै माइ सुरसती। गोपीचँद जसि मैनावती
आँधरि बूढ़ि होइ दुख रोवा। जीवन रतन कहाँ दहुँ खोवा
जीवन अहा लीन्ह सो काढ़ी। भइ बिनु टेक करै को ठाढ़ी ?
नैन दीठ नहि दिया बराहीं। घर अँधियार पूत जौ नाहीं
को रे चलै सरवन के ठाऊँ। टेक देइ औ टेकै पाऊँ
लेइ सो सँदेस बिहंगम चला। उठी आगि सगरौ सिंघला
जाइ बिहंगम समुद डफारा। जरे मच्छ, पानी भा खारा

समुद तीर एक तरिवर जाइ बैठ तेहि रूख।
जौ लगि कहा सँदेस नहिं, नहि पियास नहि भूख ॥ २३ ॥

रतनसेन वन करत अहेरा। कीन्ह ओही तरिवर तर फेरा
सीतल बिरिछ समुद के तीरा। अति उतंग औ छाँह गँभीरा
तुरय बाँधि कै बैठ अकेला। साथी और करहिं सब खेला
देखत फिरै सो तरिवर-साखा। लाग सुनै पखिन्ह कै भाखा
पखिन्ह महँ सो बिहंगम अहा। नागमती जासौं दुख कहा

पूछहि सबै बिहगम नामा । अहो मीत, काहे तुम सामा
कहेसि 'मीत, मासक दुइ भए । जम्बूदीप तहाँ हम गए
नगर एक हम देखा गढ़ चितउर ओहि नावँ ।
सो दुख कहौं कहाँ लगि, हम दाढे तेहि ठावँ ॥ २४ ॥

जोगी होइ निसरा सो राजा । सून नगर जानहु धुँध बाजा
नागमती है ताकरि रानी । जरी बिरह, भइ कोइल-बानी
सुनि चितउर-राजा मन गुना । 'बिधि-सँदेस मैं कासौं सुना
को तरिवर पर पंखी-बेसा । नागमती कर कहै सँदेसा ?
कहाँ सो नागमती तैं देखी । कहेसि बिरह जस मनहिं बिसेखी
हौं सोई राजा भा जोगी । जेहि कारन वह ऐसि बियोगी
जस तूँ पंखि महूँ दिन भरौं । चाहौं कबहि जाइ उड़ि परौं
पंखि, आखि तेहि मारग, लागी सदा रहाहिं ।
कोइ न सँदेसी आवहि, तेहि क सँदेस कहाहिं' ॥ २५ ॥

'पूछसि कहा सँदेस-बियोगू । जोगी भए न जानसि भोगू
देखेउँ तोरे मँदिर घमोई । मातु तोरि आँधरि भइ रोई
जस सरवन बिनु अंधी अंधा । तस ररि मुई, तोहि चित बंधा
कहेसि मरौं, को काँवरि लेई ? पूत नाहि, पानी को देई ?
नागमती दुख बिरह अपारा । धरती सरग जरै तेहि झारा
वह तोहि कारन मरि भइ छारा । रही नाग होइ पवन अधारा
मासु गिरा पाँजर होइ परी । जोगी, अबहूँ पहुँचु लेइ जरी
देखि बिरह-दुख ताकर मैं सो तजा बनवास ।
आयउँ भागि समुद्रतट तबहुँ न छाँड़ै पास' ॥ २६ ॥

कहि सदेस विहगम चला। आगि लागि नगरी सिंघला
घरी एक राजा गोहरावा। भा अलोप, पुनि दिस्टि न आवा
परी नावँ न देखा पाँखा। राजा रोइ फिरा कै साखा
तन सिंघल, मन चितउर बसा। जिउ विसंभर नागिनि जिमि डसा
वरिस एक तेहि सिंघल भयऊ। भोग विलास करत दिन गयऊ
कँवल उदास जा देखा भँवरा। थिर न रहै अब मालति सँवरा
गध्रबसेन आव सुनि बारा। 'कस जिउ भयउ उदास तुम्हारा
मैं तुम्हही जिउ लावा, दीन्ह नैन महँ वास।
जौ तुम होहु उदास तौ यह काकर कैलास' ॥ २७ ॥
रतनसेन विनवा कर जोरी। 'अस्तुति जोग जीभ नहि मोरी
सहस जीभ जौ होहि गोसाईं। कहि न जाइ अस्तुति जहँ ताईं
काच रहा तुम कचन कीन्हा। तब भा रतन जोति तुम दीन्हा
अब विनती एक करौं, गोसाईं। तौ लगि कया जीउ जब ताईं
आवा आजु हमार परेवा। पाती आनि दीन्ह मोहि, देवा
राज हमार जहाँ चलि आवा। लिखि पठइन अब होइ परावा
उहाँ नियर दिल्ली सुलतानू। होइ जो भोर उठै जिमि भानू
रहहु अमर महि गगन लगि तुम महि लेइ हम्ह आउ।
सीस हमार तहाँ निति जहाँ तुम्हारा पाउ' ॥ २८ ॥
राज सभा पुनि उठी सँवारी। 'अनु विनती, राखिय पति भारी
राजन्ह माहँ होइ जिनि फूटी। घर के भद लक अस टूटी
विरवा लाइ न सूखै दीजै। पावै पानि दिस्टि सो कीजै
आनि रखा तुम्ह दीपक लेसी। पै न रहै पाहुन परदेसी

जाकर राज जहाँ चलि आवा। उहै देस पै वाकहँ भावा
हम्ह तुम्ह नैन घालि कै राखे। ऐसि भाख एहि जीभ न भाखे
दिवस देहु सह कुसल सिधावहि। दीरघ आउ होइ,पुनि आवहिं'
सबहि विचार परा अस, भा गवने कर साज।
सिद्धि गनेस मनावहि, विधि पुरवहु सब काज॥ २९॥

विनय करै पदमावति बारी। 'हौं पिउ, जैसी कुंद नवारी
नागसेर जो है मन तोर। पूजि न सकै बोल सरि मोरे
होइ सदबरग लीन्ह मैं सरना। आगे करु जो कंत, तोहि करना'
गवन चार पदमावति सुना। उठा धसकि जिउ औ सिर धुना
रोवत बारि सो पिता निछोहा। कित बियाहि अस दीन्ह बिछोहा
पुनि पदमावति सखी बोलाईं। सुनि कै गवन मिलै सब आईं
'मिलहु, सखी, हम तहँवा जाहीं। जहाँ जाइ पुनि आउब नाहीं
कंत चलाई का करौं आयसु जाइ न मेटि।
पुनि हम मिलहि कि ना मिलहि, लेहु सहेली भेंटि'॥ ३०॥

धनि रोवत रोवहिं सब सखी। 'हम तुम्ह देखि आपु कहँ झँखी
तुम्ह ऐसी जौ रहै न पाई। पुनि हम काह जो आहिं पराईं
तब तेइ नैहर नाहीं चाहा। जौ ससुरारि होइ अति लाहा
तुम बारी पिउ दुहुँ जग राजा। गरब किरोध ओहि पै छाजा
सब फर फूल ओहि के साखा। चहै सो तूरै, चाहै राखा
आयसु लिहे रहिहु निति हाथा। सेवा करिहु लाइ भुइँ माथा
सोइ पियारी पियहि पिरीती। रहै जो आयसु सेवा जीती'

पत्रा काढ़ि गवन-दिन देखहिं, कौन दिवस दहुँ चाल ।
दिसासूल, चक्र जोगिनी सौंह न चलिए, काल ॥ ३१ ॥

'चलहु चलहु' भा पिउ कर चालू । घरी न देख लेत जिउ कालू
रोवहिं मातु पिता औ भाई । कोउ न टेक जौ कंत चलाई
रोवहिं सब नैहर सिंघला । लेइ बजाइ कै राजा चला
भरीं सखी सब भेंटत फेरा । अंत कंत सौं भयउ गुरेरा
जब पहुँचाइ फिरा सब कोऊ । चला साथ गुन अवगुन दोऊ
औ सँग चला गवन सब साजा । उहै देइ अस पारै राजा
रतन पदारथ मानिक मोती । काढ़ि भँडार दीन्ह रथ जोती

लिखनी लागि जौ लेखै कहै न पारै जोरि ।
अरब, खरब, दस, नील, सँख औ अरबुद पदुम करोरि ॥ ३२ ॥

बोहित भरे चला लेइ रानी । दिस्ट माहँ कोइ और न आनी
आधे समुद ते आये नाहीं । उठी बाउ, आँधी उतराहीं
लहरें उठीं समुद उलथाना । भूला पंथ, सरग नियराना
बोहित चले जो चितउर ताके । भए कुपंथ, लंक दिसि हाँके
बोहित बहे, न मानहिं खेवा । पारि लगावै को करि सेवा
बोहित टूक टूक सब भए । एहु न जाना कहँ चलि गए
भए राजा रानी दुइ पाटा । दूनौ बहे, चले दुइ बाटा

काया जीउ मिलाइ कै मारि किए दुइ खंड ।
तन रोवै धरती परा, जीउ चला बरम्हंड ॥ ३३ ॥

मुरुछि परी पदमावति रानी । कहाँ जीउ, कहँ पीउ, न जानी
जानहु चित्र-मूर्ति गहि लाई । पाटा परी बही तस जाई

जनम न सहा पवन सुकुवारा। तेइ सो परी दुख-समुद अपारा
लछिमी नावँ समुद कै बेटी। तेहि कहँ लच्छि होइ जेहि भेंटी
खेलति अही सहेली सेंती। पाटा जाइ लाग तेहि रेती
कहेसि सहेली 'देखहु पाटा। मूरति एक लागि बहि घाटा'
जौ देखा, तीवइ है साँसा। फूल मुवा, पै मुई न बासा

रंग जो राती प्रेम के, जानहु बीरबहूटि।
आइ बही दधि-समुद महँ, पै रँग गयउ न छूटि ॥ ३४ ॥

लछमी लखन बतीसौ लखी। कहेसि 'न मरै, सँभारहु, सखी
कागर पतरा पेम सरीरा। पवन उड़ाइ परा मँझ नीरा
लहरि झकोर उदधि-जल भीजा। तबहूँ रूप रंग नहिं छीजा'
आपु सीस लेइ बैठी कोरे। पवन डोलावै सखि चहुँ ओरै
बहुरि जो समुझि परा तन जीऊ। माँगेसि पानि बोलि कै पीऊ
पानि पियाइ सखी मुख धोई। पदमिनि जनहुँ कँवल सँग कोई
तब लछिमी दुख पूछा ओही। 'तिरिया, समुझि बात कहु मोही

देखि रूप तोर आगर, लागि रहा चित मोर।
केहि नगरी के नागरी, काह नावँ, धनि तोर?' ॥ ३५ ॥

नैन पसारि देख धनि चेती। देखै काह, समुद कै रेती
आपन कोट न देखेसि तहाँ। पूछेसि, 'तुम्ह हौ को? हौं कहाँ?
कहाँ जगत महँ पीउ पियारा। जो सुमेरु, बिधि गरुअ सँवारा'
कहेन्हि 'न जानहिं हम तोर पीऊ। हम तोहि पाव, रहा नहिं जीऊ
पाट परी आई तुम्ह बही। ऐस न जानहिं दहुँ कहँ अही

तब सुधि पदमावति मन भई । सँवरि बिछोह मुरुछि मरि गई
बाउरि होइ परी पुनि पाटा । 'देहु बहाइ कंत जेहि घाटा
जेहि सिर परा बिछोहा, देहु ओहि सिर आगि ।
लोग कहैं यह सर चढ़ी, हौं सो जरौं पिउ लागि' ॥ ३६ ॥
सती होइ कहँ सीस उघारा । घन महँ बीजु घाव जिमि मारा
सेंदुर जरै आगि जनु लाई । सिर कै आगि सँभारि न जाई
छूटि माँग अस मोति-पिरोई । बारहिं बार जरै जौ रोई
टूटहिं मोति बिछोह जो भरे । सावन-बूँद गिरहिं जनु झरे
भहर भहर कै जोबन बरा । जानहुँ कनक अगिनि महँ परा
अगिनि माँग, पै देइ न कोई । पाहुन पवन पानि सब कोई
खीन लंक टूटी दुखभरी । बिनु रावन केहि बर होइ खरी
रोवत पखि बिमोहे जस कोकिला-अरंभ ।
जाकरि कनकलता सो बिछुरा पीतम खंभ ॥ ३७ ॥
लछिमी लागि बुझावै जीऊ । 'ना मरु बहिन, मिलिहि तोर पीऊ
पीउ पानि, होउ पवन-अधारी । जसि हौं तहूँ समुद कै बारी
मैं तोहि लागि लेवँ खटवाटू । खोजिहि पिता जहाँ लगि घाटू
हौं जेहि मिलौं ताहि बड़ भागू । राजपाट औ देवँ सोहागू'
कहि बुझाइ लेइ मँदिर सिधारी । भइ जेवनार न जेंवै बारी
जेहि रे कंत कर होइ बिछोवा । कहँ तेहि भूख, कहाँ सुख-सोवा
कहाँ सुमेरु, कहाँ वह सेसा । को अस तेहि सौं कहै सँदेसा
लछिमी जाइ समुद पहँ रोइ बात यह चालि ।
कहा समुद 'वह घट मोरें, आनि मिलावौं कालि' ॥ ३८ ॥

राजा जाइ तहाँ वहि लागा । जहाँ न कोइ सँदेसी कागा
'काहि पुकारौं, का पहँ जाऊँ । गाढ़े मीत होइ एहि ठाऊँ
ए गोसाइँ, तू सिरजनहारा । तुइँ सिरजा यह समुद अपारा
सो मूरुख औ बाउर अंधा । तेहि छाँड़ि चित औरहि बंधा
तुइँ जिउ तन मेरवसि देइ आऊ । तुही बिछोवसि, करसि मेराऊ
जानसि सबै अवस्था मोरी । जस बिछुरी सारस कै जोरी
एक मुए ररि मुवै जो दूजी । रहा न जाइ, आउ अब पूजी

दुख सौं पीतम भेंटि कै सुख सौं सोव न कोइ ।
एही ठावँ मन डरपै, मिलि न बिछोहा होइ' ।। ३९ ।।

कहि कै उठा समुद महँ आवा । काढ़ि कटार गीउ महँ लावा
कहा समुद्र, 'पाप अब घटा' । बाम्हन रूप आइ परगटा
तिलक दुवादस मस्तक कीन्हे । हाथ कनक-बैसाखी लीन्हे
मुद्रा स्रवन, जनेऊ काँधे । कनक-पत्र धोती तर बाँधे
पाँवरि कनक जराऊ पाऊँ । दीन्हि असीस आइ तेहि ठाऊँ
'कहसि कुँवर, मोसौं सत बाता । काहे लागि करसि अपघाता
परिहँस मरसि कि कौनिउ लाजा । आपन जीउ देसि केहि काजा?

जिनि कटार गर लावसि, समुझि देखु मन आप ।
सकति जीउ जौं काढ़ै, महा दोष औ पाप' ।। ४० ।।

'को तुम्ह उतर देइ, हो पाँडे । सो बोलै जाकर जिउ भाँडे
जंबूदीप केर हौं राजा । सो मैं कीन्ह जो करत न छाजा
सिंघलदीप राजघर-बारी । सो मैं जाइ बियाही नारी

बहु बोहित दायज उन दीन्हा । नग अमोल निरमर भरि लीन्हा
रतन पदारथ मानिक मोती । हुती न काहु के सपति ओती
चहल, घोड, हस्ती सिंघली । औ सँग कुँवरि लाख दुइ चली
ते गोहने सिंघल पदमिनी । एक सों एक चाहि रुपमनी
पदमावति जग रूपमनि कहँ लगि कहौं दुहेल ।
तेहि समुद्र महँ खोएउँ, हौं का जिऔं अकेल ?' ॥ ४१ ॥

हँसा समुद, होइ उठा अँजोरा । 'जग बूडा सब कहि कहि मोरा
तोर होइ तोहि परै न बेरा । बूझि बिचारि तहूँ केहि केरा'
'अनु, पाँडे, पुरुषहि का हानी । जौ पावौं पदमावति रानी
कहँ अस रहस भोग अब करना । ऐसे जिए चाहि भल मरना
जस यह समुद दीन्ह दुख मोकाँ । देइ हत्या झगरौं सिवलोका'
'तुही एक मैं बाउर भेंटा । जैस राम, दसरथ कर बेटा
तोहि बल नाहिं, मूँदु अब आँखी । लावौं तीर, टेकु बैसाखी'
बाउर अंध प्रेम कर सुनत लुबुधि भा बाट ।
निमिष एक महँ लेइगा पदमावति जेहि घाट ॥ ४२ ॥

लछिमी चचल नारि परेवा । जेहि सत होइ छरै कै सेवा
रतनसेन आवै जेहि घाटा । अगमन होइ बैठि तेहि बाटा
औ भइ पदमावति के रूपा । कीन्हेसि छाहँ जरै जहँ धूपा
देखि सो कँवल भँवर होइ धावा । साँस लीन्ह, वह बास न पावा
निरखत आइ लच्छिमी दीठी । रतनसेन तब दीन्ही पीठी
जौ भलि होति लच्छिमी नारी । तजि महेस कित होत भिखारी ?
पुनि धनि फिरि आगे होइ रोई । 'पुरुष पीठि कस दीन्हि निछोई ?

हौं रानी पदमावति, रतनसेन तू पीउ।
आनि समुद महँ छाँडेहु, अब रोवौ देइ जीउ' ॥ ४३ ॥

मैं हौ सोइ भँवर औ भोजू। लेत फिरौं मालति कर खोजू
का तुइँ नारि बैठि अस रोई। फूल सोइ पै बास न सोई
हौ ओहि बास जीउ बलि देऊँ। और फूल कै बास न लेऊँ
तब हँसि कह राजा 'ओहि ठाऊँ। जहाँ सो मालति लेइ चलु, जाऊँ'
लेइ सो आइ पदमावति पासा। पानि पियावा मरत पियासा
कँवल जो बिहँसि सूर-मुख दरसा। सूरुज कँवल दिस्टि सौं परसा
देखा दरस, भए एक पासा। वह ओहि के, वह ओहि के आसा
पायँ परी धनि पीउ के, नैनन्ह सौं रज मेट।
अचरज भयउ सबन्ह कहँ, भइ ससि कँवलहि भेंट ॥ ४४ ॥

लछिमी सौं पदमावति कहा। 'तुम्ह प्रसाद पाइउँ जो चहा
जौ सब खोइ जाहिं हम दोऊ। जो देखै भल कहै न कोऊ
जे सब कुँवर आए हम साथी। औ जत हस्ति, घोड औ आथी
जौ पावैं, सुख जीवन भोगू। नाहित मरन, भरन दुख रोगू'
तब लछिमी गइ पिता के ठाऊँ। 'जो एहि कर सब बूड सो पाऊँ'
तब सो जरी अम्रृत लेइ आवा। जो मरे हुत तिन्ह छिरिकि जियावा
एक एक कै दीन्ह सो आनी। भा सँतोष मन राजा रानी
आइ मिले सब साथी, हिलि मिलि करहिं अनंद।
भई प्राप्त सुख-संपति, गयउ छूटि दुख-द्वंद ॥ ४५ ॥

दिन दस रहे तहाँ पहुनाई। पुनि भए बिदा समुद सौं जाई
लछिमी पदमावति सौं भेंटी। औ तेहि कहा 'मोरि तू बेटी'

दीन्ह समुद्र पान कर बीरा । भरि कै रतन पदारथ हीरा
और पाँच नग दीन्ह बिसेखे । सरवन सुना, नैन नहिं देखे
एक तौ अमृत, दूसर हंसू । औ तीसर पंखी कर बंसू
चौथ दीन्ह सावक-सादूरू । पाँचवँ परस, जो कंचन-मूरू
तरुन तुरंगम आनि चढाए । जल-मानुष अगुवा सँग लाए

जोरि कटक पुनि राजा घर कहँ कीन्ह पयान ।
दिवसहि भानु अलोप भा, बासुकि इंद्र सकान ॥ ४६ ॥

चितउर आइ नियर भा राजा । बहुरा जीति, इंद्र अस गाजा
बाजन बाजहिं, होइ अँदोरा । आवहिं बहल हस्ति औ घोरा
नागमती कहँ अगम जनावा । गई तपनि बरषा जनु आवा
रही जो मुइ नागिनि जसि तुचा । जिउ पाएँ तन कै भइ सुचा
नव दुग्ग जस केंचुरि गा छूटी । होइ निसरी जनु बीरबहूटी
हुलसि गंग जिमि बाढ़िहि लेई । जोबन लाग हिलोरैं देई
काम-धनुक सर लेइ भइ ठाढी । भागेउ बिरह रहा जो डाढ़ी

पूछहिं सखी सहेलरी, हिरदय देखि अनंद ।
'आजु बदन तोर निरमल, अहै उवा जस चंद' ॥ ४७ ॥

'अब लगि रहा पवन,सखि, ताता । आजु लाग मोहि सीअर गाता
महि हुलसै जस पावस-छाहाँ । तस उपना हुलास मन माहाँ
अब जोबन गंगा होइ बाढा । औटन कठिन मारि सब काढा
हरियर सब देखौं संसारा । नए चार जनु भा अवतारा'
सुनि तेहि रतन राजा कर नाऊँ । भा हुलास सब ठावहिं ठाऊँ

पलटा जनु बरषा-रितु राजा । जस असाढ़ आवै दर साजा
देखि सो छत्र भई जग छाहाँ । हस्ति-मेघ ओनए जग माहाँ
होइ असवार जो प्रथमै मिलै चले सब भाइ ।
नदी अठारह गंडा मिलीं समुद कहँ जाइ ॥ ४८ ॥

बाजत गाजत राजा आवा । नगर चहूँ दिसि बाज बधावा
बिहँसि आइ माता सौं मिला । राम जाइ भेंटी कौसिला
साजे मंदिर बंदनवारा । होइ लाग बहु मंगलचारा
पदमावति कर आव बेवानू । नागमती जिउ महँ भा आनू
जनहुँ छाँह महँ धूप देखाई । तैसइ झार लागि जौ आई
सही न जाइ सवति कै झारा । दुसरे मंदिर दीन्ह उतारा
भई उहाँ चहूँ खंड बखानी । रतनसेन पदमावति आनी
पुहुप गंध संसार महँ, रूप बखानि न जाइ ।
हेम सेत जनु उघरि गा, जगत पात फहराइ ॥ ४९ ॥

बैठ सिंघासन, लोग जोहारा । निधनी निरगुन दरब बोहारा
अगनित दान निछावरि कीन्हा । मँगतन्ह दान बहुत कै दीन्हा
सब कै दसा फिरी पुनि दुनी । दान-डाँग सबहीं जग सुनी
सब दिन राजा दान दिआवा । भइ निसि, नागमती पहँ आवा
नागमती मुख फेरि बईठी । सौंह न करै पुरुष सौं डीठी
ग्रीषम जरत छाँडि जो जाई । सो मुख कौन देखावै आई ?
'तू जोगी होइगा बैरागी । हौं जरि छार भइउँ तोहि लागी
काह हँसौ तुम मोसौं, किएउ और सौं नेह ।
तुम्ह मुख चमकै बीजुरी, मोहिं मुख बरिसै मेह' ॥ ५० ॥

'नागमती तू पहिलि वियाही। कठिन प्रीति दाहै जस दाही
बहुतै दिनन आव जो पीऊ। धनि न मिलै धनि पाहन जीऊ
पाहन लोह पोढ जग दोऊ। तेउ मिलहिं जौ होइ बिछोऊ
कोइ केहु पास आस कै हेरा। धनि ओहि दरस निरास न फेरा'
कठ लाइ कै नारि मनाई। जरी जो बेलि सींचि पलुहाई
जौ भा मेर भयउ रँग राता। नागमती हँसि पूछी बाता
'कहहु, कत, ओहि देस लोभाने। कस धनि मिली, भोग कस माने'
'काह कहौं हौं तोसौं, किछु न हिये तोहि भाव।
इहाँ बात मुख मोसौं, उहाँ जीउ ओहि ठावँ' ॥ ५१ ॥
कहि दुख-कथा जौ रैनि विहानी। भयउ भोर जहँ पदमिनि रानी
भानु देख ससि-बदन मलीना। कँवल-नैन राते, तनु खीना
रैनि नखत गनि कीन्ह विहानू। विकल भई देखा जब भानू
सूर हँसै, ससि रोइ डफारा। टूट आँसु जनु नखतन्ह-मारा
रहै न राखी होइ निसाँसी। 'तहँवा जाहु जहाँ निसि बासी
हौं कै नेह कुआँ महँ मेली। सींचै लाग भुरानी बेली
नैन रहे होइ रहँट क घरी। भरी ते ढारी, छूँछी भरी
सुभर सरोवर हंस चल, घटतहि गए बिछोइ।
कँवल न प्रीतम परिहरै, सूखि पक बरु होइ' ॥ ५२ ॥
'पदमावति तुइँ जीउ पराना। जिउ ते जगत पियार न आना
तुइँ जिमि कवँल बसी हिय माहाँ। हौं होइ अलि बेधा तोहि पाहाँ
मालति-कली भँवर जौ पावा। सो तजि आन फूल कित भावा?
मैं हौं सिंघल कै पदमिनी। सरि न पूज जबु-नागिनी

दाँ सुगध निरमल उजियारी। वह निप-भरी डेरावनि कारी
मोरी वाम भँवर सँग लागहिं। ओहि देखत मानुष डरि भागहि
हाँ पुन्पन्ह कै चितवन दीठी। जेहि के जिउ अस अहीं पईठी

ऊँचे ठावँ जो बैठे, करै न नाचहि सग।
जहाँ सो नागिनि हिरकै करिया करै सो अग'॥ ५३॥

पलुही नागमती कै वारी। सोने फल फूलि फुलवारी
जावत परिख रहे सब दहे। सबै परिख बोलत गहगहे
सारिउँ सुआ महरि कोकिला। रहसत आइ पपीहा मिला
हारिल सबद, महारग सोहावा। काग कुराहर करि सुख पावा
भोग बिलास कीन्ह कै फेरा। बिहँसहि, रहसहिं, करहिं बसेरा
नाचहिं पडुक मोर परेवा। बिफल न जाइ काहु कै सेवा
होइ उजियार, सूर जस तपे। खूसट मुख न देखावै छपे

सग सहेली नागमति आपनि बारी माहँ।
फूल चुनहि, फल तूरहिं, रहसि कूदि सुख-छाहँ॥ ५४॥

जाही जूहीं तेहि फुलवारी। देखि रहस रहि सकी न बारी
दूतिन्ह बात न हिये समानी। पदमावति पहँ कहा सो आनी
'नागमती है आपनि बारी। भँवर मिला रस करै धमारी
सखी साथ सब रहसहिं कूदहिं। औ सिंगार-हार सब गूँथहिं
तुम जो बकावरि तुम्ह सौं भर ना। बकुचन गहै चहै जो करना
नागमती नागेसरि नारी। कँवल न आछै आपनि बारी
जस सेवती गुलाल चमेली। तैसि एक जनि बहू अकेली

'नागमती तू पहिलि बियाही । कठिन प्रीति दाहै जस दाही
बहुतै दिनन आव जो पीऊ । धनि न मिलै धनि पाहन जीऊ
पाहन लोह पोढ जग दोऊ । तेउ मिलहि जौ होइ बिछोऊ
कोइ केहु पास आस कै हेरा । धनि ओहि दरस निरास न फेरा'
कंठ लाइ कै नारि मनाई । जरी जो बेलि सींचि पलुहाई
जौ भा मेर भयउ रँग राता । नागमती हँसि पूछी बाता
'कहहु, कंत, ओहि देस लोभाने । कस धनि मिली, भोग कस माने'
'काह कहौं हौं तोसों, किछु न हिये तोहि भाव ।
इहाँ बात मुख मोसौं, उहाँ जीउ ओहि ठावँ' ॥ ५१ ॥
कहि दुख-कथा जौ रैनि बिहानी । भयउ भोर जहँ पदमिनि रानी
भानु देख ससि-बदन मलीना । कँवल-नैन राते, तनु खीना
रैनि नखत गनि कीन्ह बिहानू । बिकल भई देखा जब भानू
सूर हँसै, ससि रोइ डफारा । टूट आँसु जनु नखतन्ह-मारा
रहै न राखी होइ निसाँसी । 'तहँवा जाहु जहाँ निसि बासी
हौं कै नेह कुआँ महँ मेली । सींचै लाग झुरानी बेली
नैन रहे होइ रहँट क घरी । भरी ते ढारी, छूँछी भरी
सुभर सरोवर हंस चल, घटतहि गए बिछोइ ।
कँवल न प्रीतम परिहरै, सूखि पंक बरु होइ' ॥ ५२ ॥
'पदमावति तुइँ जीउ पराना । जिउ ते जगत पियार न आना
तुइँ जिमि कवँल बसी हिय माहाँ । हौं होइ अलि बेधा तोहि पाहाँ
मालति-कली भँवर जौ पावा । सो तजि आन फूल कित भावा ?
मैं हौं सिंघल कै पदमिनी । सरि न पूज जंबू-नागिनी

ारिउँ दाख न तोरि फुलवारी। देखि मरहि का सूआ सारी ?
ो न सदाफर तुरँज जँभीरा। लागे कटहर बडहर खीरा
वल के हिरदय भीतर केसर। तेहि न सरि पूजै नागेसर
हँ कटहर ऊमर को पूछै ? । बर पीपर का बोलहिं छूँछै
ा फल देखा सोई फीका। गरब न करहि जानि मन नीका

रहु आपनि तू बारी, मो सौं जूझु, न बाजु।
मालति उपम न पूजै बन कर खूझा खाजु' ॥५८॥

ो कटहर बडहर बडबेरी। तोहि असि नाहीं, कोकाबेरी
ाम जाँवु मोर तुरँज जँभीरा। करुई नीम तौ छाँह गँभीरा
रियर दाख ओहि कहँ राखौ। गलगल जाउँ सवति नहि भाखौ
रे कहे होइ मोर काहा ? । फरे विरिछ कोइ ढेल न बाहा
वै सदाफर सदा जो फरई। दारिउँ देखि फाटि हिय मरई
यफर लौंग सोपारि छोहारा। मिरिच होइ जो सहै न भारा
ा सो पान रँग पूज न कोई। विरह जो जरै चून जरि होई

लाजहि बूडि मरसि नहि, ऊभि उठावसि बाँह।
हौं रानी, पिय राजा, तो कहँ जोगी नाह' ॥५६॥

ा पदमिनी मानसर केवा। भँवर मराल करहिं मोरि सेवा
ा-जोग दई हम्ह गढी। औ महेस के माथे चढी
ानै जगत कँवल कै करी। तोहि असि नहिं नागिनि विष-भरी
ई सब लिए जगत के नागा। कोइल भेस न छाँडेसि कागा
भुजइल, हौं हंसिनि भोरी। मोहि तोहि मोति पोत कै जोरी

अब जो सुदरसन कूजा, कित सदबरगै जोग ?
मिला भँवर नागेसरिहि, दीन्ह ओहि सुख-भोग' ॥ ५५ ॥

सुनि पदमावति रिस न सँभारी । सखिन्ह साथ आई फुलवारी
दुवौ सवति मिलि पाट बईठी । हिय विरोध, मुख बातैं मीठी
बारी दिस्टि सुरँग सो आई । पदमावति हँसि बात चलाई
'बारी सुफल अहै तुम्ह रानी । है लाई, पै लाइ न जानी
नागेसर औ मालति जहाँ । सँगतराव नहिं चाही तहाँ
रहा जो मधुकर कँवल-पिरीता । लाइउ आनि करीलहि रीता
जहँ अमिली पाकै हिय माहाँ । तहँ न भाव नौरँग कै छाहाँ
फूल फूल जस फर जहाँ देखहु हिये विचारि ।
आँब लाग जेहि बारी जाँबु काह तेहि बारि' ॥ ५६ ॥

'अनु, तुम कही नीक यह सोभा । पै फल सोइ भँवर जेहि लोभा
साम जाँबु कस्तूरी चोवा । आँब ऊँच, हिरदय तेहि रोवाँ
तेहि गुन अस भइ जाँबु पियारी । लाई आनि माँझ कै वारी
जल बाढे बहि इहाँ जो आई । है पाकी अमिली जेहि ठाईं
तुँ कस पराई बारी दूखी । तजा पानि, धाई मुँह सूखी
उठी आगि दुइ डार अभेरा । कौन साथ तहँ बैरी केरा
जो देखी नागेसर बारी । लागे मरै सब सूआ सारी
जो सरवर-जल बाढै रहै सो अपने ठाँव ।
तजि कै सर औ कुंडहि जाइ न पर-अँबराव' ॥ ५७ ॥

'तुइँ अँबराव लीन्ह का जूरी ? । काहे भई नीम बिप-मूरी
भई बैरि कित कुटिल कटैली । तेंदू टेंटी चाहि कसैली

दारिउँ दाख न तोरि फुलवारी । देखि मरहि का सूआ सारी ?
औ न सदाफर तुरँज जँभीरा । लागे कटहर बडहर गीरा
कँवल के हिरदय भीतर केसर । तेहि न सरि पूजै नागेसर
जहँ कटहर ऊमर को पूछै ? । बर पीपर का बोलहिं छूँछै
जो फल देखा सोई फीका । गरब न करहि आनि मन नीका

रहु आपनि तू बारी, मो सौं जूझु, न बाजु ।
मालति उपम न पूजै बन कर खूझा खाजु' ॥ ५८ ॥

'जो कटहर बडहर बडबेरी । तोहि असि नाहीं, कोकाबेरी
साम जाँबु मोर तुरँज जँभीरा । करुई नीम तो छाँह गँभीरा
नरियर दाख ओहि कहँ राखौं । गलगल जाउँ सवति नहि भाखौं
तोरे कहे होइ मोर काहा ? । फरे बिरिछ कोइ ढेल न बाहा
नवै सदाफर सदा जो फरई । दारिउँ देखि फाटि हिय मरई
जयफर लौंग सोपारि छोहारा । मिरिच होइ जो सहै न झारा
हौं सो पान रँग पूज न कोई । बिरह जो जरै चून जरि होई

लाजहि बूडि मरसि नहि, ऊभि उठावसि बाँह ।
हौं रानी, पिय राजा, तो कहँ जोगी नाह' ॥ ५९ ॥

'हौं पदमिनी मानसर केवा । भँवर मराल करहिं मोरि सेवा
पूजा-जोग दई हम्ह गढी । औ महेस के माथे चढी
जानै जगत कँवल कै करी । तोहि असि नहि नागिनि बिष-भरी
तुइँ सब लिए जगत के नागा । कोइल भेस न छाँडेसि कागा
तू भुजइल, हौं हसिनि भोरी । मोहि तोहि मोति पोत कै जोरी

कचन-करी रतन नग बाना। जहाँ पदारथ सोह न आना
तू तौ राहु, हौं ससि उजियारी। दिनहि न पूजै निसि अँधियारी
ठाढि होसि जेहि ठाईं मसि लागै तेहि ठावँ।
तेहि डर राँध न बैठौं मकु साँवरि होइ जावँ' ॥ ६० ॥
'कवँल सो कौन सोपारी रोठा। जेहि के हिये सहस दस कोठा
रहै न झाँपे आपन गटा। सो कित उघेलि चहै परगटा?
कँवल-पत्र तर दारिउँ, चोली। देखे सूर देसि है खोली
ऊपर राता, भीतर पियरा। जारौं ओहि हरदि अस हियरा
इहाँ भँवर मुख बातन्ह लावसि। उहाँ सुरुज कहँ हँसि बहरावसि
सब निसि तपि तपि मरसि पियासी। भोर भए पावसि पिय बासी
सेजवाँ रोइ रोइ निसि भरसी। तू मोसौं का सरवरि करसी?
सुरुज-किरिन बहरावै, सरवरि लहरि न पूज।
भँवर हिया तोर पावै, धूप देह तोरि भूँज' ॥ ६१ ॥
'मैं हौ कँवल सुरुज कै जोरी। जौ पिय आपन तौ का चोरी
हौं ओहि आपन दरपन लेखौं। करौं सिंगार, भोर मुख देखौं
मोर बिगास ओहिक परगासू। तूँ जरि मरसि निहारि अकासू
हौं ओहि सौं, वह मोसौं राता। तिमिर बिलाइ होत परभाता
कँवल के हिरदय महँ जो गटा। हरि हर हार कीन्ह, का घटा?
जा कर दिवस तेहि पहँ आवा। कारि रैनि कित देखै पावा?
तू ऊमर जेहि भीतर माखी। चाहहिं उड़ै मरन के पाँखी
धूप न देखहि, बिषभरी, अमृत सो सर पाव।
जेहिं नागिनि डस सो मरै, लहरि सुरुज कै आव' ॥ ६२ ॥

'फूल न कवँल भानु बिनु ऊए। पानी मैल होइ जरि छूए
फिरहि भँवर तोरे नयनाहाँ। नीर बिसाइँध होइ तोहि पाहाँ
मच्छ कच्छ दादुर कर बासा। बग अस पंखि बसहि तोहि पासा
जे जे पंखि पास तोहि गए। पानी महँ सो बिसाइँध भए
जौ उजियार चाँद होइ ऊआ। बदन कलंक डोम लेइ छूआ
मोहि तोहि निसि दिन कर बीचू। राहु के हाथ चाँद कै मीचू
सहस बार जौ धोवै कोई। तौहु बिसाइँध जाइ न धोई

काह कहौ ओहि पिय कहँ, मोहि सिर धरेसि अँगारि।
तेहि के खेल भरोसे तुइ जीती, मैं हारि' ॥ ६३ ॥

'तोर अकेल का जीतिउँ हारू। मैं जीतिउँ जग कर सिंगारू
बदन जितिउँ जो ससि उजियारी। बेनी जितिउँ भुअंगिनि कारी
नैनन्ह जितिउँ मिरिग के नैना। कंठ जितिउँ कोकिल के बैना
भौंह जितिउँ अरजुन धनुधारी। गीउ जितिउँ तमचूर, पुछारी
नासिक जितिउँ पुहुप-तिल, सूआ। सूक जितिउँ बेसरि होइ ऊआ
दामिनि जितिउँ दसन दमकाहीं। अधर-रंग जीतिउँ बिंबाहीं
केहरि जितिउँ, लंक मैं लीन्ही। जितिउँ मराल, चाल वै दीन्ही

पुहुप-बास, मलयागिरि निरमल अंग बसाइ।
तू नागिनि आसा-लुबुध डससि काहु कहँ जाइ' ॥ ६४ ॥

'का तोहि गरब सिँगार पराए। अबहीं लेहि लूटि सब ठाएँ
हौ साँवरि, सलोन मोर नैना। सेत चीर, मुख चातक बैना
साँवरि जहाँ लोनि सुठि नीकी। का सरवरि तू करसि जो फीकी'
पदमावति सुनि उतर न सही। नागमती नागिनि जिमि गही

वह ओहि कहँ, वह ओहि कहँ गहा । काह कहाँ तस जाइ न कहा
दुवौ नवल भरि जोबन गाजैं । अछरी जनहुँ अखारे बाजैं
भा बाहुँन बाहुँन सौं जोरा । हिय सौं हिय, कोइ बाग न मोरा

जनहुँ दीन्ह ठगलाडू देखि आइ तस मीचु ।
रहा न कोइ धरहरिया करै दुहुन्ह महँ बीचु ॥ ६५ ॥

पवन स्रवन राजा के लागा । कहेसि लडहि पदमिनि औ नागा
दूनौ सवति साम औ गोरी । मरहिं तौ कहँ पावसि असि जोरी
चलि राजा आवा तेहि बारी । जरत बुझाईं दूनौ नारी
'एक बार जेइ पिय मन बूझा । सो दुसरे सौं काहे क जूझा ?
धूप छाँह दोउ पिय के रंगा । दूनौ मिली रहहि एक संगा'
अस कहि दूनौ नारि मनाईं । बिहँसि दोउ तब कंठ लगाईं
लेइ दोउ संग मँदिर महँ आए । सोन-पलँग जहँ रहे बिछाए

बहु सुगंध, बहु भोग सुख, कुरलहि केलि कराहिं ।
दुहुँ सौं केलि नित मानै, रहस अनँद दिन जाहिं ॥ ६६ ॥

---

(६) राघव चेतन खंड

राघव चेतन चेतन महा। आऊ सरि राजा पहँ रहा
होइ अचेत घरी जौ आई। चेतन कै सब चेत भुलाई
भा दिन एक अमावस सोई। राजै कहा 'दुइज कब होई ?'
राघव के मुख निकसा 'आजू'। पँडितन्ह कहा 'कालिह,महराजू'
राजै दुवौ दिसा फिरि देखा। इन महँ को बाउर, को सरेखा ?
भुजा टेकि पंडित तब बोला। 'छाँडहि देस बचन जौ डोला'
राघव करै जाखिनी-पूजा। चहै सो भाव देखावै दूजा

राघव पूजि जाखिनी, दुइज देखाएसि साँझ।
बेद-पंथ जे नहिं चलहिं ते भूलहिं बन माँझ ॥ १ ॥

पँडितन्ह कहा परा नहिं धोखा। कौन अगस्त समुद जेइ सोखा ?
सो दिन गयउ साँझ भइ दूजी। देखी दुइज घरी वह पूजी
पँडितन्ह राजहि दीन्ह असीसा। 'अब कस यह कंचन औ सीसा
जौ यह दुइज कालिह कै होती। आजु तेज देखत ससि जोती
राघव दिस्टिबंध कलिह खेला। सभा माँझ चेटक अस मेला
एहि कर गुरू चमारिनि लोना। सिखा काँवरू पाढन टोना
दुइज अमावस कहँ जो देखावै। एक दिन राहु चाँद कहँ लावै

राज-बार अस गुनी न चाहिय जेहि टोना कै खोज।
एहि चेटक औ विद्या छला सो राजा भोज' ॥ २ ॥

राघव-चैन जो कचन-रेखा। कसे बानि पीतर अस देखा
अग्या भई, रिसान नरेसू। मारहु नाहिं, निसारहु देसू
झूठ बोलि थिर रहै न रॉचा। पडित सोइ वेद-मत-सॉचा
एहि रे बात पदमावति सुनी। देस निसारा राघव गुनी
ग्यान-दिस्टि धनि अगम बिचारा। भल न कीन्ह अस गुनी निसारा
रानी राघव वेगि हँकारा। सूर-गहन भा लेहु उतारा
बाम्हन जहाँ दच्छिना पावा। सरग जाइ जौं होइ बोलावा

आवा राघव चेतन, धौराहर के पास।

ऐस न जाना ते हियै, बिजुरी बसै अकास ॥ ३ ॥

पदमावति जो झरोखे आई। निहकलक ससि दीन्ह दिखाई
ततखन राघव दीन्ह असीसा। भयउ चकोर चदमुख दीसा
कँकन एक कर काढि पवारा। काढत हार टूट औ मारा
पदमावति हँसि दीन्ह झरोखा। जौ यह गुनी मरै, मोहिं दोखा
सबै सहेली देखै धाई। 'चेतन चेतु' जगावहि आई
चेतन परा, न आवै चेतू। सबै कहा 'एहि लाग परेतू'
कोई कहै आहि सनिपातू। कोई कहै कि मिरगी बातू

'की तोहि दीन्ह काहु किछु, की रे डसा तोहि सॉप?।

कहु सचेत होइ चेतन, देह तोरि कस कॉप' ॥ ४ ॥

भयउ चेत, चेतन चित चेता। नैन झरोखे, जीउ सँकेता
पुनि जो बोला मति बुधि खोवा। नैन झरोखा लाए रोवा
बाउर बहिर सीस पै धुना। आपनि कहै, पराइ न सुना
जानहु लाई काहु ठगोरी। खन पुकार, खन बातें बौरी

'हाँ रे ठगा एहि चितउर माहाँ । का सौं कहौं, जाउँ केहि पाहाँ ?
यह राजा सठ बड़ हत्यारा । जेइ राखा अस ठग बटपारा
ना कोइ बरज, न लाग गोहारी । अस एहि नगर होइ बटपारी

दिस्टि दीन्ह ठगलाड़, अलक-फांस परे गीउ ।
जहा भिखारि न बाचै, तहाँ बाच को जीउ ? ॥ ५ ॥

कित धौराहर आइ झरोखे ? लेइ गइ जीउ दच्छिना धोखे
तेइ हुँकारि मोहि कंकन दीन्हा । दिस्टि जो परी जीउ हरि लीन्हा'
मरसिन्ह कहा 'चेतसि निसँभारा । हिये चेतु जेहि जासि न मारा
जौ कोइ पावै आपन माँगा । ना कोइ मरै, न काहू खाँगा
वह पदमावति आहि अनूपा । बरनि न जाइ काहु के रूपा
तुम्ह अस बहुत बिमोहित भए । धुनि धुनि सीस जीउ देइ गए
बहुतन्ह दीन्ह नाइ कै गीवा । उतर देइ नहि, मारै जीवा

कोइ माँगै नहि पावै, कोइ माँगै बिनु पाव ।
तू चेतन औरहि समुझावै, तो कहँ को समुझाव'? ॥ ६ ॥

भयउ चेत, चित चेतन चेता । 'बहुरि न आइ सहौं दुख एता
रोवत आइ परे हम जहाँ । रोवत चले, कौन सुख तहाँ ?
जहाँ रहे ससो जिउ केरा । कौन रहनि ? चलि चलै सबेरा
अब यह भीख तहाँ होइ माँगौं । देइ एत जेहि जनम न खाँगौं
अस कंकन जौ पावौं दूजा । दारिद हरै, आस मन पूजा
दिल्ली नगर आदि तुरकानू । जहाँ अलाउदीन सुलतानू
सोन ढरै जेहि के टकसारा । बारह बानी चलै दिनारा

जो जो मंदिर पदमिनि लेखी । सुना जो कँवल कुमुद अस देखी
तब कह अलाउदीं जग-सूरू । 'लेउँ नारि चितउर कै चूरू
जौ वह पदमिनि मानसर, अलि न मलिन होइ जात ।
चितउर महँ जो पदमिनी फेरि उहै कहु बात' ॥ १२ ॥
'ए जगसूर, कहौं तुम्ह पाहाँ । और पाँच नग चितउर माहाँ
एक हंस है पखि अमोला । मोती चुनै, पदारथ बोला
दूसर नग जो अमृत बसा । सो विष हरै नाग कर डसा
तीसर पाहन परस पखाना । लोह छुए होइ कंचन-बाना
चौथ अहै सादूर अहेरी । जो वन हस्ति धरै सब घेरी
पाँचवँ नग सो तहाँ लागना । राजपंखि पेखा गरजना
हरिन रोझ कोइ भागि न बाँचा । देखत उडै सचान होइ नाचा
नग अमोल अस पाँचौ भेंट समुद ओहि दीन्ह ।
इसकंदर जो न पावा सो सायर धँसि लीन्ह' ॥ १३ ॥
पान दीन्ह राघव पहिरावा । दस गज हस्ति घोड सो पावा
औ दूसर कंकन कै जोरी । रतन लाग ओहि बत्तिस कोरी
लाख दिनार देवाई जेंवा । दारिद हरा समुद कै सेवा
'हौं जेहि दिवस पदमिनी पावौं । तोहि राघव, चितउर बैठावौं
पहिले करि पाँचौ नग मूठी । सो नग लेउँ जो कनक-अँगूठी
सरजा बीर पुरुष बरियारू । ताजन नाग, सिंह असवारू'
दीन्ह पत्र लिखि, बेगि चलावा । चितउर-गढ राजा पहँ आवा
राजै पत्रि बँचावा, लिखी जो करा अनेग ।
सिंघल कै जो पदमिनी, पठै देहु तेहि बेग ॥ १४ ॥

सुनि अस लिखा उठा जरि राजा । जानौं दैउ तड़पि घन गाजा
'का मोहि सिंह देखावसि आई । कहौं तौ सारदूल धरि खाई
भलेहि साह पुहुमीपति भारी । माँग न कोइ पुरुष कै नारी
जौ सो चक्कवै ताकहँ राजू । मँदिर एक कहँ आपन साजू'
'राजा, अस न होहु रिस-राता । सुनु होइ जूड, न जरि कहु बाता
बादसाह कहँ ऐस न बोलू । चढ़ै तौ परै जगत महँ डोलू
सूरहि चढ़त न लागहि बारा । तपै आगि जेहि सरग पतारा
तासौं कौन लड़ाई ? बैठहु चितउर खास ।
ऊपर लेहु चँदेरी, का पदमिनि एक दासि ?' ॥ १५ ॥

'जौ पै घरनि जाइ घर केरी । का चितउर, का राज चँदेरी ?
जिउ न लेइ घर कारन कोई । सो घर देइ जो जोगी होई
हौं रनथँभउर-नाह हमीरू । कलपि माथ जेइ दीन्ह सरीरू
हौं सो रतनसेन सक-बंधी । राहु बेधि जीता सैरंधी
हनुवँत सरिस भार जेइ काँधा । राघव सरिस समुद जो बाँधा
बिक्रम सरिस कीन्ह जेइ साका । सिंघलदीप लीन्ह जौ ताका
जौ अस लिखा भयउँ नहिं ओछा । जियत सिंघ कै गह को मोछा ?
दरब लेइ तौ मानौं, सेव करौं गहि पाउ ।
चाहै जौ सो पदमिनी सिंघलदीपहि जाउ' ॥ १६ ॥

'बोलु न, राजा, आपु जनाई । लीन्ह देवगिरि और छिताई
सातौं दीप राज सिर नावहिं । औ सँग चली पदमिनी आवहिं
जेहि कै सेव करै संसारा । सिंघलदीप लेत कित बारा ?
जिनि जानसि यह गढ़ तोहि पाहीं । ताकर सबै, तोर किछु नाहीं

गढ तस सजा जौ चाहै कोई । वरिस बीस लगि खाँग न होई
बाँके चाहि बाँक गढ कीन्हा । औ सब कोट चित्र कै लीन्हा
बैठे धानुक कँगुरन कँगुरा । भूमि न आँटी अँगुरन अँगुरा
औ बाँधे गढ गज मतवारे । फाटै भूमि होहिं जौं ठारे
बिच बिच बुर्ज बने चहुँ फेरी । बाजहिं तबल, ढोल औ भेरी

भा गढ राज सुमेरु जस, सरग छुवै पै चाह ।
समुद न लेखे लावै, गग सहसमुख काह ? ॥ २२ ॥

बादशाह हठि कीन्ह पयाना । इद्र-भँडार डोल, भय माना
होत पयान कटक सो आवा । आइ साह चितउर नियरावा
राजा राव देख सब चढा । आव कटक सब लोहे-मढा
चहुँ दिसि दिस्टि परा गजजूहा । साम-घटा मेघन्ह अस रूहा
चढि धौराहर देखहि रानी । धनि तुईं अस जाकर सुलतानी
की धनि रतनसेन तुईं राजा । जा कहँ तुरुक कटक अस साजा
बैरख ढाल फेरि परछाहीं । रैनि होति आवै दिन माहीं

अधकूप भा आवै, उडत आव तस छार ।
ताल तलावा पोखर धूरि भरी जेवनार ॥ २३ ॥

राजै कहा 'करहु जो करना । भयउ असूझ, सूझ अब मरना'
जहँ लगि राज साज सब होऊ । ततखन भयउ सँजोउ सँजोऊ
बाजे तबल अकूत जुझाऊ । चढे कोपि सब राजा राऊ
असु-दल गज-दल दूना साजे । औ घन तबल जुझाऊ बाजे
माथे मुकुट, छत्र सिर साजा । चढा बजाइ इद्र अस राजा

आगे रथ सेना सब ठाढी। पाछे धुजा मरन कै काढी
चढा बजाइ चढा जस इंदू। देवलोक गोहने भए हिंदू
देखि अनी राजा कै जग होइ गयउ असूझ।
दहुँ कस होने चाहै चाँद सूर के जूझ॥ २४॥
इहाँ राज अस सेन बनाई। उहाँ साह कै भई अवाई
अगिले दौरे आगे आए। पछिले पाछ कोस दस छाए
साह आइ चितउरगढ बाजा। हस्ती सहस बीस सँग साजा
ओनइ आए दूनौ दल साजे। हिंदू तुरुक दुवौ रन गाजे
दुवो समुद दधि उदधि अपारा। दूनौ मेरु खिखिंद पहारा
भा सग्राम न भा अस काऊ। लोहे दुहुँ दिसि भए अगाऊ
सीस कंध कटि कटि भुइँ परे। रुहिर सलिल होइ सायर भरे
काहू साथ न तन गा, सकति मुए सब पोखि।
ओछ पूर तेहि जानब, जो थिर आवत जोखि॥ २५॥
अथवा दिवस, सूर भा बासा। परी रैनि, ससि उवा अकासा
चाँद छत्र देइ बैठा आई। चहुँ दिसि नखत दीन्ह छिटकाई
नखत अकासहि चढे दिपाहीं। टुटि टुटि लूक परहिं, न बुझाहीं
परहिं सिला जस परै बजागी। पाहन पाहन सौं उठ आगी
गोला परहिं, कोल्हु ढरकाहीं। चूर करंत चारिउ दिसि जाहीं
ओनई घटा बरस झरि लाई। ओला टपकहिं, परहिं बिछाई
तुरुक न मुख फेरहि गढ लागे। एक मरै, दूसर होइ आगे
परहिं बान राजा के, सकै को सनमुख काढि ?
ओनई सेन साह कै रही भोर लगि ठाढि॥ २६॥

भयउ विहानु, भानु पुनि चढा । सहसहु करा दिवस विधि गढा
भा धावा, गढ कीन्ह गरेरा । कोपा कटक लाग चहुँ फेरा
छेंका कोट जोर अस कीन्हा । घुसि कै सरग सुरँग तिन्ह दीन्हा
गरगज बाँधि कमानैं धरीं । वज्र-आगि मुख दारू भरीं
अस्ट धातु के गोला छूटहि । गिरहिं पहार चून होइ फूटहिं
एक बार सब छूटहिं गोला । गरजै गगन, धरति सब डोला
फूटहिं कोट फूट जनु सीसा । ओदरहिं बुरुज जाहिं सब पीसा

लंका-रावट जस भई दाह परी गढ सोइ ।
रावन लिखा जरै कहँ, कहहु अजर किमि होइ ॥ २७ ॥

राजगीर लागे गढ थवई । फूटै जहाँ सँवारहिं सवई
सौ सौ मन के बरसहिं गोला । बरसहि तुपक तीर जस ओला
जानहुँ परहि सरग हुत गाजा । फाटै धरति आइ जहँ बाजा
सबै कहा अब परलै आई । धरती सरग जूझ जनु लाई
तबहूँ राजा हिये न हारा । राज-पौरि पर रचा अखारा
सोह साह कै बैठक जहाँ । समुहें नाच करावै तहाँ
तब वितव सुभर धन-तारा । बाजहिं सबद होइ झनकारा

जग-सिंगार मनमोहन पातुर नाचहि पाँच ।
बादसाह गढ छेंका, राजा भूला नाच ॥ २८ ॥✓

जहँवाँ सोंह साह कै दीठी । पातुरि फिरत दीन्हि तहँ पीठी
देखत साह सिंघासन गूँजा । कब लगि मिरिग चाँद तोहि भूजा
छाँडहि बान जाहिं उपराहीं । का तैं गरब करसि इतराही ?
बोलत बान लाख भए ऊँचे । कोइ कोट, कोइ पौरि पहूँचे

जहाँगीर कनउज कर राजा । ओहि क बान पातुरि के बाजा
लागा बान, जाँघ तस नाचा । जिउ गा सरग, परा भुइँ साँचा
उहमा नाच, नचनिया मारा । रहसे तुरुक बजाइ कै तारा

जो गढ साजै लाख दस, कोटि उठावै कोट ।
बादसाह जब चाहै छपै न कौनिउ ओट ॥ २६ ॥

आठ बरिस गढ छेंका रहा । धनि सुलतान, कि राजा महा
आइ साह अँबराव जो लाए । फरे झरे पै गढ नहिं पाए
ौं तोरौं तौ जौहर होई । पदमिनि हाथ चढै नहि सोई
एहि बिधि ढील दीन्ह तब ताईं । दिल्ली तें अरदासैं आईं
ाछिउँ हरेव दीन्हि जो पीठी । सो अब चढा सौंह कै दीठी
जिन्ह भुइँ माथ, गगन तेइ लागा । थाने उठे, आव सब भागा
हाँ साह चितउरगढ छावा । इहाँ देस अब होइ परावा

जिन्ह जिन्ह पथ न तृन परत, बाढे बेर बबूर ।
निसि अँधियारी जाइ तब बेगि उठै जौ सूर ॥ ३० ॥

ना साह अरदासैं पढी । चिता आन आनि चित चढी
इ सौं अरुझि जाइ तब छूटै । होइ मेराव, कि सो गढ टूटै
हन कर रिपु पाहन हीरा । बेधौं रतन पान देइ बीरा
ाजा सेंती कहा यह भेऊ । पलटि जाहु अब मानहु सेऊ
तोहि सौं पदमिनि नहिं लेऊँ । चूरा कीन्ह छाँडि गढ देऊँ
ाजा पलटि सिंघ चढि गाजा । अग्या जाइ कही जहँ राजा
बहूँ हिये समुझु, रे राजा । बादसाह सौं जूझ न छाजा

हैं जो पाँच नग तो पहँ लेइ पाँचौं कहँ भेंट ।

मकु सो एक गुन मानै सब ऐगुन धरि मेट' ॥ ३१ ॥

'अनु सरजा को मेटै पारा । बादसाह बड अहै तुम्हारा
ऐगुन मेटि सकै पुनि सोई । औ जो कीन्ह चहै सो होई
नग पाँचौ देइ देउँ भँडारा । इसकदर सौं बाँचै दारा
जौं यह बचन त माथे मोरे । सेवा करौं ठाढ कर जोरे
पै बिनु सपथ न अस मन माना । सपथ बोल बाचा-परवाँना
खंभ जो गरुअ लीन्ह जग भारू । तेहि क बोल नहि टरै पहारू'
'नाव जो माँझ भार हुँत गीवा' । सरजै कहा 'मद वह जीवा'

सरजै सपथ कीन्ह छल बैनहि मीठे मीठ ।

राजा कर मन माना, माना तुरत बसीठ ॥ ३२ ॥

हंस कनक पींजर-हुँत आना । औ अमृत, नग परस-पखाना
सो बसीठ सरजा लेइ आवा । बादसाह कहँ आनि मेरावा
'कालिह आव गढ ऊपर भानू । जो रे धनुक, सौंह होइ बानू'
पान बसीठ मया करि पावा । लीन्ह पान, राजा पहँ आवा
'जस हम भेंट कीन्ह गा कोहू । सेवा माँझ प्रीति औ छोहू
कालिह साह गढ देखै आवा । सेवा करहु जैस मन भावा
गुन सौं चलै जो बोहित बोझा । जहँवाँ धनुक बान तहँ सोझा'

भा आयसु अस राजघर बेगि दै करहु रसोइ ।

ऐस सुरस रस मेरवहु जेहि सौं प्रीति-रस होइ ॥ ३३ ॥

जत परकार रसोइ बखानी । साह जिंवावहि कहँ सब आनी
जेवाँ साह जो भयउ बिहाना । गढ देखै गवना सुलताना

कवँल सहाय सूर सँग लीन्हा । राघव चेतन आगे कीन्हा
ततखन आइ बिवाँन पहूँचा । मन ते अधिक, गगन तें ऊँचा
उघरीं पवँरि, चला सुलतानू । जानहु चला गगन कहँ भानू
आजु पवँरि-मुख भा निरमरा । जौं सुलतान आइ पग धरा
जनहुँ उरेह काटि सब काढी । चित्र क मूरति बिनवहि ठाढी

लाखन बैठ पवँरिया जिन्ह तें नवहिं करोरि ।
तिन्ह सब पवँरि उघारे, ठाढ भए कर जोरि ॥ ३४ ॥

सातौं पँवरी कनक-केवारा । सातौं पर बाजहि घरियारा
सात रंग तिन्ह सातौं पँवरी । तब तिन्ह चढै फिरै नौ भँवरी
खँड खँड साज पलँग औ पीढी । जानहुँ इन्द्रलोक कै सीढी
कनक-छत्र सिंघासन साजा । पैठत पँवरि मिला लेइ राजा
बादसाह चढि चितउर देखा । सब संसार पाँव तर लेखा
रतन पदारथ नग जो बखाने । घूरन्ह माँह देख छहराने
मँदिर मँदिर फुलवारी बारी । बार बार बहु चित्र सँवारी

पाँसासारि कुँवर सब खेलहिं, गीतन्ह स्रवन ओनाहि ।
चैन चाव तस देखा जनु गढ छेंका नाहिं ॥३५॥

देखत साह कीन्ह तहँ फेरा । जहँ मंदिर पदमावति केरा
आस पास सरवर चहुँ पासा । माँझ मँदिर जनु लाग अकासा
कनक सँवारि नगन्ह सब जरा । गगन चंद जनु नखतन्ह भरा
सरवर चहुँ दिसि पुरइन फूली । देखत बारि रहा मन भूली
कुँवरि सहस दस बार अगोरे । दुहुँ दिसि पँवरि ठाढि कर जोरे

सारदूल दुहुँ दिसि गढ़ि काढ़े । गलगाजहिं जानहुँ ते ठाढ़े
जावत कहिए चित्र कटाऊ । तावत पँवरिन्ह बने जड़ाऊ
माह मँदिर अस देखा जनु कैलास अनूप ।
जाकर अस धौराहर सो रानी केहि रूप ॥ ३६ ॥
नाँघत पँवरि गए खँड साता । सतएँ भूमि बिछावन राता
आँगन साह ठाढ़ भा आई । मँदिर छाँह अति सीतल पाई
रानी धौराहर उपराहीं । करै दिस्टि नहि तहाँ तराहीं
सखी सरेखी साथ बईठी । तपै सूर, ससि आव न दीठी
राजा सेव करै कर जोरे । आजु साह घर आवा मोरे
नट नाटक, पातुरि औ बाजा । आइ अखाड माहँ सब साजा
परगट कह राजा सौं बाता । गुपुत प्रेम पदमावति राता
गीत नाद अस धधा, दहक बिरह कै आँच ।
मन कै डोरि लागि तहँ, जहँ सो गहि गुन खाँच ॥ ३७ ॥
गोरा बादल राजा पाहाँ । रावत दुवौ दुवौ जनु बाहाँ
आइ स्रवन राजा के लागे । मूसि न जाहिं पुरुष जो जागे
'बाचा परखि तुरुक हम बूझा । परगट मेर, गुपुत छल सूझा
तुम नहि करौ तुरुक सौं मेरू । छल पै करहि अंत कै फेरू'
सुनि राजहि यह बात न भाई । 'जहाँ मेर तहँ नहि अधमाई
मदहि भल जो करै भल सोई । अंतहि भला भले कर होई
जो छल करै ओहि छल बाजा । जैसे सिंघ मँजूसा साजा'
राजै लोन सुनावा, लाग दुहुन्ह जस लोन ।
आए कोहाइ मँदिर कहँ, सिंघ छान अब गोन ॥ ३८ ॥

राजा कै सोरह सै दासी । तिन्ह महँ चुनि काढ़ीं चौरासी
बरन बरन सारी पहिराई । निकसि मँदिर तें सेवा आई
जनु निसरीं सब बीरबहूटी । रायमुनी पींजर-हुँत छूटी
सबै परथमै जोबन सोहीं । नयन बान औ सारँग भौंहीं
मारहिं धनुक फेरि सर ओही । पनिघट घाट धनुक जिति मोही
काम-कटाछ हनहिं चित-हरनी । एक एक तें आगरि बरनी
जानहुँ इंद्रलोक तें काढ़ीं । पाँतिहि पाँति भईं सब ठाढ़ीं

माह पूछ राघव पहँ, 'ए सब अछरी आहिं ।
तुइ जो पदमिनि बरनी, कहु सो कौन इन माहि' ॥ ३९ ॥

'दीरघ आउ, भूमिपति भारी । इन महँ नाहिं पदमिनी नारी
यह फुलवारि सो ओहि कै दासी । कहँ केतकी भँवर जहँ बासी
वह तौ पदारथ, ए सब मोती । कहँ वह दीप पतँग जेहि जोती
जौ लगि सूर क दिस्टि अकासू । तौ लगि ससि न करै परगासू'
सुनि कै साह दिस्टि तर नावा । 'हम पाहुन, यह मँदिर परावा
पाहुन ऊपर हेरै नाहीं । हना राहु अर्जुन परछाहीं'
सेव करैं दासी चहुँ पासा । अछरी मनहुँ इंद्र कैलासा

पुनि सँधान बहु आनहिं, परसहि बूकहि बूक ।
करहि सँवार गोसाईं, जहाँ परै किछु चूक ॥ ४० ॥

भइ जेवना फिरा खँडवानी । फिरा अरगजा कुहँकुहँ-पानी
नग अमोल जो थारहि भरे । राजै सेव आनि कै धरे
बिनती कीन्ह घालि गिउ पागा । 'ए जगसूर, सीउ मोहिं लागा'
सुनि बिनती बिहँसा सुलतानू । सहसौ करा दिपा जस भानू

सारदूल दुहुँ दिसि गढ़ि काढ़े । गलगाजहिं जानहुँ ते ठाढ़े
जावत कहिए चित्र कटाऊ । तावत पँवरिन्ह वने जड़ाऊ
साह मँदिर अस देखा जनु कैलास अनूप ।
जाकर अस धौराहर सो रानी केहि रूप ॥ ३६ ॥

नाँघत पँवरि गए खँड साता । सतएँ भूमि बिछावन राता
आँगन साह ठाढ़ भा आई । मँदिर छाँह अति सीतल पाई
रानी धौराहर उपराहीं । करै दिस्टि नहिं तहाँ तराहीं
सखी सरेखी साथ वईठी । तपै सूर, ससि आव न दीठी
राजा सेव करै कर जोरे । आजु साह घर आवा मोरे
नट नाटक, पातुरि औ वाजा । आइ अखाड़ माहँ सब साजा
परगट कह राजा सौं वाता । गुपुत प्रेम पदमावति राता
गीत नाद अस वधा, दहक विरह कै आँच ।
मन कै डोरि लागि तहँ, जहँ सो गहि गुन खाँच ॥ ३७ ॥

गोरा बादल राजा पाहाँ । रावत दुवौ दुवौ जनु बाहाँ
आइ स्रवन राजा के लागे । मूसि न जाहिं पुरुष जो जागे
'बाचा परखि तुरुक हम बूझा । परगट मेर, गुपुत छल सूझा
तुम नहिं करौ तुरुक सौं मेरू । छल पै करहिं अंत कै फेरू'
सुनि राजहि यह बात न भाई । 'जहाँ मेर तहँ नहिं अधमाई
मदहि भल जो करै भल सोई । अंतहि भला भले कर होई
जो छल करै ओहि छल वाजा । जैसे सिंघ मँजूसा साजा'
राजै लोन सुनावा, लाग दुहुन्ह जस लोन ।
आए कोहाइ मँदिर कहँ, सिंघ छान अब गोन ॥ ३८ ॥

राजा कै सोरह सै दासी। तिन्ह महँ चुनि काढ़ीं चौरासी
बरन बरन सारी पहिराई। निकसि मँदिर तें सेवा आई
जनु निसरीं सब बीरबहूटी। रायमुनी पींजर-हुँत छूटी
सबै परथमै जोबन सोहैं। नयन बान औ सारँग भौंहैं
मारहिं धनुक फेरि सर ओही। पनिघट घाट धनुक जिति मोही
काम-कटाछ हनहिं चित-हरनी। एक एक तें आगरि बरनी
जानहुँ इंद्रलोक तें काढ़ी। पाँतिहि पाँति भई सब ठाढ़ी

माह पूछ राघव पहँ, 'ए सब अछरी आहिं।
तुइ जो पदमिनि बरनी, कहु सो कौन इन माहिं' ॥ ३९ ॥

'दीरघ आउ, भूमिपति भारी। इन महँ नाहिं पदमिनी नारी
यह फुलवारि सो ओहि कै दासी। कहँ केतकी भँवर जहँ बासी
वह तौ पदारथ, ए सब मोती। कहँ वह दीप पतँग जेहि जोती
जौ लगि सूर क दिस्टि अकासू। तौ लगि ससि न करै परगासू'
सुनि कै साह दिस्टि तर नावा। 'हम पाहुन, यह मँदिर परावा
पाहुन ऊपर हेरै नाहीं। हना राहु अर्जुन परछाहीं'
सेव करैं दासीं चहुँ पासा। अछरी मनहुँ इंद्र कैलासा

पुनि सँधान बहु आनहि, परसहि बूकहि बूक।
करहिं सँवार गोसाईं, जहाँ परै किछु चूक ॥ ४० ॥

भइ जेवना फिरा खँडवानी। फिरा अरगजा कुहँकुहँ-पानी
नग अमोल जो थारहि भरे। राजै सेव आनि कै धरे
बिनती कीन्ह घालि गिउ पागा। 'ए जगसूर, सीउ मोहिं लागा'
सुनि बिनती बिहँसा सुलतानू। सहसौ करा दिपा जस भानू

'ए राजा, तुइ मोंच जुड़ावा। भइ सुदिस्टि अब, सीउ छुड़ावा
राहु देस आपन करि सेवा। ग्रौर देउँ माँडौ तोहि, देवा'
हँसि हँसि बोलै, टेकै काँधा। प्रीति भुलाइ चहै छल बाँधा

माया-बोल बहुत कै साह पान हँसि दीन्ह।
पहिले रतन हाथ कै चहै पदारथ लीन्ह॥ ४१॥

माया-मोह-विबस भा राजा। साह खेल सतरँज कर साजा
'राजा, है जौ लगि सिर घामू। हम तुम घरिक करहि बिसरामू'
दरपन साह भीति तहँ लावा। देखौं जबहि झरोखे आवा
खेलहि दुओ साह औ राजा। साह क रुख दरपन रह साजा
सूर देख जौ तरई-दासी। जहँ ससि तहाँ जाइ परगासी
'सुना जो हम दिल्ली सुलतानू। देखा आजु तपै जस भानू
ऊँच छत्र जाकर जग माहाँ। जग जो छाहँ सब ओहि कै छाँहाँ

बादसाह दिल्ली कर कित चितउर महँ आव।
देखि लेहु, पदमावति, जेहि न रहै पछिताव'॥ ४२॥

बिगसै कुमुद कहे ससि ठाऊँ। बिगसै कँवल सुने रबि-नाऊँ
भइ निसि, ससि धौराहर चढी। सोरह कला जैस बिधि गढ़ी
बिहँसि झरोखे आइ सरेखी। निरखि साह दरपन महँ देखी
होतहि दरस परस भा लोना। धरती सरग भयउ सब सोना
रुख माँगत रुख ता सहुँ भयऊ। भा शह मात, खेल मिटि गयऊ
राजा भेद न जानै झाँपा। भा बिसँभार, पवन बिनु काँपा
राघव कहा कि लागि सोपारी। लेइ पौढावहि सेज सँवारी

रैनि बीति गइ, भोर भा, उठा सूर तब जागि ।
जो देखै ससि नाहीं, रही करा चित लागि ॥ ४३ ॥

राघव चेति साह पहँ गयऊ । सूरज देखि कवँल बिसमयऊ
'देखि एक कौतुक हौं रहा । रहा अँतरपट पै नहिं अहा
सरवर देख एक मैं सोई । रहा पानि पै पानि न होई
सरग आइ धरती महँ छावा । रहा धरति पै धरत न आवा
तिन्ह महँ पुनि एक मंदिर ऊँचा । करन्ह अहा पै कर न पहूँचा
तेहि मंडप मूरति मैं देखी । बिनु तन, बिनु जिउ जाइ बिसेखी
पूरन चंद होइ जनु तपी । पारस रूप दरस देइ छपी

निगसा कँवल सरग निसि, जनहुँ लौकि गइ बीजु ।
ओहि राहु भा भानुहि, राघव मनहि पतीजु ॥ ४४ ॥

अति बिचित्र देखा सो ठाढ़ी । चित कै चित्र, लीन्ह जिउ काढ़ी
सिंघ-लंक, कुंभस्थल जोरू । आंकुस नाग, महाउत मोरू
तेहि ऊपर भा कँवल बिगासू । फिरि अलि लीन्ह पुहुप-मधु-बासू
दुइ खंजन बिच बैठेउ सूआ । दुइज क चाँद धनुक लेइ ऊआ
मिरिग देखाइ गवन फिरि किया । ससि भा नाग, सूर भा दिया
सुठि ऊँचे देखत वह उचका । दिस्टि पहुँचि, कर पहुँचि न सका
पहुँच-बिहून दिस्टि कित भई ? । गहि न सका, देखत वह गई

राघव, हेरत जिउ गयउ, कित आछत जो असाध ?
यह तन राख पाँख कै सकै न, केहि अपराध' ॥४५॥

राघव सुनत सीस भुइँ धरा । 'जुग जुग राज भानु कै करा
उहै कला, वह रूप बिसेखी । निसचै तुम्ह पदमावति देखी

(७) युद्ध खंड

कुभलनेर - राय देवपालू । राजा केर सत्रु हिय - सालू
वह पै सुना कि राजा बाँधा । पाछिल वैर सँवरि छर माधा
सत्रु-साल तब नेयरै सोई । जौ घर आव सत्रु के जोई
दूती एक विरिध तेहि ठाऊँ । बाम्हनि जाति, कुमोदिनि नाऊँ
ओहि हँकारि कै बीरा दीन्हा । 'तोरे बर मैं बर जिउ कीन्हा
तुइ जो कुमोदिनि कँवल के नियरे । सरग जो चाँद बसै तोहि हियरे
चितउर महँ जो पदमिनि रानी । कर बर छर सौं दे मोहि आनी

रूप जगत-मन-मोहन ओ पद्मावति नावँ ।
कोटि दरब तोहि देइहौ, आनि करसि एहि ठाँव' ॥ १ ॥

कुमुदिनि कहा 'देखु, हौं सो हौ । मानुप काह, देवता मोहौं'
दूती बहुत पकावन साधे । मोतिलाड्डू औ खेरौरा बाँधे
लेइ पूरी भरि डाल अछूती । चितउर चली पैज कै दूती
विरिध वैस जौ बाँधे पाऊ । कहाँ सो जोवन, कित बेवसाऊ?
तन बूढ़ा, मन बूढ न होई । बल न रहा, पै लालच सोई
कहाँ सो रूप जगत सब राता । कहँ सो गरब हस्ति जस माता
कहाँ सो तीख नयन, तन ठाढा । सबै मारि जोवन-पन काटा

मुहमद बिरिध जो नइ चलै, काह चलै भुँइ टोइ ।
जोबन-रतन हेरान है, मकु धरती महँ होइ ॥ २ ॥

आइ कुमोदिनि चितउर चढी। जोहन मोहन पाढत पढी
पूछि लीन्ह रनिवास बरोठा। पैठी पँवरी भीतर कोठा
जहाँ पदमिनी ससि उजियारी। लेइ दूती पकवान उतारी
हाथ पसारि धाइ कै भेटी। 'चीन्हा नहिं, राजा कै बटी
हौ बाम्हनि जेहि कुमुदिनि नाऊँ। हम तुम उपने एकै ठाऊँ
नावँ पिता कर दूबे बेनी। सोइ पुरोहित गँधरवसेनी
तुम बारी तब सिंघलदीपा। लीन्हे दूध पियाइउँ सीपा
ठाँव कीन्ह मैं दूसर कुभलनेरै आइ।
सुनि तुम्ह कहँ चितउर महँ कहिउँ कि भेटौं जाइ' ॥ ३ ॥
सुनि निसचै नैहर कै नाई। गरे लागि पदमावति रोई
नैन-गगन रवि बिनु अँधियारे। ससि-मुख आँसु टूट जनु तारे
जग अँधियार गहन दिन परा। कब लगि ससि नखतन्ह निसि भरा
'माय बाप कित जनमी बारी। गीउ तूरि कित जनम न मारी ?
कित बियाहि दुख दीन्ह दुहेला। चितउर पंथ कत बँदि मेला
अब एहि जियन चाहि भल मरना। भयउ पहार जनम दुख भरना
निकसि न जाइ निलज यह जीऊ। देखौं मँदिर सून बिनु पीऊ'
कुहुकि जो रोई ससि नखत नैन हैं रात चकोर।
अबहूँ बोलैं तेहि कुहुक कोकिल, चातक, मोर ॥ ४ ॥
कुमुदिनि कंठ लागि सुठि रोई। पुनि लेइ रूप-डार मुख धोई
'तुइ ससि-रूप जगत उजियारी। मुख न झाँपु निसि होइ अँधियारी
सुनि चकोर कोकिल दुख दुखी। घुँघची भई नैन करमुखी
केतौं धाइ मरै कोइ बाटा। सोइ पाव जो लिखा लिलाटा

जो विधि लिखा आन नहि होई । कित धावै, कित रोवै कोई
कित कोउ हाँछ करै औ पूजा । जो विधि लिखा होइ नहिँ दूजा'
जेतिक कुमुदिनि बैन करेई । तस पदमावति स्रवन न देई

मेदुर चीर मैल तस, सूखि रही जस फूल ।
जेहि सिँगार पिय तजिगा जनम न पहिरै भूल ॥ ५ ॥

तब पकवान उघारा दूती । पदमावति नहिँ छुवै अछूती
'मोहि अपने पिय केर खभारू । पान फूल कस होइ अहारू ?
मोकहँ फूल भए सब काँटै । बाँटि देहु जौ चाहहु बाँटै
रतन छुवा जिन्ह हाथन्ह सेंती । और न छुवौ सो हाथ सँकेती
ओहि के रँग भा हाथ मँजीठी । मुकुता लेउँ तौ घुँघची दीठी
नैन करमुहें, राती काया । मोति होहिँ घुँघची जेहि छाया
अस कै ओछ नैन हत्यारे । देखत गा पिउ गहै न पारे

का तोर छुवौं पकावन, गुड़ करुवा, घिउ रूख ।
जेहि मिलि होत सवाद रस, लेइ सो गयउ पिउ भूख' ॥६॥

कुमुदिनि रही कँवल के पासा । बैरी सूर, चाँद कै आसा
धनि कुँभिलानि रही, भइ चूरू । बिगसि रैनि बातन्ह कर भूरू
'कस तुइ, बारि, रहसि कुँभिलानी ? सूखि बेलि जस पाव न पानी
अबही कँवल-करी तुइँ बारी । कोवँरि बैस, उठत पैनारी
बेनी तोरि मैलि औ रूखी । सरवर माहँ रहसि कस सूखी?
पान-बेलि विधि कया जमाई । सींचत रहै तबहि पलुहाई
करु सिँगार सुख फूल तमोरा । बैठु सिंघासन, झूलु हिंडोरा

ार जोवन जस समुद हिलोरा। देखि देखि जिउ बूड़ै मोरा
ग ग्रोर नहि पाइय वैसे। जरे मरे विनु पाउव कैसे ?
देग्वि धनुक तोर नैना, मोहि लाग विप-वान।
विहँसि कँवल जो मानै, भँवर मिलावौ आन' ॥ १२ ॥

कुमुदिनि, तुइ वैरिनि, नहि धाई। तुइ मसि बोलि चढावसि आई
नेरमल जगत नीर कर नामा। जौ मसि परै होइ सो सामा
जहँवाँ धरम पाप नहि दीसा। कनक सोहाग माँझ जस सीसा
जो मसि परे होइ ससि कारी। सो हँसि लाइ देसि मोहिं गारी
कापर महँ न छूट मसि-ग्रंकू। सो मसि लेइ मोहिं देसि कलंकू
साम भँवर मोर सूरुज-करा। ग्रौर जो भँवर साम मसि-भरा
कँवल भँवर-रवि देखै ग्राँखी। चंदन-वास न बैठै माखी
साम समुद मोर निरमल रतनसेन जगसेन।
दूसर सरि जो कहावै सो विलाइ जस फेन' ॥ १३ ॥

'पदमिनि, पुनि मसि बोल न वैना। सो मसि देखु दुहूँ तोरे नैना
मसि सिंगार, काजर सब बोला। मसि क बुंद तिल सोह कपोला
लोना से [illegible] मसि-रेखा। मसि पुतरिन्ह तिन्ह सौं जग देखा
[illegible] दुहुँ लीन्ही। सो मसि फेरि जाइ नहि कीन्ही
[illegible] उपराहीं। मसि भँवरा जे कँवल भँवाहीं
[illegible] उरेही [illegible] विनु दसन सोह नहिं देही
[illegible] पिउ न जेहि परछाहीं?
[illegible] सिर फेर।
कुंभलनेर' ॥ १४ ॥

जोवन-नीर घटे का घटा ? सत्त के वर जौ नहि हिय फटा'
'जोवन बिना बिरिध होइ नाऊँ । बिनु जोवन थाकै सब ठाऊँ
जोवन हेरत मिलै न हेरा । सो जौ जाइ, करै नहि फेरा
सेवर सेव न चित करु सूआ । पुनि पछितासि अंत जब भूआ
रूप तोर जग ऊपर लोना । यह जोवन पाहुन चल होना

उठत कोप जस तरिवर तस जोवन तोहि •रात ।
तौ लहि रग लेहु रचि, पुनि सो पियर होइ पात' ॥१०॥

कुमुदिनि-बैन सुनत हिय जरी । पदमिनि उरहि आगि जनु परी
'रँग ताकर हौं जारौं काँचा । आपन तजि जो पराएहि राँचा
दूसर करै जाइ दुइ बाटा । राजा दुइ न होहि एक पाटा
जेहि के जीउ प्रीति दिढ होई । सुख सोहाग सौं बैठै सोई
जोवन जाउ, जाउ सो भँवरा । पिय कै प्रीति न जाइ, जो सँवरा
एहि जग जौ पिउ करहिं न फेरा । ओहि जग मिलहि जो दिन दिन हेरा
जोवन मोर रतन जहँ पीऊ । बलि तेहि पिउ पर जोवन जीऊ

भरथरि बिछुरि पिंगला आहि करत जिउ दीन्ह ।
हौं पापिनि जो जियति हौं, इहै दोष हम कीन्ह' ॥ ११ ॥

'पदमावति, सो कौनि रसोई । जेहि परकार न दूसर होई
रस दूसर जेहि जीभ बईठा । सो जानै रस खाटा मीठा
भँवर बास बहु फूलन्ह लेई । फूल बास बहु भँवरन्ह देई
दूसर पुरुष न रस तुइ पावा । तिन्ह जाना जिन्ह लीन्ह परावा
एक चुल्लू रस भरै न हीया । जौ लहि नहिं फिर दूसर पीया

तोर जोबन जस समुद हिलोरा । देखि देखि जिउ बूड़ै मोरा
रंग श्रौर नहि पाइय वैसे । जरे मरे बिनु पाउब कैसे ?
देखि धनुक तोर नैना, मोहि लाग बिष-बान ।
बिहँसि कँवल जो मानै, भँवर मिलावौं श्रान' ॥ १२ ॥

'कुमुदिनि, तुइ बैरिनि, नहि धाई । तुइ मसि बोलि चढावसि श्राई
निरमल जगत नीर कर नामा । जौं मसि परै होइ सो सामा
जहँवाँ धरम पाप नहि दीसा । कनक सोहाग माँझ जस सीसा
जो मसि परे होइ ससि कारी । सो हँसि लाइ देसि मोहि गारी
कापर महँ न छूट मसि-श्रंकू । सो मसि लेइ मोहिं दसि कलंकू
साम भँवर मोर सूरुज-करा । श्रौर जो भँवर साम मसि-भरा
कँवल भँवर-रवि देखै श्राँखी । चंदन-बास न बैठै माखी
साम समुद मोर निरमल रतनसेन जगसेन ।
दूसर सरि जो कहावै सो बिलाइ जस फेन' ॥ १३ ॥

'पदमिनि, पुनि मसि बोल न बैना । सो मसि देखु दुहूँ तोरे नैना
मसि सिँगार, काजर सब बोला । मसि क बुंद तिल सोह कपोला
लोना सोइ जहाँ मसि-रेखा । मसि पुतरिन्ह तिन्ह सौं जग देखा
जो मसि घालि नयन दुहुँ लीन्ही । सो मसि फेरि जाइ नहिं कीन्ही
मसि-मुद्रा दुइ कुच उपराहीं । मसि भँवरा जे कँवल भँवाहीं
मसि केसहि, मसि भौंह उरेही । मसि बिनु दसन सोह नहिं देही
सो कस सेत जहाँ मसि नाहीं? । सो कस पिंड न जेहि परछाहीं?
श्रस देवपाल राय मसि छत्र धरा सिर फेर ।
चितउर राज बिसरिगा गयउ जो कुंभलनेर' ॥ १४ ॥

सुनि देवपाल जो कुभलनेरी । पकज-नैन भौंह-धनु फेरी
'सत्रु मोरे पिउ कर देवपालू । सो कित पूज सिंघ सरि भालू ?
दु ख भरा तन जेत न केसा । तेहि का सँदेस सुनावसि, वेसा ?
सोन नदी अस मोर पिउ गरुवा । पाहन होइ परै जौ हरुवा
जेहि ऊपर अस गरुवा पीऊ । सो कस डोलाए डोलै जोऊ'
फेरत नैन चेरि सौ छूटीं । भइ कूटन कुटनी तस कूटीं
नाक कान काटेन्हि, मसि लाई । मूँड मूँडि कै गदह चढाई

मुहमद विधि जेहि गरु गढा का कोई तेहि फूँक ।
जेहि के भार जग थिर रहा, उडै न पवन के झूँक ॥ १५ ॥

पाछि कुमुदनि धीरज धारा । गइ गोरा बादल के बारा
चरन-कँवल भुइँ जनम न धरे । जात तहाँ लगि छाला परे
निसरि आए छत्री सुनि दोऊ । तस काँपे जस काँप न कोऊ
केस छोरि चरनन्ह-रज झारा । 'कहाँ पावँ पदमावति धारा ?'
राखा आनि पाट सोनवानी । विरह-वियोगिनि बैठी रानी
दोउ ठाट होइ चँवर डोलावहिं । 'माथे छात, रजायसु पावहिं
उलटि बहा गगा कर पानी । सेवक-बार आइ जो रानी

का अस कस्ट कीन्ह तुम्ह, जो तुम्ह करत न छाज ।
अग्या होइ वेगि सो, जीउ तुम्हारे काज' ॥ १६ ॥

कही रोइ पदमावति बाता । नैनन्ह रकत दीख जग राता
'तुम गोरा बादल खँभ दोऊ । जस रन पारथ और न कोऊ
दुख बरखा अब रहै न राखा । मूल पतार, सरग भइ साखा
तेहि दुख लेत बिरिछ बन बाढे । सीस उघारे रोवहि ठाढे

पुहुमि पूरि, सायर दुख पाटा। कौडी केर बेहरि हिय फाटा
बेहरा हिये खजूर क निया। बेहर नाहिँ गोर पाहन-हिया
पिय जेहि बंदि जोगिनि होइ धावौं। हौं बँदि लेउँ, पियहि मुकरावौं

सूरुज गहन-गरासा, कँवल न बैठै पाट।
महूँ पंथ तेहि गवनब, कंत गए जेहि बाट' ॥ १७ ॥

गोरा बादल दोउ पसीजे। रोवत रुहिर बूडि तन भीजे
'हम राजा सौं इहै कोहाँने। तुम न मिलौ, धरिहै तुरकाने
जो मति सुनि हम गए कोहाँई। सो निआन हम्ह माथे आई
जौ लगि जिउ, नहिं भागहिं दोऊ। स्वामि जियत कत जोगिनि होऊ
उए अगस्त हस्ति जन गाजा। नीर घटे घर आइहि राजा
बरषा गए, अगस्त जो दीठिहि। परिहि पलानि तुरंगम पीठिहि
बेधौं राहु, छोडावहुँ सूरू। रहै न दुख कर मूल अँकूरू

सोइ सूर, तुम ससहर, आनि मिलावौं सोइ।
तस दुख महँ सुख उपजै रैनि माहँ दिन होइ' ॥ १८ ॥

लीन्ह पान बादल औ गोरा। 'केहि लेइ देउँ उपम तुम्ह जोरा?
तुम सावंत, न सरवरि कोऊ। तुम हनुवंत अँगद सम दोऊ
तुम अरजुन औ भीम भुवारा। तुम बल रन दल मंडनहारा
राम लखन तुम दैत-सँघारा। तुमही घर बलभद्र भुवारा
तुमहि युधिष्ठिर औ दुरजोधन। तुमहि नील नल दोउ संयोधन
तुम परदुम्न औ अनिरुध दोऊ। तुम अभिमन्यु बोल सब कोऊ
तुम्ह सरि पूज न विक्रम साके। तुम हमीर हरिचँद सत आँके

जस अति संकट पंडवन्ह भयउ भीवँ बँदिछोर ।
तस परबस पिउ काढहु, राखि लेहु भ्रम मोर' ॥ १९ ॥
गोरा बादल बीरा लीन्हा । जस हनुवँत अंगद बर कीन्हा
'कँवल-चरन भुइँ धरि दुख पावहु । चढि सिंघासन मँदिर सिधावहु'
सुनतहि सूर कँवल हिय जागा । केसरि-बरन फूल हिय लागा
जनु निसि महँ दिन दीन्ह देखाई । भा उदोत, मसि गई बिलाई
बादल केरि जसोवै माया । आइ गहेसि बादल कर पाया
'बादल राय, मोर तुइ बारा । का जानसि कस होइ जुझारा
बादसाह पुहुमी-पति राजा । सनमुख होइ न हमीरहि छाजा
जहा दलपती दलि मरहि, तहाँ तोर का काज ? ।
आजु गवन तोर आवै, बैठि मानु सुख राज' ॥ २० ॥
'मातु, न जानसि बालक आदी । हौं बादला सिंघ रनबादी
सुनि गज-जूह अधिक जिउ तपा । सिंघ क जाति रहै किमि छपा?
तौलगि गाज, न गाज सिंघेला । सौंह साह सौं जुरौं अकेला
को मोहि सौंह होइ मैमता । फारौं सूँड, उखारौं दंता
जुरौं स्वामि सँकरे जस ढारा । पेलौं जस दुरजोधन भारा
अंगद कोपि पाँव जस राखा । टेकौं कटक छतीसौ लाखा
हनुवँत सरिस जंघ बर जोरौं । दहौं समुद्र, स्वामि-बँदि छोरौं
सो तुम, मातु जसोवै, मोहि न जानहु बार ।
जहँ राजा बलि बाँधा छोरौं पैठि पतार' ॥ २१ ॥
बादल गवन जूझ कर साजा । तैसहि गवन आइ घर बाजा
का बरनौं गवने कर चारू । चंद्रबदनि रचि कीन्ह सिंगारू

मानि गवन सो घूँघुट काढ़ी । विनवै आइ वार भइ ठाढ़ी
मुख फिराइ मन अपने रीसा । चलत न तिरिया कर मुख दीसा
तब धनि बिहँसि कहा गहि फेंटा । 'नारि जो विनवै कंत न मेटा
आजु गवन हौं आई, नाहाँ । तुम न, कंत, गवनहु रन माहाँ'
धनि न नैन भरि देखा पीऊ । पिउ न मिला धनि सौं भरि जीऊ

पायँन्ह धरा लिलाट धनि, 'विनय सुनहु, हो राय' ।
अलक परी फँदवार होइ, कैसेहु तजै न पाय ॥ २२ ॥

'छाँडि फेंट धनि' बादल कहा । 'पुरुष-गवन धनि फेंट न गहा
जौ तुइ गवन आइ, गजगामी । गवन मोर जहँवाँ मोर स्वामी
जौ लगि राजा छूटि न आवा । भावै वीर, सिंगार न भावा
तिरिया भूमि खड्ग कै चेरी । जीत जो खड्ग होइ तेहि केरी
जेहि घर खड्ग मोछ तेहि गाढ़ी । जहाँ न खड्ग मोछ नहि दाढ़ी
तब मुहँ मोछ, जीउ पर खेलौं । स्वामि-काज इंद्रासन पेलौं
पुरुष बोलि कै टरै न पाछू । दसन गयद, गीउ नहिं काछू

तुइ अबला, धनि, कुबुधि बुधि, जानै काह जुझार ।
जेहि पुरुषहि हिय बीर रस, भावै तेहि न सिंगार' ॥ २३ ॥

एकौ विनति न मानै नाहाँ । आगि परी चितउर धनि माहाँ
उठा जो धूम नैन करवाने । लागे परै आसु झहराने
भींजे हार, चीर, हिय चोली । रही अछूत कंत नहि खोली
'जौ तुम कंत, जूझ जिउ काँधा । तुम किय साहस, मैं सत बाँधा
रन संग्राम जूझि जिति आवहु । लाज होइ जौ पीठि देखावहु'

मतँ बैठि बादल औ गोरा। सो मत कीज परै नहि भोरा
जस तुरकन्ह राजा छर साजा। तस हम साजि छोडावहि राजा
पुरुष तहा पै करै छर जहँ बर किए न आँट।
जहाँ फूल तहँ फूल है, जहाँ काँट तहँ काँट ॥ २४ ॥

सोरह सै चडोल सँवारे। कुँवर सजोइल कै बैठारे
पदमावति कर सजा विवानू। बैठ लोहार न जानै भानू
रचि बिवान सो साजि सँवारा। चहुँ दिसि चँवर करहि सब ढारा
साजि सबै चडोल चलाए। सुरँग ओहार, मोति बहु लाए
भए सँग गोरा बादल बली। कहत चले पदमावति चली
हीरा रतन पदारथ झूलहि। देखि बिवान देवता भूलहि
सोरह सै सँग चली सहेली। कँवल न रहा, और को बेली ?
राजहिं चलीं छोडावै तहँ रानी होइ ओल।
तीस सहस तुरि खिचीं सँग, सोरह सै चडोल ॥ २५ ॥

राजा बँदि जेहि के सौंपना। गा गोरा तेहि पहँ अगमना
टका लाख दस दीन्ह अँकोरा। बिनती कीन्हि पायँ गहि गोरा
बिनवा बादसाह सौं जाई। अब रानी पदमावति आई
'बिनती करै आइ हौं दिल्ली। चितउर कै मोहि स्यो है किल्ली
बिनती करै जहा है पूँजी। सब भँडार कै मोहि स्यो कूँजी
एक घरी जौ अग्या पावौ। राजहिं सौंपि मँदिर महँ आवौ'
तब रखवार गए सुलतानी। देखि अँकोर भए जस पानी
लीन्ह अँकोर हाथ जेहि जीउ दीन्ह तेहि हाथ।
जहाँ चलावै तहँ चलै, फेरे फिरै न माथ ॥ २६ ॥

लोभ पाप कै नदी अँकोरा। सत्त न रहै हाथ जौ बोरा
जहँ अँकोर तहँ नीक न राजू। ठाकुर केर बिनासै काजू
भा जिउ घिउ रखवारन्ह केरा। दरब लोभ चंडोल न हेरा
जाइ साह आगे सिर नावा। 'ए जगसूर, चाँद चलि आवा
जावत हैं सब नखत तराईं। सोरह सै चंडोल सो आईं
चितउर जेति राज कै पूँजी। लेइ सो आइ पदमावति कूँजी
बिनती करै जोरि कर खरी। लेइ सौंपौ राजा एक घरी

इहाँ उहाँ कर स्वामी दुऔ जगत मोहिं आस।
पहिले दरस देखावहु तौ पठवहु कैलास'॥ ७७॥

आग्या भई, जाइ एक घरी। छूँछि जो घरी फेरि बिधि भरी
चलि बिवान राजा पहँ आवा। सँग चंडोल जगत सब छावा
पदमावति के भेस लोहारू। निकसि काटि बँदि कीन्ह जोहारू
उठा कोपि जस छूटा राजा। चढा तुरग, सिंघ अस गाजा
गोरा बादल खाँडै काढे। निकसि कुँवर चढि चढि भए ठाढे
तीख तुरग गगन सिर लागा। केहुँ जुगुति करि टेकी बागा
जो जिउ ऊपर खडग सँभारा। मरनहार सो सहसन्ह मारा

भई पुकार साह सौं, 'ससि औ नखत सो नाहिं।
छर कै गहन गरासा, गहन गरासे जाहिं'॥ ७८॥

लेइ राजा चितउर कहँ चले। छूटेउ सिंघ, मिरिग खलभले
चढा साहि, चढि लाग गोहारी। कटक असूझ परी जग कारी
फिरि गोरा बादल सौं कहा। 'गहन छूटि पुनि चाहै गहा
चहुँ दिसि आवै लोपत भानू। अब इहै गोइ, इहै मैदानू

मवैं बैठि बादल औ गोरा। सो मत कीज परै नहि भोरा
जस तुरकन्ह राजा छर साजा। तस हम साजि छोडावहि राजा
पुरुष तहा पै करै छर जहँ वर किए न आँट।
जहाँ फूल तहँ फूल है, जहाँ काट तहँ काँट ॥ २४ ॥

सोरह सै चडोल सँवारे। कुँवर सजोइल कै बैठारे
पदमावति कर सजा बिवानू। बैठ लोहार न जानै भानू
रचि बिवान सो साजि सँवारा। चहुँ दिसि चँवर करहि सब ढारा
साजि सबै चडोल चलाए। सुरँग ओहार, मोति बहु लाए
भए सँग गोरा बादल बली। कहत चले पदमावति चली
हीरा रतन पदारथ झूलहि। देखि बिवान देवता भूलहि
सोरह सै सँग चली सहेली। कँवल न रहा, और को बेली ?
राजहि चलीं छोडावै तहँ रानी होइ ओल।
तीस सहस्र तुरि खिचीं सँग, सोरह सै चडोल ॥ २५ ॥

राजा बँदि जेहि के सौपना। गा गोरा तेहि पहँ अगमना
टका लाख दस दीन्ह अँकोरा। बिनती कीन्हि पायँ गहि गोरा
बिनवा बादसाह सौं जाई। अब रानी पदमावति आई
'बिनती करै आइ हौं दिल्ली। चितउर कै मोहि स्यो है किल्ली
बिनती करै जहा है पूँजी। सब भँडार कै मोहि स्यो कूँजी
एक घरी जौ अग्या पावौ। राजहिं सौपि मँदिर महँ आवौ'
तब रखवार गए सुलतानी। देखि अँकोर भए जस पानी
लीन्ह अँकोर हाथ जेहि जीउ दीन्ह तेहि हाथ।
जहाँ चलावै तहँ चलै, फेरे फिरै न माथ ॥ २६ ॥

लोभ पाप कै नदी अँकोरा। सत्त न रहै हाथ जौ बोरा
जहँ अँकोर तहँ नीक न राजू। ठाकुर केर बिनासै काजू
भा जिउ धिउ रखवारन्ह केरा। दरब लोभ चडोल न हेरा
जाइ साह आगे सिर नावा। 'ए जगसूर, चाँद चलि आवा
आवत हैं सब नखत तराईं। सोरह सै चडोल सो आई
चितउर जेति राज कै पूँजी। लेइ सो आइ पदमावति कूँजी
बिनती करै जोरि कर खरी। लेइ सौंपौं राजा एक घरी

इहाँ उहाँ कर स्वामी दुऔ जगत मोहिं आस।
पहिले दरस देखावहु तौ पठवहु कैलास'॥ २७॥

आग्या भई, जाइ एक घरी। छूँछि जो घरी फेरि बिधि भरी
चलि बिवान राजा पहँ आवा। सँग चडोल जगत सब छावा
पदमावति के भेस लोहारू। निकसि काटि बँदि कीन्ह जोहारू
उठा कोपि जस छूटा राजा। चढा तुरग, सिंघ अस गाजा
गोरा बादल खाँडे काढे। निकसि कुँवर चढि चढि भए ठाढे
तीख तुरग गगन सिर लागा। केहुँ जुगुति करि टेकी बागा
जो जिउ ऊपर खडग सँभारा। मरनहार सो सहसन्ह मारा

भई पुकार साह सौं 'ससि औ नखत सो नाहिं।
छर कै गहन गरासा, गहन गरासे जाहिं'॥ २८॥

लेइ 'राजा चितउर कहँ चले। छूटेउ सिंघ, मिरिग खलभले
चढा साहि, चढि लाग गोहारी। कटक असूझ परी जग कारी
फिरि गोरा बादल सौं कहा। 'गहन छूटि पुनि चाहै गहा
चहुँ दिसि आवै लोपत भानू। अब इहै गोइ, इहै मैदानू

लेइ हाँकि हस्तिन्ह कै ठटा। जैसे पवन बिदारै घटा
जेहि सिर देइ कोपि करवारू। स्यों घोडे टूटै असवारू
लोटहिं सीस कबंध निनारे। माठ मजीठ जनहुँ रन ढारे
खेलि फाग सेंदुर छिरकावा। चाँचरि खेलि आगि जनु लावा
हस्ती घोड धाइ जो धूका। ताहि कीन्ह सो रुहिर भभूका

भइ अग्या सुलतानी, 'बेगि करहु एहि हाथ।
रतन जात है आगे लिए पदारथ साथ' ॥ ३४ ॥

सबै कटक मिलि गोरहि छेका। गूँजत सिंघ जाइ नहि टेका
सरजा बीर सिंघ चढि गाजा। आइ सौंह गोरा सौं बाजा
पहुँचा आइ सिंघ असवारू। जहाँ सिंघ गोरा बरियारू
वहि क गरजि सिंघ अस धावा। सरजा सारदूल पहँ आवा
सरजै लीन्ह साँग पर घाऊ। परा खडग जनु परा निहाऊ
तब सरजा कोपा बरिवंडा। जनहु सदूर केर भुजदंडा
कोपि गरजि मारेसि तस बाजा। जानहु परी टूटि सिर गाजा

गोरा परा खेत महँ, सुर पहुँचावा पान।
बादल लेइगा राजा, लेइ चितउर नियरान ॥ ३५ ॥

पदमावति मन रही जो झूरी। सुनत सरोवर-हिय गा पूरी
अद्रा महि-हुलास जिमि होई। सुख सोहाग आदर भा सोई
राजा जहाँ सूर परगासा। पदमावति मुख-कँवल बिगासा
कवँल पायँ सूरुज के परा। सूरुज कवँल आनि सिर धरा
'पूजा कौनि देउँ तुम्ह राजा ? सबै तुम्हार, आव मोहिं लाजा

तन मन जोबन आरति करऊँ । जीव काढ़ि नेवछावरि धरऊँ
पथ पूरि कै दिस्टि बिछावौं । तुम पग धरहु, सीस मैं लावौं
जौ सूरज सिर ऊपर, तौ रे कँवल सिर छात ।
नाहि त भरे सरोवर, सूखे पुरइन-पात' ॥ ३६ ॥

परसि पायँ राजा के रानी । पुनि आरति बादल कहँ आनी
पूजे बादल के भुजदंडा । तुरय के पावँ दाब कर-खंडा
'यह गजगवन गरब जो मोरा । तुम्ह राखा, बादल औ गोरा
सेंदुर-तिलक जो आँकुस अहा । तुम्ह राखा माथे तौ रहा
काछ काछि तुम जिउ पर खेला । तुम्ह जिव आनि मँजूषा मेला
राखा छात, चवँर औ धारा । राखा छुद्रघंट-झनकारा
तुम हनुवँत होइ धुजा पईठे । तब चितउर पिय आइ बईठे'
पुनि गजमत्त चढ़ावा, नेत बिछाई खाट ।
बाजत गाजत राजा, आइ बैठ सुखपाट ॥ ३७ ॥

सुनि देवपाल राय कर चालू । राजहि कठिन परा हिय सालू
'दादुर कतहुँ कँवल कहँ पेखा । गादुर मुख न सूर कर देखा
अपने रँग जस नाच मयूरू । तेहि सरि साध करै तमचूरू
जौ लगि आइ तुरुक गढ़ बाजा । तौ लगि धरि आनौं तौ राजा'
नींद न लीन्हि, रैनि सब जागा । होत बिहान जाइ गढ़ लागा
कुंभलनेर अगम गढ़ बाँका । बिषम पंथ चढ़ि जाइ न झाँका
राजहि तहाँ गयेउ लेइ कालू । होइ सामुहँ रोपा देवपालू
दुवौ अनी सनमुख भईं, लोहा भयेउ असूझ ।
सत्रु जूझि तब नेवरै, एक दुवौ महँ जूझ ॥ ३८ ॥

जौहर भइँ सब इस्तिरी, पुरुष भए संग्राम ।
बादसाह गढ चूरा, चितउर भा इसलाम ।। ४३ ।।

मुहमद कवि यह जोरि सुनावा । सुना सो पीर प्रेम कर पावा
जोरी लाइ रकत कै लेई । गाढि प्रीति नयनन्ह जल भेई
औ मैं जानि गीत अस कीन्हा । मकु यह रहै जगत महँ चीन्हा
कहाँ सो रतनसेन अब राजा ? कहा सुआ अस बुधि उपराजा ?
कहाँ अलाउदीन सुलतानू ? कहँ राघव जेइ कीन्ह बखानू ?
कहँ सुरूप पदमावति रानी ? कोइ न रहा, जग रही कहानी
धनि सोई जस कीरति जासू । फूल मरै, पै मरै न बासू

केइ न जगत जस बेंचा, केइ न लीन्ह जस मोल ?
जो यह पढै कहानी हम्ह सँवरै दुइ बोल ।। ४४ ।।



टिप्पणी

(१) पदमावती खंड

दोहा १ जोति परकासू = मुसलमानी धर्म में यह माना जाता है कि ईश्वर ने अपनी ज्योति से सब से पहले मुहम्मद को पैदा किया। तेइ (तेन) = उसी ने। खेहा, खेह = धूल। उरेहा (उल्लेख) = चित्रकारी। धरती = पृथ्वी। दिनअर (दिनकर) = सूर्य। तराइन-पाँती = तारागण की पंक्ति। सीउ = शीत। बीजु (विद्युत्) = बिजुली। दूसर छाज न काहि = दूसरे किसी को जो शोभा नहीं देता है।

दो० २ चाटा = च्यूँटी। ताकर उपराहीं = उसकी दृष्टि जो सबके ऊपर रहती है। उपाई (उत्पद्) = उत्पन्न की, उपजाइ। जियना = जीवन। आसहर (आसधर) = आशा रखनेवाले।

दो० ३ अछत (अछत्र) = छत्र-रहित। छावा = छाना—छत्र धारण कराना। सरवरि = बराबरी, समता। चाँटहि = चाँटा को, च्यूँटी को, 'हि' अवधी की विभक्ति है।

दो० ४ अबरन (अवर्ण) = वर्ण हित। बरता (विरक्त) = अलग। सरब बिआपी = सर्वव्यापी। सिरजा = रचा = सृष्टि। हुत = था। बेहरा = अलग, पृथक्। बिहरना = विदीर्ण होना, फटना, अलग होना। दीठिवंत = दृष्टिमान्, दृष्टिवाला।



दोहा ४ निरमरा = निर्मल। पूनोकरा = पूर्णिमा के समान कलावाला, ज्योतिमान। सिहिरि = सृष्टि। लेसि = जलाकर। दूसर लिखे = मुसलमानों के कलमा-शरीफ में ईश्वर के नाम के पश्चात् मोहम्मद का नाम आता है (देखो—'लाइलाह इल लिल्लाह मुहम्मद रसूलिल्लाह')। पाठत = पाठ, शिक्षा, कलमा जो कुरान में लिखा है। बसीठ = दूत, पैगंबर, ईश्वर का दूत। बिधि = ईश्वर। लेख और जोख = लेखा जोखा—हिसाब किताब। निनउब = निनय करेगा। मोख (मोक्ष) = मुक्ति।

दो० ६ छात और पाटा = छत्र और पाट (सिंहासन)। दुनी = दुनिया। इसकंदर जुलकरन—सिकंदर जुलकरनैन। जुलकरन = एक पदवी जो सिकंदर को दी गई थी। सुलेमाँ = सुलेमान, एक यहूदी नृप, कहते हैं कि इसके पास एक अँगूठी थी जिसके कारण ज्यों ज्यों यह दान देता था त्यों त्यों इसका धन बढ़ता जाता था, यह नृप बड़ा दानी था। मुहताज = मुख देखनेवाला, मुखापेक्षी, याचक।

दो० ७ असरफ = सैयद असरफ जहाँगीर चिश्ती। दीया = दीपक। हीया = हृदय। बोहित = नाव, जहाज, बेड़ा। कधार (कर्णधार) = नावक, रास्ता देखानेवाला गुरु। दस्तगीर = बाँह गहनेवाला, रक्षा करनेवाला। निहकलंक = निष्कलंक। मखदूम = मालिक। बंद = बंदा, गुलाम, दास।

दो० ८ टेह कहँ = देने के लिये, दिखाने के लिये। मुरशिद = सीधा मार्ग बतलानेवाला। पीर = गुरु। खेवक = खेनेवाला।

दो० ६ मेहदी = सैयद मुहीउद्दीन, जायसी के मंत्र-गुरु। बताइल = वेग से। रोसन = उज्ज्वल प्रज्वलित, विख्यात।

सुरगरु=सुसरु, तेजमान, जिसका गुरु तेजयुक्त हो। लखाए= दिखाया, लक्षित कराया। मेरइ=मिला लिया। हौ (श्रह)=में। केर=का।

दो० १० एक-नयन=कहते हैं कि जायसी बाईं आँख के अंधे थे। विधि अवतारा=ईश्वर ने पैदा किया। सूक=शुक्र नखत। नखतन्ह=नखत्रों। माहाँ=में। श्रयहि=श्राम्र मे। जोहहि=देखें। जोहना=देखना, प्रतीक्षा करना।

दो० ११ मिताई=मित्रता। सरि=बराबरी। उभै=उठी है। बरिया =बलवान। जुझार (युद्ध)=योद्धा। चतुरदसा=चतुर्दश, चौदह। बिरिछ=वृक्ष। सेद=श्वेत। किन्ह=क्यो, कहाँ।

दो० १२ पछलागा=पीछे लगनेवाला, अनुयायी। भँडार=भाडार। तार=ताला। कूँजी=कुंजी। घाया=घाव, जख्म। छपा=छिपा।

दो० १३ श्राछै (श्रास्ते)=है। नियर=समीप। कबि बियास श्राछै पास= कवि व्यास के समान हो श्रौर काव्य रस से पूर्ण हो पर यह श्रावश्यक नहीं है कि वह उस रस को पाकर उसका संचार कर सके, क्योंकि ऐसा देखने मे श्राता है कि संसार मे कुछ वस्तुएँ ऐसी है जो दूर रहने पर निकट ही होती है श्रौर कुछ ऐसी भी है जो निकट रहने पर भी दूर है जैसे फूल श्रोर काँटा, गुड श्रौर च्यूँटा, भँवर श्रौर कमल, दादुर श्रौर कमलगध। इसलिए यह श्रावश्यक नहीं है कि मैं बडा कवि होकर अपनी कथा को रसपूर्ण कर सकूँ, परन्तु जो कुछ कथा है उसे कहता हूँ।

दो० १४ चक्कवै=चक्रवर्ती। यहाँ चक्कवै क्रिया है। चक्रवर्ती के समान राज करता है।

दो० १५ अमराउ = अमराई, आम्र का बाग। पारौ = सकौं। पारना = सकना। मिला० बँगला का 'पारवे'।

दो० १६ चुहचुही = पक्षि-विशेष, फूलसुँघनी। सारौ = सारिका, मैना। परेवा = कबूतर। करवरहीं = कलबल करते हैं। गडुरी = पक्षि-विशेष। भिंगराज = एक पक्षी। महरि = पक्षि-विशेष। कुराहर = कोलाहल। भाखा = भाषा, बोली।

दो० १७ पैग = पग। बावरी (वापी) = बावली। पाँवरी = सीढ़ी। गरेरी = चक्करदार, घुमौवा। पखुरिन = पँखड़ी। पाल = बाँध।

दो० १८ अपूर (आपूर्ण) = भरपूर। पोते = पुता हुआ, लीपा हुआ। मेद = एक सुगंधित वस्तु, कस्तूरी। ग्याता = ज्ञाता, ज्ञानी। गौरा = गोरोचन। संसकिरित = संस्कृत।

दो० १९ तरहि करिन्ह = नीचे हाथियो (दिग्गजों)। खोह = खाई, खडक। सपत पतारहि = सप्त पाताल। जरे = जटित, जड़े।

दो० २० बाजिरथ = रथ और घोड़े। चूरु = चूर हो जायँ। पाजी (पदातिक) = पैदल। कोतवार = कोतवाल। चपत = दबाते हुए, रखते हुए। काढे = खुदे हुए, बने हुए। नाहर = सिंह। गु जरि = गरज कर। ताईं = तक। केवार = केवाड़। बसेरा = डेरा।

दो० २१ घरियार = घड़ियाल। डाँड़ = डंडा। भाँडा = पुतला। बटाऊ (वटुक) = बटोही, मुसाफिर। गजर = गजर। धजर = वज्र। रहँट = पानी भरने का एक यंत्र।

दो० २२ असुपति = अश्वपति। पखान = पाषाण। चौपारी = चौपाल, बैठक। कीरति = कीर्ति।

दो० २३ बारा = द्वार। पहारा = पहाड़। धूम = धूमिल रंग के। समुद = समुद्र। रिस लोह चबाहीं = क्रोध से लोहे

की लगाम चबाते है। तुखार = तुषार देश के अश्व। रथवाह = रथ के वहन करनेवाले, घोडे।

दो० २४ दर निसान = दल, सेना का डंका। विगसइ (विकसति) = विकसित होता है।

दो० २५ उहै = वही। अछरीन्ह = अप्सराएँ। जेती = जितनी। बारह बानी = द्वादशवर्णी—सूर्य्य के समान ज्योतिवाली। बत्तीसो लच्छनी = बत्तीसो लक्षणवाली। स्त्रियों के ३२ लक्षण ये हैं—(१) नख—रक्तवर्ण (२) पादपृष्ठ—कछुए की पीठ जैसा। (३) गुल्फ—गोल। (४) पैर की अँगुली—अविरल। (५) पैर का तलवा—लाल, शुभ चिह्न युक्त। (६) जंघा—गोल, चढ़ाव-उतारवाला। (७) जानु—बराबर, सुडौल। (८) उरु—अविरल। (९) भग—पीपर-पत्र सी। (१०) भग का मध्य भाग—गुप्त (११) पेडू—कूर्मपृष्ठवत्। (१२) नितंब—मांसल, मांस-युक्त। (१३) नाभि—गंभीर। (१४) नाभि का ऊपरी भाग—त्रिवली-युक्त। (१५) स्तन—सम, गोल, कठोर। (१६) पेट—मृदु, लोम-रहित। (१७) ग्रीवा—कम्बु-वत्। (१८) ओष्ठ—लाल। (१९) दाँत—कुंदवत्। (२०) वाणी—मधुर (२१) नासिका—सीधी, ऊँची। (२२) नेत्र—कंजवत् (२३) भौंह—धनुषवत्। (२४) ललाट—अर्द्धचन्द्रवत्। (२५) कान—कोमल। (२६) केश—नीले, सटकारे, सुकुमार। (२७) शीश—सुडौल। (२८) कलाई—गोल, कोमल। (२९) हथेली—रक्तवर्ण, शुभ लक्षण युक्त। (३०) बाहु—सुडौल। (३१) मणिबंध—नीचे को दबा हुआ। (३२) हाथ की अँगुली—पतली, सुडौल।

दो० २६ मलोनी = सुदर । वरा = प्रदीप्त हुआ, जला । घट = उदर । ओदर = उदर, गर्भ । अवधान = गर्भ । उपना = उत्पन्न हुआ ।

दो० २७ हुति (हुँता) = से । घाटि = कम । छीन = क्षीण । निरमई (निर्मित)= निर्माण किया ।

दो० २८ छठिरात्री = छठी की रात । विहान (विभात) = प्रभात, सवेरा । अरथाए = अर्थ किया । बेसारी = बैठाया । ओनाहीं = आवे , झुकें । वरोक = बरेखी, वररचा, विवाह ।

दो० २९ सँयोग सयानी = विवाह के योग्य । कोई = कुमुदिनी । सोहागहि = सोहागा में । सासतर = शास्त्र ।

दो० ३० उनत = ओनंत, यौवनभार से झुकी । बेधा = विद्ध हुआ, फैला । दुइज = द्वितीया का चद्रमा । कनक जँभीरा = सोनहला नीबू ।

दो० ३१ मोहि = मेरे लिए । आँगि लगावहि = आँख लगाना, किसी की ओर देखना, किसी पर अनुग्रह आना । अनगा = मदन । अग्या = आज्ञा ।

दो० ३२ उआ = उगा । सुजान = सज्ञान, बुद्धिमान् । दारिउँ = दाड़िम, अनार । दाख = द्राक्षा, अगूर ।

दो० ३३ उतर = उत्तर । उबारा = उद्धार । माया = प्रेम । परेवा = पक्षि । धोख न लाग = धोखा नहीं लगा, चूक नहीं हुई । हिये घालि = हृदय मे डालकर । केइ = किसने । खुटक = खुटका । करिया = कर्णधार, केवट ।

दो० ३४ सारी = साडी, वस्त्र । बाद मेलि = बाद लगाकर, बाजी लगाकर । हेरे = ढूँढ़ने ।

दो० ३५ परसे = स्पर्श किया । ओप = कांति । भा = हुआ ।

दो० ३६ मजारी = मार्जारी। ताकि = देखकर। भुकदाता = भोजन देनेवाला। तुईं = तूने। सोग = शोक। बिछोह = वियोग। सुमिरना = स्मरण।

दो० ३७ पहँ = पास। छूँछा = खाली। गहने गही = ग्रहण लगा। पाल = बाँध। आँसु = अश्रु। ऊए = उगे। चिहुर (चिकुर) = बाल, केश। सँकेत = सँकरा, सकीर्ण। सुअटा = शुक, सुआ। दहुँ = (संदिग्धवाचक सर्वनाम) क्या?

दो० ३८ पँखी = पक्षी (शुक)। लहि = लौं, तक। बँदि = कैद। उड़ान-फर = उड़ने का फल। केतन = कितनी। गाढ़ = कठिन, सग।

दो० ३९ बियाध = व्याध। टाटी = टट्टी, आड़। डेली = डलिया, टोकरी। खरभरही = खड़बड़ करते हैं। चारा = दाना, भोजन। चिरिहार = चिड़ीमार। लासा = जिससे पक्षी फँसाते हैं। बिख = विष। बाझा = विद्ध हुआ, फँसा।

दो० ४० आड़ लाइ = टट्टी लाकर, टट्टी की आड़ में। जिवलेवा = जीव लेनेवाला। तिसना = तृष्णा, लोभ, लालच। खाधू = खाद्य। अपाना = अपना। मस्ट = मौन।

---

(२) रतनसेन खंड

दो० १ बारा = बालक, पुत्र। ओहि लागि = उसके लिये। पारखी = परखनेवाले, जौहरी।

दो० २ बेपारी = व्यापारी। रिन = ऋण। बेसाहना—(व्यवसाय) = खरीद फरोख्त। साठि = पूँजी, धन।

दो० ३ झूरै = निष्फल, व्यर्थ। बनिज = वाणिज्य। कुबानी, (कु + वाणिज्य) = बुरा व्यापार। मूर = मूलधन, पूँजी।

दो० ४ मँजूसा = मंजूषा, पेटारी। परमँस = पराये का मास। खाधू = खानेवाले।

दो० ५ काँठा = कंठा, गले मे लाल लकीर।

दो० ६ रजाइ = राजाज्ञा। निरारा = अलग। जोहारा = प्रणाम किया, आदर किया। मेरवौ = मिलाऊँ।

दो० ७ चीन्हा = पहचाना। अगाहु = अगाध, गंभीर।

दो० ८ नाहाँ = नाथ को। ओपनवारी = चमकनेवाली, सुंदर। आन = कसम, शपथ।

दो० ९ आगरि = बढ़ चढ़कर। बिलोनि = लावण्य-रहित। लोनी = सुंदर। पुहुप = पुष्प। सोधे = सुगंध।

दो० १० अँकूरू = अंकुर। पाला = पाला हुआ, पोसा हुआ। साखी = साक्षि, गवाह। तमचूरू (ताम्रचूड़) = मुर्गा।

दो० ११ बिसरामी = विश्राम देनेवाला, मनोरंजन करनेवाला। तुरय...... जाए = घोड़े का रोग बंदर के सिर मढ़ना। कहते है कि यदि अस्तबल मे बंदर रखा जाय तो घोड़ो का रोग बंदर के सिर जाता है और वे नीरोग रहते है।

दो० १२ हतियार = हत्यारा।

दो० १३ विक्रम पछिताना = कथा है कि राजा विक्रम के यहाँ एक शुक था, उसने उन्हें एक दिन एक फल दिया जिसके खाने से वृद्ध युवा हो जाता था। राजा ने वह फल रखवा दिया। किसी साँप ने आकर उसमे अपना मुँह लगा दिया। दूसरे दिन राजा ने वह फल खाने के लिये मँगवाया। मंत्रियो ने सलाह दी कि बिना परीक्षा किए इसे खाना ठीक नहीं। फल का एक टुकड़ा एक जानवर को खिलाया गया। वह मर गया। राजा ने क्रुद्ध होकर तोते को मरवा डाला। पीछे वह फल फेंक दिया गया। कुछ दिन बाद उसके बीज से एक पेड़ तैयार हुआ और उसमें फल लगने लगा।

एक दिन एक बूढ़े आदमी ने मरने की इच्छा से उसके फल को विषैला समझकर खालिया। मरने के बदले वह युवा हो गया। राजा को यह बात मालूम हुई। वह अपनी गलती से तोते के मारे जाने पर पछताने लगा। कहते हैं कि इस तोते का नाम भी 'हीरामन' था। मती = नागमती। गहन = ग्रहण। दोहाग (दुर्भाग्य) = अभाग्य। परहेली = अवहेलना की गई। नाह = नाथ।

दो० १४ रिस ईर्ष्या) = क्रोध। मरम = मर्म, भेद।

दो० १५ सँवर (शाल्मली) = सेमल। भूआ = भूई। दुआ दस = द्वादश। कंठा फूट = जब तोते के गले के चारो ओर रक्तवर्ण चूड़ी सी लकीर पड़ जाती है तब लोग कहते हैं कि वे अच्छी तरह से बोलते है। गला खुलना। सवँरौ = स्मरण करूँ। हरियर = हरा।

दो० १६ भा कली = अभी ब्याही है कि कुआँरी।

दो० १७ राता (रक्त) = लाल। पेम = प्रेम। फाँद = फंदा। दुहेला = दुख देनेवाला, दुखदाई। मेरवै = मिलावे।

दो० १८ बिसहर = विषधर। कौंवर = कोमल। लहरन्हि = लहर लेते हैं। सँकरै (शृखला) = सीकर, जंजीर। फँदवार = फंदेवाले। गिउ (ग्रीव) = गला। कुरी = कुल।

दो० १६ परगसी = परगटी, प्रगट हुई। रुहिर = रुधिर। करवत (करपत्र) = आरा। पूरि = पिरोकर। सोती = सोता, धार। करवत तपा = योगी लोग तीर्थ-स्थानों पर आरे से अपने को चिरवा डालते थे। काशी मे भी लोग इस तरह 'करवट' लेते थे। गाँग = गंगा।

दो० २० जोती = ज्योति । ओति = उतनी । गहासा = गरासा । ध्रुव = ध्रुव तारा । चक = चक्र, आँख ।

दो० २१ भवा = भ्रमा । अपसर्वा (अपसर्पण) = भागना । अहार = पाल, बाँध ।

दो० २२ अनी = सेना । हिरकाइ = लगा । हिरकाना = हृदय से लगाना । बिंब = बिंबाफल । रम = रमा है ।

दो० २३ अनहि चारे = अभी अविवाहित हैं । बतीसी = दाँत । निरमई = निर्मित हुई । छरकि = छटक । दरकि तड़क कर ।

दो० २५ कौंधा = बिजुली । लौकहिं = देखाई पड़ते हैं । कनु = शरद । रीसी = ईर्षा करनेवाले, प्रतिद्वंद्वी । कुंदै फेरि = खराद पर चढ़ा कर । पुछार (पुच्छ) = पूँछवाला, मोर । सकारे = सबेरे । कंठसिरी (कंठश्री) = एक प्रकार का गले का आभूषण ।

दो० २६ भाई (भ्रमित) = फेरी हुई, घुमाई हुई । गाभ (गर्भ) = दल, कोमल पत्ते । बेड़िन = नाचनेवाली, बीड़ा लेनेवाली, पातुरी । लारु = लड्डू । कचोर = कचोल, कटोरी । जँभीर = एक प्रकार का नीबू । वारी = कन्या, फुलवारी, वाटिका । मरोरत = मलते हुए ।

दो० २७ कुइँकुहँ = कुमकुम, रोली । काछे = बनी ठनी, विभूषित । कारी = काली ।

दो० २८ पहुमि = पृथ्वी । कीनी (क्षीण) = पतली । भँवै = भ्रमै । तीवइ = स्त्री की । फेरि जनु लाए = मानो उलट कर लगाए हैं ।

दो० २९ बिसँभारा (वि + सँभारा) = बेसुध । खिनहि = क्षण में । तरासहि = त्रास देते हैं ।

दो० ३० जावत = यहुत से, जितने। गारडी = साँप का विष उतारनेवाले। बावर (बातुल) = पागल। अहुठ = साढे तीन।

दो० ३१ जेई = जीवाँ, भोजन किया। पोई = पकाई हुई। कोइ = कुमुदिनी। साधन्ह = साध से, इच्छा से।

दो० ३२ हेराई = खो जाय। सुल्गाइ लेइ = प्रज्वलित करले।

दो० ३३ बघछाला = व्याघ्रचर्म। किंगरी = एक बाजा, छोटी सारंगी।

दो० ३४ गनक (गणक) = ज्योतिषी। सरेखा = चतुर, सज्ञान। साँटिया = डौंडी पीटनेवाला। कटकाई = सेना की तैयारी। माया = माता। लच्छि (लक्ष्मी) = स्त्री। परिगह (परिग्रह) = नौकर चाकर।

दो० ३५ निश्रान = निदान, अंत में। पोसि (पोषण) = पाल करके। पिरीता = प्यारे। अहिवात = सोहाग, सौभाग्य।

दो० ३६ मतै = राय ले, बात माने। लेखा = समान। गिउ अभरन = ग्रीवाभरण, गले का आभूषण।

दो० ३७ गाँउ = ग्राम। सगुनियै = सगुन विचारनेवाले गोहराई (गोहरण) = पुकारा।

दो० ३८ पाँरी = पाँवरी, खड़ाऊँ। अँकरौरी = अँकरौड = ककटी। दडाकरन = दडकारण्य। खीम = (विजन), निर्जन।

दो० ४० सीस पर मागा = आपकी आज्ञा सिर पर है। कौडिया = पक्षि विशेष, कौडिला (King fisher)

दो० ४१ दत्त = दान। भरम = भ्रम। पेले = तेजी से चले। ठाटी = समूह।

दो० २२ सुफल लागि = अच्छे फल के लिये। जन्म .. भींजा = जन्म भर यदि भीगे तो भी पानी उसके अंदर न जाय। तरेदा = तैरनेवाला, तेराक।

दो० २४ कुस्टि = कोढ़ी। धनि = धन्या, स्त्री, नारी।

दो० २५ बिलमांवा = विलंब किया, भरमाया। निस्तर = निस्तार, छुट्टी। अधजर = आधा जला।

दो० २६ आंचर = अंचल। तो पहँ = तुम्हारे पास। अछरी = अप्सरा।

दो० २७ निहचै = निश्चय। डभकहि = डबडबाते हैं, जल-पूर्ण होते हैं। परगट = प्रकट करते हैं। सूत = सूत्र।

दो० २८ मयारू = दयालु, मया, प्रेम, स्नेह। ओका = उसको। सिवलोका = शिवलोक, स्वर्ग। थांक = थाँका, सुंदर। कोटवारा = कोतवाल, रक्षक। मरजिया = जीविकिया, वह मनुष्य जो समुद्र में गोता लगाकर मोती आदि निकालता है।

दो० २९ ताल कै लेखा = ताड़ के समान ऊँचा। गुटेका = गुटिका, गोली। परी हूल = शोर हुआ, हल्ला मचा।

दो० ३० जुगुति (युक्ति) = अवसर, ढंग। भुगुति = भिक्षा, भोजन। बार = द्वार, रास्ता। ओरा = ओर से, तरफ से। साखि = साक्षि। निहोरा = लिये, वास्ते।

दो० ३१ रीसा (ईर्ष्या) = क्रोध। धरती चाटा = पृथ्वी पर रहकर आत्ममान चाटना। मिलाओ—रहे भूई चाटे बादर। अस्ति नास्ति = बनाना, बिगाड़ना, सृष्टि और प्रलय। जारा = देर। छारा = धूल। नए = झुके, नम्र हुए। कोह = क्रोध।

दो० ३२ बसिठन्ह = दूत। ठाँव = स्थान। माखे (अमर्ष) = अमर्ष हुआ, क्रुद्ध हुए। सँजोउ = युद्ध की तैयारी। पति = प्रतिष्ठा, शान, इज्जत। मोखू = मोक्ष। दोखू = दोष। जोगी

पेले = बिना गये योगी कहाँ रहते हैं। आछे = रहने। भख = भक्षण।

दो० ३३ माँझी (मध्य) = बीच में पड़नेवाला, केवट, रास्ता दिखानेवाला। राती = रक्त, लाल। नाठा = नष्ट। मसि = स्याही।

दो० ३४ राती = अनुरक्त। बसंदर = बैस्वानर, अग्नि।

दो० ३६ ताती = तप्त, जलती हुई। पवारी = फेंक।

दो० ३७ हौ = मैं। थिर = स्थिर, निश्चल। आँगी = चोली। भोरी = भोली। घाला = डाला।

दो० ३८ केत = केतकी। महुँ = मैं भी।

दो० ३९ झूरा = दुखित हुआ। झूरा = देर। केवा = केतकी। सामि = स्वामि।

दो० ४० पाति = पत्र। बेहराना = अलग हुआ। सँभारा (स्मृ) = स्मरण किया। सँधि (सधि) = नकब।

दो० ४१ राध = परिपक्व, बुद्धि में परिपक्व। अपसवहि (अपसरण) = जायँ। छरहि = छलें, छल करें। छर = छल। बसाई = बस।

दो० ४२ गुदर = गुजारिश, विनय। कटक = सेना। जूझ = युद्ध। गाढ = कष्ट। सौंह = सामने।

दो० ४३ विसमौ = विस्मय, दुःख। नासी = नष्ट हुई।

दो० ४४ इतराहीं = इतराते हैं। तरौ = तर जाऊँ। करवत (करपत्र) = आरा।

दो० ४५ बिहानी = सबेरा हुआ, व्यतीत हुई।

दो० ४६ गरासी = ग्रसित हुई। निसँस = निश्वास लेकर। गहेली (गृहीत) = ग्रसी हुई।

दो० ४७ उघेली = उघाड़ी। झाँपा = ढपा हुआ। चख = नेत्र।

दो० २२ सुफल लागि = अच्छे फल के लिये। जन्म . .. भींजा = जन्म भर यदि भीगे तो भी पानी उसके अंदर न जाय। तरेंदा = तैरनेवाला, तैराक।

दो० २४ कुस्टि = कोढ़ी। धनि = धन्या, स्त्री, नारी।

दो० २५ बिलमाँवा = विलंब किया, भरमाया। निस्तर = निस्तार, छुट्टी। अधजर = आधा जला।

दो० २६ आँचर = अंचल। तो पहँ = तुम्हारे पास। अछरी = अप्सरा।

दो० २७ निहचै = निश्चय। उभकहि = डबडबाते है, जल-पूर्ण होते हैं। परगट = प्रकट करते हैं। सूत = सूत्र।

दो० २८ मयारू = दयालु, मया, प्रेम, स्नेह। ओका = उसको। सिवलोका = शिवलोक, स्वर्ग। बाँक = बाँका, सुदर। कोटवारा = कोतवाल, रक्षक। मरजिया = जीविकिया, वह मनुष्य जो समुद्र में गोता लगाकर मोती आदि निकालता है।

दो० २९ ताल के लेखा = ताड के समान ऊँचा। गुटेका = गुटिका, गोली। परी हूल = शोर हुआ, हल्ला मचा।

दो० ३० जुगुति (युक्ति) = अवसर, ढग। भुगुति = भिक्षा, भोजन। बार = द्वार, रास्ता। ओरा = ओर से, तरफ से। साखि = साक्षि। निहोरा = लिये, वास्ते।

दो० ३१ रीसा (ईर्ष्या) = क्रोध। धरती चाटा = पृथ्वी पर रहकर आसमान चाटना। मिलाओ—रहे भूईं चाहे बादर। अस्ति नास्ति = बनाना, बिगाड़ना, सृष्टि और प्रलय। बारा = देर। छारा = धूल। नए = झुके, नम्र हुए। कोह = क्रोध।

दो० ३२ बसिठन्ह = दूत। ठाव = स्थान। मारखे (अमर्ष) = अमर्ष हुआ, क्रुद्ध हुए। सँजोउ = युद्ध की तैयारी। पति = प्रतिष्ठा, शान, इज्जत। मोखु = मोक्ष। दोखु = दोष। जोगी

दो० १० हुतें = से।

दो० ११ रसना = जिह्वा, जबान। करमहि = कर्म में। पति = मालिक, स्वामी।

दो० १२ बरोक = बरच्छा, वरदक्षिणा, फूलदान। श्रोनाहँ = उमगयुक्त।

दो० १३ सगरौ (सकल) = सब। गोहने = साथ में। मसियार = मशाल। ताईं = तब, पास।

दो० १४ चित्तर-सारी = चित्रसारी। बैसारा = बैठाया। पसरे = फैलाये थे। पनवार = पत्तल, पुरइन के पत्ते की पत्तल। खँडवानी = खाँड + पानी, शरबत, रस। अरगजा = चंदन। कुँहकुँह = कुमकुम, केसर।

दो० १५ तरइन्ह = ताराओ। सत भावँरी = विवाह के अवसर पर दी हुई सात भाँवर। छुट कै = हठ करके।

दो० १७ अथवै = अस्त हो। पत्रावलि = पत्रभंग, खाल बनाने की एक विधि।

दो० १८ सदूर = शार्दूल, सिंह। पहुँची = कलाई। लाजि = लज्जा कर।

दो० १९ कुरकुटा = मोटा अन्न।

दो० २० छूति = छूत। पार = सके।

दो० २१ चिन्हारी = दोस्ती, जान-पहचान। निसियर = चन्द्र, निशाकर। दिनअर = दिनकर, सूर्य। छाँहा = छाया, प्रतिछाया।

दो० २२ तुम्ह हुँत = तुम्हारे लिए। पुहुप = पुष्प। दाधा = दग्ध हुआ, अनुरक्त हुआ।

दो० २३ परचिउँ = परीक्षा की, चर्चा की, सौंप लिया। अनाइ = अवनत की, नवाई। ओटि = औंट करके।

दो० ४८ वैद = वैद्य । धनि = स्त्री । झारा = ज्वाल ।

दो० ४६ दुहेली = दुखित ।

दो० ५० पौरि = पौल, दरवाजा । भोरू = प्रभात । सूरी = वह स्थान जहाँ मृत्युदंड दिया जाता है, सूली ।

दो० ५१ परसेद = प्रस्वेद ।

---

(४) भेंट खंड

दो० १ सूरू = तुरही । मसूरू = एक मुसल्मान फकीर जो 'अनलहक' अर्थात् 'अहम् ब्रह्म' कहा करता था । इसी कारण काफिर बतलाकर लोगों ने उसे सूली पर चढ़ा दिया था । मसूर ने प्रसन्नतापूर्वक यह दंड स्वीकार किया था । भाव = कारण, उद्देश से ।

दो० २ निबेरा = निपटारा, उद्धार । पहुमि = पृथ्वी ।

दो० ३ गाढ़ = कष्ट । साजू = सामान, तैयारी । गुपुत = छिप कर । कटक = सेना ।

दो० ४ विपति = विपत्ति । दसौंधी = भाटों की एक जाति ।

दो० ५ औंधी = उलटी, नीची । असाई = अताई । रनघट = रणभेरी । कुरी = कुल ।

दो० ६ अभाऊ = अशिष्ट । बरम्हाव = आशीर्वाद । खरि = खरा ।

दो० ७ भाँटकरा = भाँट की भांति । तोका = तुझे । कचोरी = कटोरी ।

दो० ८ ओहट = ओट, दूर, आँख के सामने से दूर । हींछा = इच्छा । चालौं = चलाऊँ । ठाट = झुंड, समूह ।

दो० ६ उरए = उमड़े । दर = दल । ईसर = महादेव, ईश्वर । सो . साजा = उसी ने वैर साधा है । बारि = बाला, कन्या ।

(५) नागमती खंड

दोहा १ नागर = नायक, रतनसेन। नारायन बावँन करा = ईश्वर वामन कला के रूप में। करन = राजा कर्ण। छद = छल। अपमवा = चल दिया। पींजर = पजर, ठटरी।

दो० २ बाउर = वातुल, बावला, पागल। रामा = नारी। नारी = नाडी। चोला = शरीर। पहर गेला = एक प्रहर में मुख से निकली हुई बात समझ पड़ती है। पयान = प्रयाण, जाना। आहि = आह।

दो० ३ हारु = हार। मेरावा = मिलाप, मेल। टेकु = रोक, मह। थीति (स्थिति) = स्थिरता। साजन = प्रिय। अकम = अक, अँकवार। पलुहत = पल्लवित होते हैं।

दो० ४ साम = श्याम। ओनई = अवनत हुई, झुकी, घेर ली। गारौ = गौरव।

दो० ५ मेह = मेघ। सरेखा = चतुर, श्रेष्ठ। भँभीरी = एक पतंगा, भँवर (?)। ताकी = देखी। थाकी = थकी, अथवा, हे।

दो० ६ दूभर (दुर्वह) = कठिन। अनतै (अन्यत्र) = अलग, दूसरी जगह। तरासा = त्रास देता है। ओरी = ओलती, छाजन का किनारा। पूरबा = पूवा नक्षत्र।

दो० ७ लटा = निर्बल हुआ। पलुहै = पल्लवित हो। तुरय = तुरग, घोड़े। पलानि = कसकर। साले (शल्य) = दुःख दे। बाजहु = लड़ो। गाजहु (गर्ज) = गर्जन करो। सदुर = शार्दूल, सिंह।

दो० ८ अगि दाहू = अग्नि के समान दाह, ताप। देवारी = दिवाली। तिउहार = त्योहार।

दो० २४ मेराने (शीत) = ठढे हुए।

दो० २५ खाँगी = घटी, कम हुई। कापर = कापड, कापड़े।

दो० २६ नए चार = नई चाल से, पुन । कुईं = कोईं, कोकाबेली, कुमुदिनी। ऊईं = उगीं। नाहू = नाथ।।

दो० २७ सोधे = सुगन्ध। खरी = खडी। घिरित (घृत) = घी।

दो० २८ कटकई = कटक की तय्यारी, सेना की तय्यारी। कोरहि = कोर से, किनारे से। पैज = प्रतिज्ञा। खाँचौ = खींचते हो। महूँ = मैंने भी।

दो० २९ बीर सिगार = बीर और शृंगार रस। खँधार = तबू, डेरा। धरहरिया = बीच मे पडनेवाला, मध्यस्थ।

दो० ३० सुरितु = सुऋतु। मगा = माँग। छिरका = छिडका। सैार = चादर। सुपेती = गद्दा, बिछावन। डासी = बिछाई। धनि औ कत = स्त्री और पुरुष। देवहरे (देवगृह) = देवमदिर।

दो० ३१ झीना = महीन। मेद = कस्तूरी। सिअर = शीतल। सोवनारा (स्वप्नागार) = सोने का घर। ओहारा = परदा। तमोर = ताबूल, पान। दारिउँ = दाडिम।

दो० ३२ पाँति बग = वक-पक्ति।

दो० ३३ आसिन = आश्विन। सोनफूल = सोनजुही। गरे = गले।

दो० ३४ जूझ = युद्ध। अघाहीं = संतुष्ट होते हैं।

दो० ३५ सिसर = शिशिर। दगल = दगला, एक प्रकार का अगरखा, चोला। जानहुँ भागा = जैसे राम के बाण से व्यथित होकर जयत भागा था।

दो० १८ पुछार = पूछनेवाली, मयूर, मोर। चिरुवाँसू = फदा, चिड़िया फँसाने का फदा। रोस = रोष। बया = एक पची। गोरवा = चरक् पची। तिलोरी = देसी मेना। कटनमा = काटने तथा नाश करनेवाला, नागफ कटक। नित्रर = समीप।

दो० १९ फरमुसी = फलमुरी। ताती = तप्त। रासी = ढेर, समूह। पराम = पलास। टेसरा = टेश। हेवत = हेमत ऋतु।

दो० २० न लावसि आँखी = आँख न लगना, नींद न आना। कारन कै = करुणा करके, दुख से। कत निछोई = कंत से वियोग हो जिसका, विरहिणी। नाहू = पति, नाथ।

दो० २१ बीरा = भाई। सिरै = भीम। अँगवै = अगीकार करै। किंगरी = किंकरी, चेरी। खप्पर = पात्र, जिसे कापालिक लोग लिए रहते हैं। किगरी = चिकारा, एक बाजा।

दो० २२ बरता = ब्रत। रावठ = रावली, महल। बारी = बाला।

दो० २३ बराही = जलते हैं। सरवन = श्रवणकुमार, श्रमण कुमार की कथा उत्तर भारत में प्रचलित है। कहते हैं कि श्रमण अपने अंधे माता पिता को बहिंगी पर लिए हुए फिरता था और उनकी सेवा करता था। यह कथा बौद्धों में प्रसिद्ध हुई और बौद्ध भिक्षुक इसे गाते फिरते थे। हपारा = चिल्लाया।

दो० २४ उतग = ऊँचा। गँभीर = गहन, घनी। तुरय = तुरग, घोड़ा। परिन्द = पक्षियों की। मामा = श्याम। मासक दुइ = दो मास के लगभग। दाहे = दग्ध हुए।

दो० २५ निसरा = निकला। धुँध = अधकार। वेसा = भेस। महूँ = मैं भी। गनै = गिनता है।

दो० २६ घमोई = सत्यनाशी नामक वनस्पति, भँडभाँड़। बँधा = बाँधकर। काँवरि = बहिंगी, जिसे कंधे पर रखते

दो० ६ बहुरा = लौटा । बिछोई = छोड़ करके, बिछोह करके । सुलुगि = सुलगकर, जलकर । सँदेसडा = संदेश ।

दो० १० चाँपा जाई = दबाकर पहुँचा । हियरे = हृदय में । सचान = बाज, श्येन । गरा = गल गया । ररि = रटकर ।

दो० ११ माहा = माघ । महवट = मववट, माघ की झड़ी । झोला = झकोरा, झोका । तिनउर = तिनका । झोल = राख, भस्म ।

दो० १३ उजारी = उजाड़ दिया । मँजीठ = मजीठा । बौरे = बौरना । घिरिनि = गिरहबाज कबूतर ।

दो० १४ चोत्रा = एक सुगंधित द्रव्य । बजागि = बज्राग्नि । भार = भाड़ । भड़भूजों के भाड़ की आग बड़ी तेजी से जलती है । बिहरत = विदीर्ण होता हुआ । दवँगरा = वर्षा की झड़ी ।

दो० १५ लुवारा = लू । गाजि = गर्जन करके । पलका = पर्यंक, पलँग अथवा लंका के ओर आगे का स्थान । अधजर = आधी जली । हाडन्ह = हड्डियों में । सराहिए = सराहना कीजिए ।

दो० १६ छाजनि = छाजी, छप्पर, छत । तिनउर = तिनका । कंध = धर्णाधार, सहायक । नूँछा = खाली । टेक = आधार । थाँभ = खंभ । थूनी = लकड़ी की टेक । छपर छपर = सराबोर, पानी में लतपत । कोरो = काँडी, बाँस या लकड़ी जो छप्पर में लगती है । नव कै = नए सिरे से ।

दो० १७ बरख = वर्ष । सेराई = व्यतीत हुआ । सुनारी = नागमती । गरा = गला । नेह = स्नेह । जुड़ावहु = शीतल करो । झखि = दुखित होकर । बूझि = पूछकर । पखि = पक्षी ।

दो० ४१ मंझि = शरीर में । निरमर = निर्मल । हुती = थी ।
पहल = पहली, गाढ़ी । दुहेल = दुःख ।

दो० ४२ तहूँ = तू भी । मोकों = मुझे, मुझको । सिवलोक = स्वर्ग ।

दो० ४३ निछोई = स्नेहरहित ।

दो० ४४ परसा = स्पर्श किया । रज = धूलि । अचरज = आश्चर्य ।

दो० ४५ आथी = अर्थ, पूँजी ।

दो० ४६ सरवन = श्रवण, कान । सावद = शावक । सादूर = शार्दूल, सिंह । मूर = मूल । कटक = सेना । पयान = प्रयाण ।

दो० ४७ अँदोरा = आंदोलन, हलचल । तुचा = त्वचा । सुचा = सोच, ध्यान । सहेलरी = सहेली । ठगा = ठगा ।

दो० ४८ सीअर = शीतल । नग चार = नग सिरे से । छन = क्षण । दर = दल । ओनए = घेरे ।

दो० ४९ बेवानू = विमान, पालकी, सवारी । हेम सेत = सफेद हिम, पाला । उघरिगा = खुल गया ।

दो० ५० निधनी = निर्धन । बोहगा = दहेरा । मँगतन्ह = मँगतों को । डांग = डंडी ।

दो० ५१ पोढ = बड़े, पुष्ट । पलुहाई = पल्लवित की । ठावँ = स्थान ।

दो० ५२ निसांसी = निश्वास । रहँट = रहट, जलयंत्र । पंक = कीचड़ ।

दो० ५३ छिरक = पास जाय । करिया = काला ।

दो० ५४ सारिउ = सारिका । रहसत = केलि करते हुए । खूसट = मनहूस ।

है। इसके दोनो छोरो पर दो सींके लगे रहते है। पांजर = पजर, ककाल, ठटरी। जरी = जडी, औषधि।

दो० २७ सगरो = सब, सकल। गोहरावा = पुकारा। बिसभर = बेसुध। बारा = पुत्र।

दो० २८ कांच = कच्चा सीसा। पाती = पत्र।

दो० २९ बिरवा = विटप। भावा = अच्छा लगता है। सिधावहि = सिधारैं। आउ = आयु। गवने = गमन, चलन।

दो० ३० सदबरग = सदवर्ग, गेंदा। धसकि = धँस गया। निछोह = स्नेह-रहित।

दो० ३१ गरब = गर्व। किरोध = क्रोध। तूरे = तोडे।

दो० ३२ टेक = रोक। गुरेरा = साचात्, देखादेखी।

दो० ३३ बाउ = वायु। उल्थाना = उमडा।

दो० ३४ पाटा = पटरा, तख्ता। लछि = लक्ष्मी। तीवइ = स्त्री।

दो० ३५ कागर = कागज। पतरा = पतला। छीजा = कम हुआ। कोरें [क्रोड] = गोद।

दो० ३६ पसार = फैलाकर। चेती = चेत करके, होश करके। बही = बहती हुई। सर = चिता।

दो० ३७ भहर भहर = भर-भर करता हुआ, आग जलने का शब्द। बरा = बला, जला। खीन = चीण। खरी = खडी। सो = वह।

दो० ३८ खटनाट = खटपाटी। स्त्रियाँ आय रूठकर खाट पर जा पडती है। सेसा = शेष।

दो० ३९ मेरवसि = मिलाता है। आऊ = आयु। बिछोहा = वियोग।

दो० ४० गीउ = गला, ग्रीवा। बेसाखी = लाठी। अपघाता = आत्मघात। परिहँस = परिहास।

दो० ४१ भाँडे = शरीर में। निरमर = निर्मल। हुती = थी। बहल = बहली, गाड़ी। दुहेल = दुख।

दो० ४२ तहूँ = तू भी। मोकां = मुझे, मुझको। सिवलोक = स्वर्ग।

दो० ४३ निछोई = स्नेहरहित।

दो० ४४ परसा = स्पर्श किया। रज = धूलि। अचरज = आश्चर्य।

दो० ४५ आथी = अर्थ, पूँजी।

दो० ४६ सरवन = श्रवण, कान। सावक = शावक। सादूर = शार्दूल, सिंह। मूरु = मूल। कटक = सेना। पयान = प्रयाण।

दो० ४७ अँदोरा = आंदोलन, हलचल। तुचा = त्वचा। सुचा = सोच, ध्यान। सहेलरी = सहेली। उवा = उगा।

दो० ४८ सीअर = शीतल। नए चार = नए सिरे से। खन = क्षण। दर = दल। ओनए = घेरे।

दो० ४९ बेवानू = विमान, पाल्की, सवारी। हेम सेत = सफ़ेद हिम, पाला। उघरिगा = खुल गया।

दो० ५० निधनी = निर्धन। बेहरा = बटोरा। मँगतह = मँगनों को। डांग = डोंडी।

दो० ५१ पोढ़ = कड़े, पुष्ट। पलुहाई = पल्लवित की। ठावँ = स्थान।

दो० ५२ निर्मासी = निर्मांस। रहँट = रहट, जलयंत्र। पंक = कीचड़।

दो० ५३ हिरक = पास जाय। करिया = काला।

दो० ५४ सारिउ = सारिका। रहसत = केलि करते हुए। खूसट = मनहूस।



दो० ५६ सँगतराव = संगतरा नीबू।

दो० ५७ रोवाँ = रोम, बाल, आम की गिठुली में रोएँ होते हैं। अभेरा = लटाई, भिड़त। अँबराव = बाग।

दो० ५८ तेंदू = तेंद नामक वृक्ष। टेटी = करीर का फल (?)। दारिउँ = दाड़िम, अनार। दाख = द्राक्षा, अंगूर। खाजु = लड्डू। खूझागाजु = खूर ग्वार, व्यर्थ वस्तुएँ।

दो० ५९ ढेल न बाहा = ढेला न फेंका।

दो० ६० केवा = कमल। दई = दैव। पोत = काँच की बनी मोती। राँध = समीप।

दो० ६१ रोठा = रोड़ा, कठोर टुकड़ा। गटा = कमल का बीज। परगटा = प्रकट होना। देसिहै = देगा। हियरा = हृदय। बहरावसि = बहलाता है। भरसी = भरती है। करसी = करती है। भूँज = भूनी है।

दो० ६२ बिगास = विकास। तिमिर = अंधकार। हार = माला।

दो० ६३ जरि = जड़। बिसाइँध = बदबू। तेहिके = उसके।

दो० ६४ तमचूर = मुर्गा, अरुणशिखा। पुछारी = मयूर। बेसरि = नाक में पहनने का आभूषण, लटकन। बिबाहीं = कुँदरू, बिंबा। मराल = हंस। पुहुप = पुष्प। बसाइ = बसता है। लुबुध = लुब्ध।

दो० ६५ ठाएँ = स्थान। गही = डसी। अखारे = अखाड़े में। कोई आग न मोरा = कोई पीछे न हटा, किसी ने मुख न मोड़ा। ठग लाडू = वह लड्डू या मिठाई जिसे ठग लोगों को खिला कर उन्हें ठगता है। प्राय इसमें विष या नशीली चीज मिली रहती है। मींचु = मृत्यु। धरहरिया = बीचबिचाव करनेवाला।

दो० ६६ काहे क = क्यों। सोन = स्वर्ण।

---

(६) राघव चेतन खंड

दो० १ आऊ सरि = आयु पर्यंत । बाउर
सरेसा = होशियार, सचेत, चतुर । जा
दो० २ दिस्टिबंध = कौतुक, इन्द्रजाल ।
चेटक = कलाबाजी, माया । काँवर = व
= छल किया ।
दो० ३ बानि = वर्ण, रंग । निसारा = निका
दो० ४ निहकलक = निष्कलंक, कलंकरहित
कँगन । पवारा = फेंका । मारा = माला
दोष । परेतु = भूत, प्रेत । सनिपातू = सन्निपात रोग ।
मृगी । बातू = वायु ।
दो० ५ पराइ = दूसरे की । ठगोरी = ठगी ।
पागलपने की । बटपारा = रहजन, रास्ते में लूटने
वाले । बरज = रोके । गोहारी = मदद को दौड़े । बटपारी
अलक = बाल ।
दो० ६ दच्छिना = दक्षिणा, दान । हँकारि = बु
बुलाकर ।
दो० ७ एता = यहाँ । सैमौ = सैशय । रहनि = रा
खाँगीं = मुझे कमी हो । ढरें = ढलै । टकसारा =
साल, जहाँ मुद्रा बनाई जाती है ।
दो० ९ मया = मेहरबानी की । हँकारी = बुलाकर । पूगा
बराबरी कर सका । मनि = मणि । अछरी = अपसरा
दो० १० परगसा = प्रकाशित हुआ । जोग = योग्य । सँभारि =
स्मरण कर, होश कर । ओरें = एकत्र किया । देखि लोन
बिलासी = लावण्य को देखकर लवण की भांति गल जाती है ।
चक्कवै = चक्रवर्ती राज करता हूँ ।

दो० ११ कहवावा = कहलाया। चितेर = चित्रकार।

दो० १२ बेकरारा = बेकरार, विकल। डासहि = बिछावें। सौर = चद्दर।

दो० १३ पाहाँ = से। परस = पारस। रोझ = घोड़रोज, नील-गाय। सचान = बाज पक्षी। सायर = सागर।

दो० १४ पहिरावा = वस्त्र पहनाया। जोरी = जोड़ी। दिनार = दीनार नामक स्वर्णमुद्रा। अनेग = अनेक।

दो० १५ दैउ = दैव। बोलु = वचन।

दो० १६ घरनि = घरनी। सकबंधी = साका बाँधनेवाले। सैरधी = सैरंध्री, द्रौपदी। ताका = देखता है, ताक लगाता है। मोछा = मूँछ।

दो० १७ आपु जनाइँ = अपने को जनाकर, अपनी बड़ाई करके। बारा = देर। मारु = अमर्ष, रोष, वैर। अग-मना = आगम, भविष्य में होनेवाली घटना।

दो० १८ वूझा (बुद्ध) = बोधित हो। सकाना = शंकित हुआ। बारिगह = डेरा, सीमा। नेम्ररा = समर। सरह = शलभ, टिड्डी।

दो० १९ पैगह = परिग्रह। बाँक = बाँके, तीखे। कनकानी = एक प्रकार के घोड़े। लोहसार = लोहे का सार, फौलाद। बाने = बाना, पहनावा। पारा = सकता है। खड़गी = खड्ग, गदा, तीर। बेहर बेहर = अलग अलग। पयान = प्रयाण, यात्रा।

दो० २० दर = दल। दोराई = दौड़ाया, शीघ्र भेजा। मेंड़ = बाँध, रोक। बारि = पानी।

दो० २१ एकमते = एकमत। नाता = संबंध। जौहर = राज-पूतों में प्रथा थी कि उनके हारने पर उनकी स्त्रियाँ आग में कूदकर जल मरती थीं—इसे जौहर कहते थे।

दो० २२ र्‌गाग = कमी । धानुक = धनुषवाले । आंटी = पर्याप्त हुई । अंगुरन = अंगुल । ठारे = खड़े । लेखे लाव = गिनती में आवे ।

दो० २३ जूहा = यूथ, समूह । थैरख = तल्वार (?) । धार = धूल ।

दो० २४ सैगेव = तय्यारी । अवूत = अगणित । धुजा = ध्वजा, पताका । अनी = सेना ।

दो० २५ सेन = सेना । अवाई = आगमन । सकति पोखि = शक्ति भर सब पोषण करते थे । ओछ जानव = थोड़ा पूरा (भली भांति) उसे समझे । थिर = स्थिर । जोखि आवत = समझता हूँ ।

दो० २६ अथवा = अस्त हुआ । थाम्हा हुआ = घेरा हुआ । नखत = नक्षत्र ।

दो० २७ गरेरा = घेरा, धावा । छेका = छेंक लिया, घेर लिया । गरगज = बुर्ज जिस पर तोप रखी जाती है । दारू = बारूद । ओदरहि = विदीर्ण होते हैं, ढह जाते हैं ।

दो० २८ राजगीर = थवई, मेमार । थवई = मेमार । गाजा = बिजुली, वज्र । परतीं = प्रत्यय । जूझ = युद्ध । सोंह = सामने ।

दो० ३० परदामें = पत्र । हरेव = देश विशेष । थाने = चौकियाँ । पराबा = दूसरे का । जिन्ह बबूर = जिन रास्तों में इतनी सफाई थी कि तिनका भी नहीं जमता था वहाँ बेर, बबूर उगे हैं ।

दो० ३१ भेउ = भेद । सेउ = सेवा । चूरा = चूर्ण । अयया = आज्ञा । छाजा = शोभता है, उचित है ।

दो० ३२ ऐगुन = अवगुण । भँडारा = भांडार, धन । इसकदर = सिकन्दर । बाचा परवाना = वचन प्रमाण । नाव = नाप ।

नाव ग्रीवा = जो भार सिर पर रखकर गर्दन हिलाता है अर्थात् जो उत्तरदायित्व लेकर हिचिकता है। सरजै = सरजा नामक दूत।

दो० ३३ हुत = सहित। कोहू = क्रोध। सोझा = सीधा, सामने। रसोइ = भोजन।

दो० ३४ जत = जितने। जेवाँ = भोजन किया। बिवान = विमान। पँवरि = दरवाजा। उरेह = चित्र।

दो० ३५ केवारा = केवाड। छहराने = छितराए हुए।

दो० ३६ अगोरे = रखवाली करें।

दो० ३७ गुन = गुण, तागा। खाँच = खींच।

दो० ३८ रावत = सामत। मेरु = मेल। सिह मँजूसा = कथा है कि एक ब्राह्मण ने एक सिंह को पिंजडे से निकाल दिया था। वह उसे खाने दौडा। दोनों में वाद-विवाद होने लगा। एक श्रृगाल पच हुआ। उसने कहा पहले सिंह पिंजडे मे चला जाय तो हम न्याय करे। सिंह पिंजडे मे चला गया। ब्राह्मण ने द्वार बद कर दिया और अपना रास्ता लिया। सिंह अपने किए का फल पा गया। सिंघ छान अब गोन = सिंह अब गोन (रस्सी) से बँधा चाहता है।

दो० ३९ निसरीं = निकलीं। रायमुनी = लाल पक्षी। सारँग = धनुप।

दो० ४० हना परछाहीं = अर्जुन ने तेल में मछली की छाया देखकर बाण मारा था और द्रौपदी से ब्याह किया था। सँधान = अचार। बूकहि बूक = मुट्ठि भर भर कर।

दो० ४१ खँडवानी = शर्बत, रस। अरगजा = चंदन। कुहँ-कुहँ = कुमकुम, केसर। थारहि = थाली में। घालि पागा = गले में पगडी डालकर, नम्रता तथा विनय सूचक चेष्टा है। सुदिस्टि = कृपादृष्टि।

दो० ४२ भीति = दीवाल। लावा = लगा था। तरई = तारागण। जेहि = जिससे।

दो० ४३ सरेखी = चतुर। झाँपा = ढापा, छिपा। लागि सोपारी = सोपाड़ी लगी। कभी-कभी सोपाड़ी खान से अधिक गर्मी होती है और मनुष्य बेसुध हा जाता है इसे सोपाड़ी लगना कहते हैं। पैढावहि = सुलाते हैं।

दो० ४४ बिसमयऊ = विस्मय हुआ। करन्ह ऊहा = हाथों में था। लोकि = चमत्कार। चाँकना = चमकना। पतीजु = पतियाना, विश्वास कर

दो० ४५ आँकुस = अंकुश। महाउत = हाथीवान। उचका = कूदा, ऊपर उठा। हेरत = ढूँढ़ते हुए, देखते ही। आछत = है, अस्तित्व है। यह तन सके न = यह शरीर पंख रखकर क्यों नहीं उड़ जाता।

दो० ४६ निसचे = निश्चय। अब सोई मति कीज = अब वही विचार कीजिए। रस लीज = रस लीजिए।

दो० ४७ मीत पे = मित्र से। माछ = मत्स्य। काछु = कच्छप। चीत = चेतता है, विचारता है। दोह = द्रोह।

दो० ४८ साँकर = शृंखला। मँजूषा = पिँजड़ा, कैदखाना। बखाना = बचा, हाल। खूँदा = कूदा। मूँदा = बंद किया। मीन = मत्स्यावतार। पडव = पाडव। अथवा = अस्त हुआ।

दो० ४९ निचित = निश्चित। छाए = रहे। नियहुर = वह स्थान जहाँ जाकर कोई लौटे नहीं। लेजुरि (रज्जु) = रस्सी। ढारे = ढाले, गिरावे।

दो० ५० नागा = नागमती। पलुहे = पल्लवित हो। डचा = उचटा, दुखी। नाह = नाथ।

(७) युद्ध खंड

दोहा १ हियमालू = हृदय में सालनेवाला, खटकनेवाला। छुर = छल। नेवरै = निपटै, पूरी हो। जोई = जोय, स्त्री। विरिध = वृद्धा, बूढ़ी। दर = दल। कर बर छुर = कल बल छल।

दो० २ खेरौरा = एक प्रकार की मिठाई। पेज = प्रतिज्ञा। बैस = वयस। बेवसाइ = व्यवसाय, काम। हेरान = खो गया।

दो० ३ जोहन मोहन = देखते ही मोहनेवाला (मन्त्र)। बरोठा = बैठक। सीपा = सीप से।

दो० ४ गीउ तूरि = गला मरोड़ कर। कंत = पति। कुहुकि = कूक भरकर।

दो० ५ सुठि = अच्छी तरह। करमुखी = कलमुखी, जिसका मुख काला हो। आन (अन्य) = दूसरा। बैन = वचन, बकवाद, बक-बक।

दो० ६ खभारू = खभार, शोक। कस = कैसे। सँकेती = समेटकर। और सँकेती = उस हाथ से और वस्तु नहीं छुओंगी जिस हाथ को एक बार समेट चुकी हूँ। ओहि दीठी = उस रतसेन रूपी रत्न के स्पर्श से मेरा हाथ लाल हो गया है और मोती को हाथ में लेने से वह लाल गुंजा के सदृश हो जाता है पर आँखों के तिल की छाया पड़ने पर वह मोती जो हाथ के स्पर्श से लाल हो गया है काले दाग-वाला हो जाता है और गुंजा के समान दिखाई पड़ता है। पारे = सके। करवा = कड़ुवा। रूख = रूखा। सवाद = स्वाद।

दो० ७ रहसि = रहती है (तू)। कोवरि = कोमल। बैस = वयस। पोनारी = पद्मनाल। तमोरा = ताम्बूल। सँभार = शृंगार। बार = देरी

दो० ८ उजार = उजाड़। माढी = मच, मचिया। जामी = लगी।

दो० ९ कोहाइ = क्रोध करता है। छपान = छिपेगा। बिरासी = विलासी। परासी = भागती है। बिरिध = वृद्धावस्था। बान = बाण। धनुक = टेढ़ी कमर।

दो० १० खेरा = घर, बस्ती, स्थान। थर = स्थल, स्थान। सेव = सेवा। पछितासि = पछताएगा। लोना = सुंदर। कोंप = कोंपल।

दो० ११ रँग = भिखारी। राचा = आसक्त हुआ। बाटा = रास्ता। दिढ = दृढ। सोहाग = सौभाग्य। सँवरा = स्मरण किया। हेरा = ढूँढा।

दो० १२ रसोई = भोजन। भरे न हीया = जी नहीं भरता है, संतोष नहीं होता।

दो० १३ मसि चढावसि = कालिख पोतती है। कापर = कपड़ा। माखी = मक्खी। बिलाइ = विलीन हो, नष्ट हो।

दो० १४ मसि = दुष्ट, बुरा। भुग्रा = मोहर। भँवाही = भ्रमते हैं। केसहि = केश में। उरेही = चित्रित, लिखित। मसि बिनु देही = बिना मिस्सी के दांत मुख में अच्छे नहीं लगते। मिस्सी = एक पदार्थ जिसके लगाने से दांत काले हो जाते हैं। पिंड = शरीर। बिसरिगा = विस्मृत हो गया।

दो० १५ पकज फेरी = कमलनयनी ने आँखें टेढ़ी कीं। बेसा = वेश्या। हरवा = हलका। फेरत नैन = इशारा करते ही। भइ फूटीं = कुटिनी को सूत्र फूटा।

दो० १६ छाला = फफोले। सोनवानी = स्वर्ण के वर्णवाली। बार = द्वार।

(७) युद्ध खंड

दोहा १ हियसालू = हृदय में सालनेवाला, खटकनेवाला। छर = छल। नेबरे = निबटे, पूरी हो। जोई = जोय, स्त्री। बिरिध = वृद्धा, बूढ़ी। बर = बल। कर बर छर = कल बल छल।

दो० २ खेरोरा = एक प्रकार की मिठाई। पैज = प्रतिज्ञा। वेस = वयस। वेवसाह = व्यवसाय, काम। हेरान = खो गया।

दो० ३ जोहन मोहन = देखते ही मोहनेवाला (मंत्र)। बरोठा = बैठक। सीवा = सीप से।

दो० ४ गीव तूरि = गला मरोड़ कर। कंत = पति। कुहुकि = कूक भरकर।

दो० ५ सुठि = अच्छी तरह। करमुखी = कलमुखी, जिसका मुख काला हो। आन (अन्य) = दूसरा। बैन = वचन, बकवाद, बक-बक।

दो० ६ खभारू = खभार, शोक। कस = कैसे। सँकेती = समेटकर। और सँकेती = उस हाथ से और वस्तु नहीं छुऊँगी जिस हाथ को एक बार समेट चुकी हूँ। ओहि दीठी = उस रतनसेन रूपी रत्न के स्पर्श से मेरा हाथ लाल हो गया है और मोती को हाथ में लेने से वह लाल गुंजा के सदृश हो जाता है पर आँखों के तिल की छाया पड़ने पर वह मोती जो हाथ के स्पर्श से लाल हो गया है काले दाग-वाला हो जाता है और गुंजा के समान दिखाई पड़ता है। पारे = सके। करवा = कड़ुवा। रूख = रूखा। सवाद = स्वाद।

दो० ७ रहसि = रहती है (तू)। कोंवरि = कोमल। बंस = वयस। पैनारी = पद्मनाल। तमोरा = ताम्बूल। सँभार = शृंगार। बार = देरी

दो० ८ उजार = उजाड़। माढी = मच, मचिया। जामी = लगी।

दो० ६ कोहाँइ = क्रोध करता है। छपान = छिपेगा। बिरासी = बिलासी। परासी = भागती है। बिरिध = वृद्धावस्था। बान = बाण। धनुक = टेढ़ी कमर।

दो० १० गेरा = घर, बस्ती, स्थान। थर = स्थल, स्थान। सेव = सेवा। पछितासि = पछताएगा। लोना = सुन्दर। कोप = कोपल।

दो० ११ रँग = भिखारी। राचा = आसक्त हुआ। बाटा = रास्ता। दिढ = दृढ। सोहाग = सौभाग्य। सँवरा = स्मरण किया। हेरा = ढूँढा।

दो० १२ रसोई = भोजन। भरे न हीया = जी नहीं भरता है, संतोष नहीं होता।

दो० १३ मसि चढावसि = कालिख पोतती हो। कापर = कपड़ा। मार्गी = मक्खी। बिलाइ = विलीन हो, नष्ट हो।

दो० १४ मसि = दुष्ट, बुरा। मुद्रा = मोहर। भँवाही = भ्रमते हैं। केसहि = केश में। बरेही = वलिखित। मसि बिनु देही = बिना मिस्सी के दांत मुख में अच्छे नहीं लगते। मिस्सी = एक पदार्थ जिसके लगाने से दांत काले हो जाते हैं। पिंड = शरीर। बिसरिगा = विस्मृत हो गया।

दो० १५ पकज फेरी = कमलनयनी ने भौंहे टेढ़ी कीं। बेसा = वेश्या। हरुवा = हल्का। फेरत नैन = इशारा करते ही। भट कूटीं = कुटिनी को खूब कूटा।

दो० १६ छाला = फफोले। सोनवानी = स्वर्ण के वर्णवाली। बार = द्वार।

दो० १७ पारथ = अर्जुन। बेहरा = फटा, विदीर्ण हुआ। मुकरावौं = मुक्त कराऊँ। गवनब = जायँगे।

दो० १८ पसीजे [प्रस्वेद] = दयार्द्र हुए। रुहिर = रुधिर। कोहाने = क्रोधित हुए। निग्रान = निदान, अंत में। पलानि = जीन। अंकूरू = अंकुर।

दो० १९ भुवारा = भुवाल, राजा। आंके = वचन बोले।

दो० २० मसि = अंधकार। जसोवै = यशोदा, जसोदा। पाया = पैर। बारा = पुत्र। जुझारा = युद्ध।

दो० २१ आदी = केवल, सिर्फ। सँकरे = संकीर्ण अवस्था में। ढार = ढाल। छोरों = छुड़ाऊँ।

दो० २२ गाज = गौला। फेंट = फेंटा, कमर में बँधा दुपट्टा।

दो० २३ पुरुष काछू = पुरुष का वचन लौट नहीं सकता, जिस प्रकार से हाथी का निकला दाँत भीतर नहीं पैठ सकता। पुरुष का वचन कछुए का गला नहीं है कि जो छन छन बाहर भीतर होता रहे।

दो० २४ करुवाने = कड़ुवाने। छर = छल। बर = बल। आंट = आंटे, पार पा सके।

दो० २५ सजोइल = सजाकर। ढारा = खड़े। ओल = जमानत। तुरी = तुरग, घोड़े।

दो० २६ सौंपना = हेरफेर, निरीक्षण। अगमना = आगे। अंकोरा = घूस, रिश्वत।

दो० २८ छूँछि = खाली। खाँडे = खड्ग। तीख = तेज।

दो० २९ गोइ लेइ जाउ = चौगान [पोलो] के खेल में बल्ले से गेंद निकाल ले जाना। गोइ = गेंद।

दो० ३० परति कारी = अंधकार होता जाता है।

दो० ३१ हाँका = ललकारा। सोहिल = एक तारा जिसे अगस्त कहते हैं। यह वर्षा के अंत में उगता है। दुग्गवै (दुर्ग) = किला, धुस्सा। जमकातर = यवनसमूह, राक्षस। मेड = बाँध। टेकों = रोकूँ। बेंडा = आड़ा, तीरछा, टेढ़ा।

दो० ३२ बान = बाण। बादी = दुश्मन, शत्रु। हरद्वानी = स्थान विशेष की बनी (तलवार)। उठौनी = धावा। स्यो = सहित। दस्तर = कवच। कूँड = टोप।

दो० ३३ दगमेल = हाथों हाथ की लड़ाई। भारत = युद्ध।

दो० ३४ ठटा = समूह। करवारु = करवाल, तलवार। लावा = लगाया। धूका = दुका, भुका।

दो० ३५ छेका = घेर लिया। साँग = एक प्रकार का छोटा भाला जो फेंककर मारा जाता है। निहाऊ = निहाई। सदूर = शार्दूल। बाजा = लड़ा। गाजा = गर्जा।

दो० ३६ झूरी = उदास। आरति = भेंट।

दो० ३७ परसि = छूकर। तुरय दाय = बादल के घोड़े के पैर सहलाये।

दो० ३८ मालू = दुःख। पेखा = देखा। नेवरै = निपटै।

दो० ३९ एकौका = अकेले, एकाएकी। भारा = भाला। मँझवार = रास्ते में।

दो० ४० साँटी = कोड़ा, छड़ी। नेगी = नेग पानेवाले।

दो० ४१ पटोरी = वस्त्र। छहरावों = छितराऊँ, दिखराऊँ।

दो० ४२ अगूता = आगे, सामने। चाहहि सूता = सोना चाहती हैं।

दो० ४३ सर = चिता। पोढ़ीं = लेटीं। सहगवन = सती। अखारा = सभा में। पिरथिमी = पृथ्वी, संसार। जौहर =

सती हो गई , जल गई । भए संग्राम = लड़ाई में मरे। चूरा = चूर्ण किया। भा इसलाम = मुसल्मानी राज्य हुआ।

दो० ४४ जोरी = जोड़ी। लेई = वह पदार्थ जिससे जोड़ा जाता है, लासा। भेई = भिगोई। हम्ह = मुझे। सँवरै = याद करेगा। दुइ बोल = दो बार, दो शब्द।

